॥ ✿ ॥ श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक सद्ग्रन्थका-सद्गुण महिमा वर्णन ॥ ✿ ॥

जड़ चेतनके भेद बतावे, तत्त्वयुक्त सद्ग्रन्थ यही ॥
पारख बोध विवेक करावे, भिन्न भिन्न सो भेद कही ॥टेक॥
प्रथम जगत्‌का स्वरूप बताकर, सब मतके सिद्धान्त कहो ॥
निर्णय सार असार लखाकर, पारख ज्ञानहि श्रेष्ठ रही ॥ १ ॥
तत्त्व विवर्ण द्वितीय कहा है, न्यारा न्यारा भेद वही ॥
मेल कार्य आकार शक्ति गुण, धर्म क्रियादि समस्त सही ॥ २ ॥
त्रिगुण विवर्ण तृतीय बताया, तीनोंगुणके भेद कही ॥
त्रिगुण अङ्ग सबहीं परखाकर, सद्गुण धारण मुक्त वही ॥ ३ ॥
चेतन जीवके गुण लक्षणको, चतुर्थभाग विस्तार कही ॥
आकार शक्ति गुण सम्बन्ध अमरता, बास क्रिया सुख दुःख कही ॥ ४ ॥
पञ्चम इन्द्रिय नाड़ी वर्णन, इन्द्रियन भेद बताय वही ॥
तीन नाड़ी औ पञ्च वायु सो, पिण्ड ब्रह्माण्डबिलगाय कही ॥ ५ ॥
स्थूल देहके विवरण षष्ठम, प्रकृतिमिलाप इत्यादि वही ॥
अष्टभाग पाताल द्वार पुनि, बीजमन्त्र, षोड़श भेद कही ॥ ६ ॥
सूक्ष्मदेहके विवरण सप्तम, प्रकृति मिलाप दरशाय वही ॥
अष्ट भाग पुनि देव चतुर्दश, पञ्चविषय विवर्ण कही ॥ ७ ॥
अष्टम कारण औ महाकारण, कैवल्य देह विवर्ण वही ॥
तीन देह लक्षण बतलाकर, एकईस ब्रह्माण्ड तहाँहि कही ॥ ८ ॥
चार देह नवकोश वेदादिक, माया प्रकृति नवम वही ॥
अनेक अङ्गहिं वाणि जाल है, सो विस्तार लखाय कही ॥ ९ ॥
दशम भागमें पञ्च देहके, भेद बताय विवर्ण भई ॥
पञ्च भूमिकागत फल वर्णन, त्रिगुण ताहिं विभिन्न कही ॥ १० ॥
एकादशमें शुद्ध रहनि है, जीवन्मुक्त स्थिति ताहिं वही ॥
गुरु कबीरके सत्यन्यायसे, पारख बोध सिद्धान्त कही ॥ ११ ॥
यहि विधि लिखि सद्ग्रन्थ बना सो, पारखि काशी साहेब वही ॥
रामस्वरूपदास पद बन्दौं, पारख पाये मुक्त कही ॥ १२ ॥

॥ ✿ ॥ इति सद्ग्रन्थका—सद्गुण महिमा वर्णन समाप्तः ॥ ✿ ॥

॥ ❀ ॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥ ❀ ॥

॥ * ॥ तृतीय संस्करणकी—प्रस्तावना ॥ * ॥

साखीः— नमो नमो सद्गुरु प्रभु ! साहेब कबीर शिरमौर ॥
पारखबोध लखाय करि । जीवन बन्दीछोर ॥१॥
डोलत हते अनादिसे । सुखाध्यास वश जीव ॥
गुरु कबीर परखायके । पारख पदमें कीव ॥२॥
उपकार सद्गुरु अमित हैं । जाने सन्त सुजान ॥
दुःख मिटायो जन्मृति । स्वयं स्वरूप ठहरान ॥३॥
सर्वोपरि पारखि गुरु । गुरुकी दया पहिचान ॥
खानि-वाणिकी जालते । पार कियो गुरु ज्ञान ॥४॥
पूरण साहेब सद्गुरु । बन्दौं बारम्बार ॥
तव अनुयायी पारखी । सन्त सकल विस्तार ॥५॥
साहेब हंस सन्तोष नरु । बन्दौं ज्ञान निधान ॥
काशी साहेब पारखी । नमो बोध सत ज्ञान ॥६॥
निर्णय करि मत सबनके । सारासार विचार ॥
भेद लखाये सद्गुरु । बीजकके आधार ॥७॥
जड़ चेतन बिलगायके । गुण लक्षण कहि दीन्ह ॥
तत्त्वयुक्त सद्ग्रन्थमें । रामस्वरूप सो चीन्ह ॥८॥
पढ़ै गुनै समुझै सुनै । करि विचार दृढ़ बोध ॥
रामस्वरूप संशय नशै । सतसङ्गतमें शोध ॥९॥
सहज मिला गुरुज्ञान यह । राखो जतन सुधीर ॥
रामस्वरूपदास तब । मिटिहैं सकलो पीर ॥१०॥

जिज्ञासुजनो !

देहधारी अनन्त चैतन्यजीव और साकार चार जड़तत्त्व तथा निराकार आकाश, इनका विस्ताररूप ब्रह्माण्ड जिसे विश्व या संसार कहते हैं, सो अनादि कालसे स्वतः है। जड़ और चैतन्यका असली स्वरूप अखण्ड, नित्य, सत्य है। जिसका तीन कालमें कभी नाश होता नहीं, उसे स्वतः अविनाशी कहते हैं। परन्तु, कार्यका लयरूप नाश तो अनादि कालसे प्रवाहरूपसे होता ही चला आ रहा है। जीवका स्वरूप तो कार्य–कारणसे परे एकरस-चैतन्यमात्र ही है। किन्तु, स्वरूपके भूलवश जड़ाध्यासी होनेसे जीव सब कर्मानुसार आवागमनके चक्रमें पड़े हुए हैं। परन्तु, अध्यासको पकड़ने और छोड़नेमें जीव समर्थ है। जड़ने जीवको नहीं पकड़ा है, किन्तु, जीवने ही सुखासक्तिसे जड़ पञ्च विषयोंको पकड़के बद्ध हो रहा है। यदि पारखदृष्टिसे देखके कोई उस अध्यासको मिटा देंगे, तो जीते ही निर्बन्ध जीवन्मुक्त हो जायेंगे, फिर वे सदाके लिये आवागमनसे रहित हो जावेंगे। इसी बातका विस्तार भेद अच्छी तरहसे इस "तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थ" में दरशाया गया है। अस्तु!॥

इस ग्रन्थका तृतीय संस्करण छपाके प्रकाशित करनेका कार्यभार भी अबकी बार हमारे ऊपर ही आ पड़ा। यद्यपि प्रवृत्तिके कार्यके तरफसे चित्त उपराम होता ही जा रहा था, तथापि सद्ग्रन्थ प्रकाशित कर देनेसे सन्तोंकी सेवा और भक्तोंको हित होगा, सो यह भी परमार्थका एक अङ्ग ही है, ऐसा देखके,और सन्त वर्गः तथा प्रेमी सेवकोंकी विनयपूर्वक आग्रह होनेसे इस वर्ष प्रारब्ध वेगसे हमको ग्रन्थ छपाईके लिये काशीमें आना पड़ा। यहाँ पर निवास-स्थान आदिके यथोचित प्रबन्ध नेपाली नेमी-प्रेमी सन्त और सेवकोंकी तरफ-से हुआ। और तीन-चार साल पहलेसे ग्रन्थ छपाईके निमित्त शान्ति-साहेबजीने जो द्रव्य हमको दिया था, उसीसे व्यक्तिगत रूपसे यह ग्रन्थ इस बार छपाया गया है॥

पहले छपी "तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थ" में जो बहुत-सी बातें नहीं थीं, सो इस बार अन्यत्र ग्रन्थोंसे चुनाव करके उन्हें संग्रह करके टिप्पणीरूपसे इस ग्रन्थके साथमें जहाँ जो बात आवश्यक थी, वहाँ उसे रख दिया गया है। अतः प्रथमकी अपेक्षासे अबकी बार ग्रन्थकी वृद्धि हो गई है। पाठकोंको ज्ञातव्य बहुत-सी बातें इस ग्रन्थमें एकत्र मिलेंगी। टिप्पणीमें कई बातोंका नाम संज्ञामात्र ही दिया गया है। उसे सत्सङ्ग-विचार तथा सद्ग्रन्थोंके अध्ययनसे भलीभाँति समझ सकेंगे। जिज्ञासुओंको पूर्ण रीतिसे समाधान तो पारखी सन्तोंकी सत्सङ्ग द्वारा निष्पक्ष-निर्णयसे ही हो सकेगी। उसके अनुपलब्धिमें सद्ग्रन्थोंके पठन-मनन किया जाता है, जिससे सत्सङ्गमें चलनेवाले विषय-प्रकरण समझनेमें विशेष सहायता मिलती है। अतः सद्ग्रन्थको विचारपूर्वक पढ़ते रहना चाहिये ॥

छपाईमें कितना ही सावधानी रखा जाय, तो भी दृषि-दोष तथा यन्त्रादिकें दोषोंसे अक्षर-मात्रादिकी कुछ त्रुटि और कुछ अदल-बदल हो ही जाती है। इसलिये पाठकगणको इस ग्रन्थमें मुद्रण सम्बन्धी जो कुछ त्रुटियाँ दृष्टिगोचर हों, उसे यथा-योग्य सुधारकर पढ़नेका कष्ट उठावें। और सत्यसार पारखबोधको ग्रहणकर अमूल्य नरजीवनका लाभ लेकर अपना हित कर लेवें ॥

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेकग्रन्थका-तृतीय संस्करणकी प्रस्तावना समाप्तः ॥ ❀ ॥

हाल निवास—
महमूरगञ्ज, काशी ॥
दि० ११-४-१९५४ ई०

पारखी सन्त सद्गुरुका अनुचरः—
—रामस्वरूपदास।

॥ ❀ ॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥ ❀ ॥

॥❀॥ द्वितीयावृत्तिकी-प्रस्तावना ॥❀॥

पारख सत्य सिद्धान्त प्रकाशक, सर्व ज्ञानियोंमें शिरमौर आदिगुरु सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब आद्याऽचार्य्य कबीरपन्थ संस्थापक हो गये। आपके महान् दयादृष्टिसे ही पारखबोध संसारमें प्रकाशित हुआ। तभीसे परम्परागत गुरुपद पारखबोध पारखी सत्यन्यायी सन्त-महात्माओंके द्वारा प्रचार होता चला आरहा है ॥

उक्त पारख सिद्धान्तको सद्ग्रन्थ बीजककी सत्य निर्णय टीका तथा सत्योपदेश द्वारा साधु समाजोंमें तथा जगत्में विस्तार करनेवाले परम पूज्यपाद प्रथमाऽचार्य्य 'सद्गुरु श्रीपूरणसाहेबजी' हुए हैं ॥

उपरोक्त सत्य सिद्धान्तको विशेषरूपसे प्रचार करनेवाले "बुरहानपुर, नागझिरी शुभस्थानके परम्परागत छठवें आचार्य्य श्रीकाशीसाहेबजी" हुए। आप दृढ़ वैराग्यवान् पारखनिष्ठ विलक्षण शोध-बोध वाले हो गये ॥

आपने कई सद्ग्रन्थ बनाय दिये हैं। उसमेंसे यह प्रस्तुत ग्रन्थ "तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक" एक है। और "निर्पक्ष सत्यज्ञान दर्शन" "सत्यज्ञान बोध-नाटक" 'जड़चेतन भेद प्रकाश', आदि अन्य ग्रन्थ भी छप करके प्रकाशित हो चुके हैं ॥

प्रथम "पारखबोध" नामसे यह ग्रन्थ बुरहानपुरके स्वदेशमित्र-प्रेसमें वि० सं० १९६३ में छपाया गया था। तत्पश्चात् ग्रन्थकर्ताने ही पुनः यथावश्यकीय संशोधन करके त्रुटियोंको सुधार कर "तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक" ऐसा नाम परिवर्तन कर वर्तमान नामसे यह ग्रन्थ प्रख्यात किये। बादमें आचार्य्य श्रीछोटेबालकसाहेबजीने वि० सं० १९८३ में बम्बई 'श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस', में इसे स्वतन्त्र छपा करके प्रकाश किये ॥

सो इस ग्रन्थमें ग्रन्थ कर्ताने जगत्के समस्त मत, पन्थों और ग्रन्थोंके सार सिद्धान्तोंकी सन्धि निकालकर इस ग्रन्थमें एकत्र संग्रह करके उसके निर्णय करके सत्यासत्यका यथार्थ विवेक दरशाया है ॥

और जड़ तत्त्वोंके तथा चैतन्य जीवोंके १. सम्बन्ध या तत्त्वमेल, २. आकार, ३. गुण, ४. धर्म, ५. शक्तियाँ, और ६. क्रियाएँ आदि ऐसे षट् भेदोंका भिन्न-भिन्न एक-एक करके निर्णय किये हैं। और पाँचों देहोंके विस्तार, नौकोश वाणी—माया जालादियोंके कसर भी संक्षिप्तरूपसे दिखाये हैं। तथा अन्तिममें हंस गुण-लक्षण, जीवन्मुक्त स्थिति, सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके सार सिद्धान्त स्पष्ट करके दरशाये हैं। सोई यह ग्रन्थ अब इसरूपमें विद्यमान है ॥

एवं अबकी बार आवश्यकीय जगहोंमें टिप्पणियाँ भी कुछ रखकर उचित संशोधन-सम्प्रवर्धन भी हमने इसमें कर दिया है। इसको जिज्ञासु जन विचार पूर्वक पठन-पाठन करके सत्य बोध प्राप्त करें, जीवन सुधार करनेका प्रयत्न करें, ग्रन्थ पढ़के यही लाभ उठावें ॥

प्रूफ आदि शोधनेमें तो अपने तरफसे कोई कसर नहीं रखा गया है। तथापि कम्पोजिटर तथा प्रेस-वालोंकी लापरवाही या गल्तियोंसे जो कुछ भी छपाई-मात्राओंमें अक्षरादियोंमें त्रुटियाँ या अशुद्धियाँ रह गई हों, उसको पाठकगण कृपया सुधारकर पढ़नेका कष्ट उठावेंगे। सारपद ग्रहण करेंगे ॥

॥ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेकका—द्वितीयावृत्तिकी प्रस्तावना समाप्तः ॥ ॥

मानिकपुरा, देहली ॥
ता० १२।१२।१९४६ ई०

पारखी सन्तोंका अनुचरः—
—रामस्वरूपदास।

|| ❋ || श्रीसद्गुरवे नमः || ❋ ||

|| ❋ || प्रथमावृत्तिकी--भूमिका || ❋ ||

जगत्में निज चैतन्य स्वरूपका सत्य निर्णय करनेके लिये पाँच तत्त्वोंका विवरण, पाँच कोशोंका बोध और पिण्ड—ब्रह्माण्ड कलाओंके सूक्ष्म विचार दर्शित बहुत ही ग्रन्थ बने हैं। बड़े-बड़े महात्मा तत्त्ववेत्ता पुरुषोंने अपने-अपने बुद्धि अनुसार वेद, शास्त्रों, पञ्चदशी, पञ्चीकरण, गीता, भागवत, सूत्र, स्मृति आदि ग्रन्थ भी बहुतसे बनाय रखे हैं। परन्तु, सबोंका सार सिद्धान्त एक मायाधीश ईश्वर, और शुद्धस्वरूप, माया रहित परमतत्त्व परमात्मा रहके वे दोनों जड-चेतनमें वा चराचरमें ओत-प्रोत-अन्तर-बाहरसे परिपूर्ण व्यापक, या घनवत् असन्धिरूप सर्वत्र भरे हैं, ऐसा ठहराया है। इसीसे जड़-चैतन्यका एकत्र मिलाप ही माना गया। कुछ न्यारे-न्यारे पाँच तत्त्वोंके भाग अलग छाँटकर चेतनजीवोंको न्यारा नहीं किया है। उसीका निर्णय इसी छोटेसे ग्रन्थमें सुलभ बोधसे दरशाया गया है। यही सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबका सिद्धान्त और ग्रन्थ रचनेका हेतु है ॥

इसीमें सद्गुरु और सन्तोंकी कृपा, थोड़ासा अपना अनुभव और बहुतसे ग्रन्थोंका रहस्य लिया गया है। सन्त-महात्मा हंसवत् सत्य निर्णय करके सारपदको ग्रहण करेंगे और कहीं भूल चूक रही होवे, तो उसको सुधारके पढ़नेका कष्ट करेंगे ॥

लेखकः—

काशीदास, एक कबीरपन्थी साधु ॥

॥ ❀ ॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥ ❀ ॥

॥ * ॥ अथ तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थका— ॥ * ॥

॥ * ॥ विषयानुक्रमणिका वर्णन प्रारम्भः ॥ * ॥

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
	तृतीय संस्करणकी—प्रस्तावना	४
	द्वितीयावृत्तिकी—प्रस्तावना	७
	प्रथमावृत्तिकी-भूमिका	९
	विषयानुक्रमणिका वर्णन	१०
१	आदि सद्गुरुस्तुति— पारख प्रकाश कबीर गुरु ...	१
	॥ * ॥ अथ प्रथम प्रकरण प्रारम्भः ॥ १ ॥ * ॥	
	॥ ❀ ॥ जगत्का स्वरूप वर्णन ॥ ❀ ॥	
२	जगत्की स्थितिका यथार्थ बोध ॥ १ ॥ ...	३
१.	वेदान्त शास्त्रमें	३
२.	सांख्य शास्त्रमें	,,
३.	वैशेषिक और न्याय शास्त्रोंमें	,,
४.	योग शास्त्रमें	,,
५.	जैनमतमें	,,
६.	सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब	४
७.	किसी नास्तिक मतमें	,,
८.	अंग्रेज लोगोंके बाइबिल ग्रन्थमें ...	,,
९	पुराणादि ग्रन्थोंमें	,,
१.	अन्यमतवाले एक निराकार	६
२.	कहीं तत्त्वोंके सूक्ष्म-सूक्ष्म	७
३.	कहीं शुद्ध चेतन मुक्तरूप	,,
४.	कहीं शुद्ध चेतनकर्ता पुरुषने	,,

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
५.	कहीं शुद्धरूप परा-प्रकृतिको	७
६.	कहीं जड़ वायु तत्त्वको ही	,,
७.	कहीं एक अखण्ड चेतन कर्तासे ...	,,
८.	कहीं जड़ मनके संयोगसे	८
९.	कहीं अनन्त चेतन जीव	,,

॥ ❀ ॥ इति प्रथम प्रकरण समाप्तम् ॥ १ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ द्वितीय प्रकरण प्रारम्भः ॥ २ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ तत्त्व विवरण ॥ ❀ ॥

संख्या	विषय	पृष्ठाङ्क
३	अनादि पाँच तत्त्वोंके नाम ॥ १ ॥	१०
४	अनादि पाँच तत्त्वोंके आकार ॥ २ ॥ ...	१०
१.	आकाशतत्त्व	१०
२.	पृथ्वीतत्त्व	११
३.	जलतत्त्व	,,
४.	वायुतत्त्व	,,
५.	तेजतत्त्व	,,
५	त्रसरेणु, अणु, परमाणुओंका वर्णन ॥ ३ ॥ ...	१२
	टिप्पणीमें त्रसरेणु आदिके खुलासा वर्णन ...	१२
६	अनादि चार तत्त्वोंके कार्य ॥ ४ ॥	१३
१.	पृथ्वी तत्त्वके कार्य	१३
२.	जलतत्त्वके कार्य	,,
३.	तेजतत्त्वके कार्य	१४
४.	वायुतत्त्वके कार्य	,,
५.	सूर्यके कार्य	१५
६.	चन्द्रके कार्य	,,

अनादि तत्त्वोंका मिलापरूप संयोगसम्बन्ध वर्णन ।

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
७	पृथ्वीतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ५ ॥ ...	१५
	टिप्पणीमें खुलासा वर्णन	१६
८	जलतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ६ ॥ ...	१७
९	तेजतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ७ ॥ ...	१८
१०	वायुतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ८ ॥ ...	२०
११	अनादि चार तत्त्वोंके धर्म ॥ ९ ॥	२१
१२	अनादि चार तत्त्वोंके गुण ॥ १० ॥ ...	२२
१३	अनादि चार तत्त्वोंके आवाज ॥ ११ ॥ ...	२२
१४	अनादि पृथ्वीतत्त्वके गन्धके भेद ॥ १२ ॥ ...	२३
१५	अनादि जलतत्त्वके रसके भेद ॥ १३ ॥ ...	२४
१६	अनादि तेजतत्त्वके रूपके भेद ॥ १४ ॥ ...	२४
१७	अनादि वायुतत्त्वके स्पर्शके भेद ॥ १५ ॥ ...	२४
१८	अनादि चार तत्त्वोंके रङ्ग ॥ १६ ॥ ...	२५
१९	अनादि चार तत्त्वोंकी शक्तियाँ ॥ १७ ॥ ...	२६
२०	अनादि चार तत्त्वोंकी क्रियाएँ ॥ १८ ॥ ...	२८
२१	अनादि चार तत्त्वोंकी कलाएँ ॥ १९ ॥ ...	२९
२२	अनादि तत्त्वोंका देहमें मुख्यस्थान ॥ २० ॥ ...	३०
	दोहा–पृथ्वी कलेजा बास है	३०
	दोहा–जलके बासा भाल है ...	३१
	,, पित्तेमें पावक रहै	३१
	,, पवन नाभिमें रहत है	३२
२३	अनादि तत्त्वोंका परस्पर वैर ॥ २१ ॥ ...	३२
२४	पाँच तत्त्वोंकी उत्पत्ति क्यों मानी गई ? ॥ २२ ॥ ...	३४
२५	पाँच जड़ तत्त्वोंको ईश्वर मानना ॥ २३ ॥ ...	३८

॥ ❀ ॥ इति द्वितीय प्रकरण समाप्तम् ॥ २ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ तृतीय प्रकरण प्रारम्भः ॥ ३ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ त्रिगुण विवरण ॥ ❀ ॥

संख्या ।	विषय ।			पृष्ठाङ्क ।
२६	क्रियारूप तीनों गुण वर्णन ॥ १ ॥		...	४१
१.	रज, सत्त्व और तम—	...	...	४१
२.	मुख्य पृथ्वी और जल	...	...	"
३.	स्थिर पवनसे पिण्डकी	...	...	"
४.	मनुष्यादि चेतन जीवोंकी	...	...	४२
५.	रजोगुण-कर्ममार्ग है	...	...	"
६.	सत्त्वगुण सर्व ज्ञान प्राप्तिके	...	...	"
७.	तमोगुण सर्व उन्मत्त	...	...	"
८.	पूर्वोक्त रज, सत्त्व और तम	...	...	४३
९.	सर्व जड़ तत्त्वोंके	...	....	"
१०.	त्रिगुणी मायाके मुख्य गुरु	...	...	"
१.	दैहिक ताप	...	...	४४
२.	दैविक ताप	...	...	"
३.	भौतिक ताप	...	...	"

॥ ❀ ॥ इति तृतीय प्रकरण समाप्तम् ॥ ३ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ चतुर्थ प्रकरण प्रारम्भः ॥ ४ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ चेतनजीवोंके गुण लक्षण वर्णन ॥ ❀ ॥

संख्या	विषय			पृष्ठाङ्क
२७	चेतनजीवोंकी देहयुक्त उत्पति और अमरता कथन ॥ १ ॥			४५
२८	चेतनजीवोंके आकार ॥ २ ॥	...	...	४८
२९	चेतनजीवोंका देह सम्बन्ध ॥ ३ ॥		...	४८
३०	चेतनजीवोंमें धर्म वा गुण ॥ ४ ॥	...	...	४९
३१	चेतनजीवोंमें शक्तियाँ ॥ ५ ॥	...	...	५०
३२	चेतनजीवोंमें क्रियाएँ ॥ ६ ॥	...	...	५१
	जीवोंमें सुख-दुःख ॥ ७ ॥	...	...	५१

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
३४	चेतनजीवोंका देहोंमें बास ॥ ८ ॥ ...	५२
३५	चेतनजीवोंके जीव, चेतन, साक्षी, परमहंस वा पारखी सन्त, ऐसे नाम धरनेमें कारण वर्णन ॥ ९ ॥ ...	५३

॥ ❀ ॥ इति चतुर्थ प्रकरण समाप्तम् ॥ ४ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ पञ्चम प्रकरण प्रारम्भः ॥ ५ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ इन्द्रियाँ-नाड़ियाँदि वर्णन ॥ ❀ ॥

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
३६	पञ्चतत्त्वोंकी दश इन्द्रियाँ ॥ १ ॥ ...	५६
३७	दशइन्द्रियोंमें पाँच राजा और पाँच सेवक ॥ २ ॥	५६
३८	देहमें ब्रह्माण्डकी कला तीन नाड़ियाँ ॥ ३ ॥ ...	५७
३९	देहमें पिण्डकी कला तीन नाड़ियाँ ॥ ४ ॥ ...	५८
४०	देहमें ब्रह्माण्डकी कला पञ्चवायु ॥ ५ ॥ ...	५९
४१	ब्रह्माण्डके पञ्चवायुओंको देवता मानना आदि वर्णन ॥ ६ ॥	५९
४२	देहमें पिण्डकी कला पञ्च वायु ॥ ७ ॥ ...	६०
४३	पिण्डके उक्त पञ्च वायुओंके कर्म ॥ ८ ॥ ...	६१

॥ ❀ ॥ इति पञ्चम प्रकरण समाप्तम् ॥ ५ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ षष्ठ प्रकरण प्रारम्भः ॥ ६ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ स्थूल देह विवरण ॥ ❀ ॥

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
४४	पञ्च तत्त्वोंकी २५ प्रकृतियोंकी स्थूलदेह वर्णन ॥ १ ॥	६२
	स्थूलदेहकी २५ प्रकृतियोंका मिलापरूप पञ्चीकरण ॥ २ ॥	
४५	आकाशतत्त्वरूप समानवायुकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप	६३
४६	चञ्चलवायुतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ३ ॥	६४
४७	तेजतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ४ ॥	६४
४८	जलतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ५ ॥	६५
४९	पृथ्वीतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ६ ॥	६६

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
५०	स्थूलदेहकी २५ प्रकृतियोंमें पञ्च देवताओंका बासाका कोष्ठक ॥ ७ ॥	६७
५१	स्थूलदेहमें दूसरे अष्ट भाग ॥ ८ ॥ ...	६८
५२	स्थूलदेहमें दश द्वार ॥ ९ ॥	६९
५३	स्थूलदेहमें सप्तपाताल और देवताओंका बासा ॥ १० ॥	७०
५४	स्थूलदेहमें सातचक्र, सात स्वर्ग, उनके स्थान, देवता, जाप, और अक्षरोंकी उत्पत्तिका कथन ॥ ११ ॥	७१
५५	सप्त बीजमन्त्रोंका वर्णन ॥ १२ ॥ ...	७३
५६	सप्त बीजमन्त्रोंका विवरण ॥ १३ ॥ ...	७४
	टिप्पणीमें खुलासा वर्णन	७५
५७	सप्त धातुओंके स्थूल देह ॥ १४ ॥ ...	७८
५८	स्थूलदेहमें १६ प्रकारसे मानना ॥ १५ ॥ ...	७९
	१. तीन तरहके देह भावना	७९
	२. नाता माता-पितादि	८०
	३. छः प्रकारकी स्त्रियाँ और छः प्रकारके पुरुषोंका जाति स्वभाव	८०
	४. वर्ण । ५. धर्म । ६. जातियाँ । ७. नाम । ८. आश्रम । ९. भेष । १०. षट् विकार	८०
	११. रङ्ग । १२. गढ़न । १३. देहभेद । १४. सुरूप और कुरूप । १५. षट् पशु धर्म । १६. षट् ऊर्मियाँ ...	८१
५९	स्थूल देहमें नाद-बिन्दुको भगवान् मानना ॥ १६ ॥	८१
	टिप्पणी—"भग" शब्दका अर्थ	८२

॥ * ॥ इति षष्ठ प्रकरण समाप्तम् ॥ ६ ॥ * ॥

॥ * ॥ अथ सप्तम प्रकरण प्रारम्भः ॥ ७ ॥ * ॥

॥ ❀ ॥ सूक्ष्मदेह विवरण ॥ ❀ ॥

६०	पञ्चतत्त्वोंकी २५ प्रकृतियोंकी सूक्ष्मदेह वायुकला ॥ १ ॥	८४

संख्या।	विषय।	पृष्ठाङ्क।
६१	सूक्ष्मदेहकी २५ प्रकृतियोंका मिलापरूप पञ्चीकरण ॥ २ ॥	८५
६२	आकाशतत्त्वरूप समानवायुकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ३ ॥	८५
६३	चञ्चल वायुतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ४ ॥ ...	८६
६४	तेजतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ५ ॥ ...	८६
६५	जलतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ६ ॥ ..	८७
६६	पृथ्वीतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ७ ॥ ...	८७
६७	सूक्ष्मदेहकी २५ प्रकृतियोंमें ५ देवताओंका बासाका कोष्ठक ॥ ८ ॥	८८
६८	कोष्ठकका स्पष्टीकरण विवरण	८९
६९	सूक्ष्मदेहमें दूसरे अष्ट भाग ॥ ९ ॥ ...	९०
७०	सूक्ष्मदेहमें १४ देवता वायुरूप वर्णन ॥ १० ॥ ...	९१
७१	सूक्ष्मदेहमें पञ्चविषय विवरण ॥ ११ ॥ ...	९१
७२	सूक्ष्मदेहमें अन्तःकरण पञ्चक विवरण ॥ १२ ॥ ...	९५
	॥ ❀ ॥ इति सप्तम प्रकरण समाप्तम् ॥ ७ ॥ ❀ ॥	
	॥ ❀ ॥ अथ अष्टम प्रकरण प्रारम्भः ॥ ८ ॥ ❀ ॥	
	॥ ❀ ॥ कारण, महाकारण, कैवल्यदेह विवरण ॥ ❀ ॥	
७३	कारण देह वर्णन ॥ १ ॥	९९
७४	कारणदेहमें मुख्य अष्ट भाग ॥ २ ॥ ...	१००
७५	महाकारण देह वर्णन ॥ ३ ॥	१०३
७६	महाकारण देहके मुख्य अष्ट भाग ॥ ४ ॥ ...	१०४
७७	एकईस ब्रह्माण्डोंका वर्णन ॥ ५ ॥	१०६
७८	कैवल्यदेह वर्णन ॥ ६ ॥	१०६
७९	कैवल्यदेहमें मुख्य अष्ट भाग ॥ ७ ॥ ...	१०८
	॥ ❀ ॥ इति अष्टम प्रकरण समाप्तम् ॥ ८ ॥ ❀ ॥	
	॥ ❀ ॥ अथ नवम प्रकरण प्रारम्भः ॥ ९ ॥ ❀ ॥	
८०	नवकोश, चारोंदेह, वेद, शास्त्रादि वाणीजाल	

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
	और माया प्रकृतिके अनेक अङ्ग आदि वर्णन ॥ १ ॥	१०९
८१	पञ्चकोश विवरण ॥ २ ॥	१०९
८२	पञ्चकोशोंमें और दूसरे चार कोश वर्णन ॥ ३ ॥ ...	१११
८३	चारोंदेहोंके चार-चार भागोंका कोष्ठक दिग्दर्शन ॥ ४ ॥	११३
८४	मुसलमानोंमें हिन्दुवत् चार-चार भाग मानना ॥ ५ ॥	११४
८५	हिन्दू और मुसलमान दोनोंके विरुद्ध पक्ष ॥ ६ ॥	११६
८६	चारों वेदोंका वर्णन ॥ ७ ॥	११६
८७	श्रुति, स्मृति, शास्त्र, पुराणादि वाणीजाल वर्णन ॥ ८ ॥	११९
	टिप्पणीमें १०८ उपनिषदोंके नाम वर्णन	११९
	टिप्पणीमें मुख्य-मुख्य १९ स्मृतियोंके नाम	१२१
८८	चार उपवेद वर्णन	१२२
८९	वेदोंके षट् अङ्ग	१२३
	टिप्पणीमें षट् अङ्गोंका खुलासा वर्णन ...	१२४ से १२९
	षट्शास्त्रोंका टिप्पणीमें खुलासा वर्णन ...	१३०
९०	चौदह विद्याएँ और १८ पुराणोंका नाम ...	१३६
९१	मायाप्रकृतिके दो-दो अङ्ग वर्णन ॥ ९ ॥ ...	१३७
	टिप्पणी वर्णन (१ से ४३ तक) ...	१३८ से १३९
९२	मायाप्रकृतिके तीन-तीन अङ्ग वर्णन ॥ १० ॥ ...	१३९
	टिप्पणी वर्णन (१ से ४७ तक)	१४१ से १४२
९३	मायाप्रकृतिके चार-चार अङ्ग वर्णन ॥ ११ ॥ ...	१४५
	टिप्पणी वर्णन (१ से ३४ तक)	१४७ से १५०
९४	मायाप्रकृतिके पाँच-पाँच अङ्ग वर्णन ॥ १२ ॥ ...	१५१
	टिप्पणी वर्णन (१ से ३४ तक)	१५२ से १५४
९५	मायाप्रकृतिके षट्-षट् अङ्ग वर्णन ॥ १३ ॥ ...	१५६
	टिप्पणी वर्णन (१ से ३१ तक)	१५८ से १६१
९६	मायाप्रकृतिके सात-सात अङ्ग वर्णन ॥ १४ ॥ ...	१६१

संख्या।	विषय।	पृष्ठाङ्क।
	टिप्पणी वर्णन (१ से ३० और १ से १४ तक) ...	१६१ से १६८
९७	मायाप्रकृतिके अष्ट-अष्ट अङ्ग वर्णन ॥ १५ ॥ ...	१६८
	टिप्पणी वर्णन (१ से १९ तक)	१७१ से १७३
९८	मायाप्रकृतिके नव-नव अङ्ग वर्णन ॥ १६ ॥ ...	१७३
	टिप्पणी वर्णन (१ से १२ तक)	१७५ से १७७
९९	मायाप्रकृतिके दश-दश अङ्ग वर्णन ॥ १७ ॥ ...	१७७
	टिप्पणी वर्णन (१ से १२ तक)	१७८ से १७९
१००	माया प्रकृतिके ११। १२। १३। १४। १५ इत्यादि अनेक अङ्ग वर्णन ॥ १८ ॥	१७९
	टिप्पणी वर्णनः—	
	एकादश अङ्ग वर्णन (१ से ५ तक) ...	१७९ से १८०
	द्वादश अङ्ग वर्णन (१ से १४ तक) ...	१८१ से १८३
	कपूरके १३ प्रकार कहा है	१८२
	चतुर्दश अङ्ग वर्णन (१ से ६ तक) ...	१८४ से १८५
	मायाके १५ नाम	१८६
	षोड़श अङ्ग वर्णन (१ से ६ तक) ...	१८६ से १८७
	अष्टादश अङ्ग वर्णन (१ से ५ तक) ...	१८७ से १८८
	१९ भाग। २० भाग। २१ ब्रह्माण्ड वर्णन ...	१८८
	चौबीस अङ्ग वर्णन (१ से ४ तक) ...	१८९
	पचीस अङ्ग वर्णन (१ से ३ तक) ...	१८९
	२७ नक्षत्रोंके नाम। २८ नक्षत्राधिपति ...	१८९ से १९०
	२८ नरक। २८ उपपुराण	१९०
	बत्तीस विद्याएँ। अस्त्र-शस्त्रोंके ३२ नाम ...	१९० से १९१
	चौंतीस अक्षर वा ५२ वर्ण	१९१
	छः रागोंकी छत्तीस रागिनियाँ	१९१ से १९२
	मुख्य-मुख्य ३६ नाताएँ	१९२

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
	उनचास वायुओंके नाम	१९२
	मन्त्रके उनचास दोष	१९३
	प्राचीन ५० क्रीड़ाओंके नाम ...	१९३
	रागिनियोंके ६१ नाम	१९४
	(१) मुख्य-मुख्य ६४ कलाओंका नाम ...	१९४
	(२) दूसरे प्रकारसे ६४ कलाएँ	१९५ से १९७
	चौंसठ योगिनियोंके नाम	१९७
	६६ पेटके आसनोंका वर्णन	१९७ से १९८
	शरीरकी बहत्तर ग्रन्थियाँ	१९८
	भोगके चौरासी आसन और योगके— ८४ आसनोंके नाम	१९९ से २००
	नाथ सम्प्रदायके ८४ सिद्धोंके नाम ...	२०० से २०१
	पुराणोंमें दक्षकी ८४ पुत्री माना है ...	२०१
	दूसरे प्रकारसे ९६ पाखण्ड वर्णन ...	२०२
	३६० अस्थियाँ तथा ६०० नाड़ियाँ	२०३
	सहस्र नाम; छः लाख छियानबे सहस्र रमैनी	२०३
	चौरासी लक्ष योनि	२०३
	साढ़े तीन करोड़ रोम	२०४
	तैंतीस कोटि देवता तथा छप्पन कोटि यादव	२०५
	मुख्य-मुख्य विभिन्न सम्वतोंकी तालिका ...	२०६
	चौदह अरब ज्ञान	२०७

॥ ❀ ॥ इति नवम प्रकरण समाप्तम् ॥ ९ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ दशम प्रकरण प्रारम्भः ॥ १० ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ पञ्चदेह अष्ट प्रकृतिसहित विवरण ॥ १ ॥ ❀ ॥

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
१०१	पञ्चतत्त्वोंकी पञ्चदेहोंका कोष्ठक वर्णन ॥ २ ॥ ...	२०८
१०२	पञ्च भूमिकागत-कर्मफल वर्णन ॥ ३ ॥ ...	२०९

संख्या ।	विषय ।	पृष्ठाङ्क ।
१०३	पञ्चदेहोंमें पञ्चदेवताओंका बासा वर्णन ॥ ४ ॥	२१६
१०४	पञ्च देहोंके न्यारे-न्यारे त्रिगुण वर्णन ॥ ५ ॥ ...	२१६

॥ ❀ ॥ इति दशम प्रकरण समाप्तम् ॥ १० ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ अथ एकादश प्रकरण प्रारम्भः ॥ ११ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ नरदेहमें शुद्ध रहनी और जीवन्मुक्त स्थिति वर्णन ॥ १

१०५	सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबका सत्यन्यायबोध और रहनी वर्णन	२१८
१०६	पञ्च तत्त्वोंकी हंसदेहरूप नरदेहमें शुद्ध गुणोंकी रहनी पूर्णतासे कथन ॥ २ ॥	२१८
१०७	हंसदेहमें वा नरदेहमें त्रिगुणकी शुद्ध रहनी वर्णन ॥ ३ ॥	२२५
१०८	हंसदेहकी वा नरदेहकी दश इन्द्रियोंमें शुद्ध रहनी वर्णन ॥ ४ ॥	२२९
१०९	हंसदेहमें वा नरदेहमें पञ्चतत्त्वोंकी पच्चीस प्रकृतियोंमें शुद्ध रहनी वर्णन ॥ ५ ॥ ...	२३६
	टिप्पणी वर्णन	२३६ से २३८
११०	जगत्में उपदेश देनेका व्यवहारादि वर्णन ॥ ६ ॥	२४२
१११	श्रीकबीरसाहेबके पारख सिद्धान्तकी विशेषता और अन्योंकी गौणता वर्णन ॥ ७ ॥ ...	२४५
११२	अन्तमें श्रीसद्गुरु स्तुति वर्णन ॥ ८ ॥ ...	२४८
११३	सत्य रहनीका एक शब्द वर्णन ॥ ९ ॥ ...	२४९ से २५०

॥ ❀ ॥ इति एकादश प्रकरण समाप्तम् ॥ ११ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थका—
विषयानुक्रमणिका वर्णन समाप्तम् ॥ ❀ ॥

॥*॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥*॥

(आद्यमूल सर्वशिरोमणि परमाऽचार्य्य सद्गुरु बन्दीछोर स्वयं अनुभवी प्रथम पारखबोध प्रकाशी श्रीकबीरसाहेबजीके सच्चे नैष्ठिक अनुयायी, मूल बीजकके पारखबोधदर्शक टीकाकार, बुरहानपुर—नागझिरी गद्दीके प्रथम आचार्य्य, पूज्यपाद पारखनिष्ठ सद्गुरु श्रीपूरणसाहेब-जीके सिद्धान्त अनुसार इस ग्रन्थमें अन्तिम निर्णय—सिद्धान्त दर्शाया गया है।)

* तत्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थः *

अथ मङ्गलाचरण प्रारम्भः ।

दया गुरुकी । आदि सद्गुरु स्तुति ।

॥*॥ दोहा ॥*॥

पारख प्रकाश कबीरगुरु, दीनबन्धु निरधार ॥
बन्दीछोर दयाल अति, सब दुख मेटनहार ॥१॥

॥*॥ छन्द ॥*॥

स्वयंस्वरूप कबीरसाहेब । पारखदृष्टि प्रकाशिकं ॥
दया धीरज उदार दाता । हृदयकमल विकासिकं ॥
गुण औगुण जड़, चेतन सब । भेदलक्ष दिखावनं ॥
बीज वृक्ष जग ब्रह्म विलसे । कसर धोख मिटावनं ॥
झाँईं गाँसि गुरुवाई सबकी । सहज दया करि बोधितं ॥
दीन जन प्रभु जानि आपन । कर्मभ्रम सब छेदितं ॥
नाद बिन्द कला खानि वाणी । सत्यन्याय परखावनं ॥
पिण्ड ब्रह्माण्ड सब आस मेटि । निर्मल दृष्टि करावनं ॥२॥

॥*॥ सोरठा ॥*॥

बन्दौं चरण कृपाल, सदा पारख शान्त पद ॥
मेटे सब भव जाल, गुरुकृपा नर पाय सही ॥३॥
बन्दौं मैं बार बार, रामसुख साहेब गुरु ॥
करहु कृपा दातार, काशीदास दृढ़ पद गहै ॥४॥

इति मङ्गलाचरण समाप्त ।

॥*॥ अथ प्रथम प्रकरण ॥ १ ॥*॥

जगत्‌का स्वरूप।

जगत्‌की स्थिति का यथार्थ बोध ॥ १ ॥

दृश्य जगत्‌की उत्पत्तिके समय प्रथम कर्म कि देह, बीज कि वृक्ष, स्त्री कि पुरुष, रात्रि कि दिन, प्रयत्न कि प्रारब्ध, इसी प्रत्येकमें प्रथम कौन है? इसीका निर्णय किसी महात्मा पुरुषों से हुआ नहीं; इस हेतु सबोंने जगत् अनादि कालसे ही बना है यही सिद्ध किया है।

१. वेदान्तशास्त्रमें:—शुद्धब्रह्म, ईश्वर, अनेक जीव, ये तीन चेतन, अज्ञान (माया), सबोंका सम्बन्ध, और सबोंका भेद, ये षट् पदार्थ अनादि माने हैं।

२. सांख्य शास्त्रमें:—अनेक पुरुष और प्रकृति ये दो पदार्थ अनादि माने हैं।

३. वैशेषिक और न्याय ये दो शास्त्रोंमें:—पाँच तत्त्व, आतमा, काल, दिशा और मन ये नौ द्रव्य अनादि माने हैं।

४. योगशास्त्रमें:—आर्यमतमें और रामानुज सम्प्रदायमें ईश्वर, अनेक जीव और प्रकृति ये तीन पदार्थ अनादि माने हैं।

५. जैनमतमें:—अनन्त जीव और अजीव, ऐसे चेतन

और जड़ ये दो पदार्थ अनादि माने हैं। परन्तु अजीवके पुद्गल, धर्म, अधर्म, काल, आकाश, पाप-पुण्योंके अनेक कर्म ऐसे अन्य भेद वर्णन किये हैं।

६. सद्गुरु श्रीकबीर साहेबः—पाँच जड़ तत्त्वरूप पृथ्वी या भूगोलपिण्ड और अनन्त चेतनजीव ऐसे जड़ और चेतन दो ही पदार्थ अनादि ठहराये हैं। तथा अधरमें स्थित खगोल-पिण्डरूप सूर्य, चन्द्र, तारागणको भी तत्त्वयुक्त अनादि कहे हैं।

७. किसी नास्तिक मतमें निराकार, जड़ आकाशतत्त्व छोड़के अन्य पृथ्वी आदि चार जड़ तत्त्व अनेक परमाणुओंके समूहरूप रहनेसे तिनमें विशेष सामर्थ्यरूप एक शक्ति ठहराये हैं। तिससे जड़ परमाणुओंके समूहरूप मदिराके विशेष नशावत् विशेष शक्तियुक्त, देहधारी, जड़रूप अनन्त चेतन जीव बारम्बार उत्पन्न हों, वे तत्त्वोंमें लयरूप नाश भी हो जाते हैं, ऐसा माने हैं।

८. अंग्रेज लोगोंके बाइबिल ग्रन्थमें अधर आकाशमें स्थित साकार चेतन ईश्वरसे जड़, चेतनरूप जगत्की बारम्बार उत्पत्ति और प्रलय माने हैं।

९. पुराणादि ग्रन्थोंमें:—अधर आकाशमें अनेक स्वर्गमान-के तिनमें सूक्ष्माकार ईश्वरस्वरूप भिन्न-भिन्न देवतारूप चेतन-पुरुषोंसे जड़ और चेतनरूप जगत्की बारम्बार उत्पत्ति और प्रलय माने हैं।

जड़ नास्तिकमतको दोषयुक्त, अन्यायी, ठहराय, वेदोंरूप श्रुतियाँ, धर्मशास्त्रोंरूप स्मृतियाँ, पुराण-कुरानादि आस्तिक, न्याययुक्त ग्रन्थोंमें एक शुद्ध चेतन मुक्त पुरुष अखण्ड, अकर्ता, निर्गुण, निराकार वा बेचून, बेनमून, सर्वत्र व्यापक और न्यारा ठहराये हैं । आपसे त्रिगुणवाला, साकार, एकदेशी जगत्, अर्थात् निराकार निरवयव (परमाणुओंके समूह रहित) व्यापकरूप, जड़ आकाशतत्त्व और अनेक परमाणुओंके समूहरूप पृथ्वी आदि स्थूलाकार, सूक्ष्माकार चारों जड़ तत्त्व, ऐसे पाँच जड़तत्त्व और अखण्ड, अनन्त, देहधारी चेतनजीव, तथा सूर्य, चन्द्र, तारागण, समुद्र, बड़े-बड़े पहाड़ादि सर्व ब्रह्माण्डरूप जगत् अनेक समय उत्पन्न होकर तिसका बारम्बार प्रलय भी माने हैं ।

परन्तु प्रत्यक्ष प्रतीत होते हुए भिन्न-भिन्न जड़-चेतन ये दो पदार्थयुक्त जगत्‌को कहीं एकगुणरूप, एकदेशी वा सर्वत्र व्यापक, अखण्ड शुद्धचेतन जगत्कर्ता मानना असम्भव कथन ठहरता है । क्योंकि जैसे अनादि कारणरूप मुख्य जड़ पृथ्वीके कार्य अनेक जड़ घड़ोंवत् अनन्त, अखण्ड चेतन जीव जगत्-कर्तासे उत्पन्न हों, फिर आपमें लय कैसे होंगे ? उत्पत्तिवाले पदार्थ सदोदित जड़ रहते हैं; इसीसे कारणरूप चेतन कर्ता और कार्यरूप अनेक जीव चेतन दोनों जड़ पदार्थ ही सिद्ध होते हैं । इसी सबब (कारण) अनन्त चेतनजीव स्वरूपसे अनादि सिद्ध

हैं । वे देहधारी प्रत्यक्ष हैं, तथा कारणरूप जड़ तत्त्वोंके कार्य तिनकी जड़ देहें हैं; इसीसे जड तत्त्व भी स्वरूपसे अनादि हैं। अथवा सर्व देहधारी जीवोंको ठहरने और उदरनिर्वाहोंके अनेक व्यवहार करने जड तत्त्वोंके विना नहीं होते। तैसे ही सूर्य, चन्द्र, तारागणादि अन्तरिक्ष जड़ तत्त्वयुक्त अनेक खगोल पिण्ड भी उष्ण, शीत और प्रकाशके लिये अवश्य ही चाहिये, इसीसे वे भी स्वरूपसे अनादि हैं ।

पूर्वोक्त प्रकारसे अनन्त चेतनजीव जड पाँच तत्त्व और तत्त्वयुक्त सूर्यादि खगोल पिण्ड, ये स्वरूपसे अनादि हैं । परन्तु अनादि जड़ तत्त्वोंके कार्यः—वृक्ष, पाषाण, देहादि अनेक पदार्थ बारम्बार तत्त्वोंसे उत्पन्न हों, तिनमें ही लयरूप नाश सदैव हुआ करते हैं । वे प्रवाहरूप अनादि हैं, ऐसा सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब-का सिद्धान्त जगत्के सर्व ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ही सिद्ध होता है ।

यद्यपि जैनमतमें अनन्त जीव और जड़ तत्त्वादि अजीव, ये दो पदार्थ ही स्वरूपसे अनादि माने हैं । तथापि पृथ्वीकाय, जलकाय, तेजकाय, वायुकाय, स्थावरकाय अर्थात् अङ्कुरज वृक्षादि और पाषाणादि अनन्त जीव देह बराबर घटबढ़ होने वाले आकारवान् और स्वरूपसे निराकार माने हैं । इसलिये यह मत भी चेतनजीवोंको जड़ ही माननेवाला, अविचार अन्यायसे व्याप्त है ।

१. अन्य मतवाले एक निराकार व्यापक चेतन कल्पित

कर्ता ठहराय, आपसे साकार, प्रतिबिम्बवत् चेतनस्वरूप, अनेक जीव प्रगट हुए; ऐसी असंभव बात कथन किये हैं।

२. कहीं तत्त्वोंके सूक्ष्म-सूक्ष्म अंशोंमें अन्तर-बाहरसे व्यापक, मुक्तरूप चेतनकर्ता ठहराय, आपसे एक मायाधीश व्यापक चेतन ईश्वर और मायावश अर्थात् जड़ासक्त अज्ञानी और देहधारी एकदेशी अनेक चेतन जीव प्रगट हुए, ऐसा माने हैं।

३. कहीं शुद्धचेतन मुक्तरूप कर्ता ठहराय आप जड़ प्रकृतिसे स्वयं आच्छादित होकर या उसे आधार देकर जड़ासक्त अज्ञानी अनेक जीव प्रगट किये, ऐसा माने हैं।

४. कहीं शुद्धचेतन कर्तापुरुषने अपने इच्छा संकल्पसे वा इच्छाशक्तिसे भिन्न-भिन्न अनेक जड़-चेतन स्वरूप सर्व जगत्की उत्पत्तिकी और विकल्पसे आप जगत्का प्रलय करता है। ऐसे बारम्बार जगत्की उत्पत्ति और प्रलय ठहराये हैं।

५. कहीं शुद्धरूप पराप्रकृतिको ही अनन्त चेतनजीव माने हैं।

६. कहीं जड़ वायु तत्त्वको ही प्राणधारी अनेक चेतन जीव माने हैं।

७. कहीं एक अखण्ड चेतनकर्तासे अनेक चेतन जीव प्रगट होते और प्रलयमें फिर एक ही स्वरूप बन जाते, ऐसा जड़ तत्त्वोंवत् चेतन जीवोंकी उत्पत्तिका कारण–कार्यभाव माने हैं।

८. कहीं जड़ मनके संयोगसे सर्व चेतनजीव ज्ञानवान् बनते, परन्तु वे स्वरूपसे जड़ हैं, ऐसा माने हैं।

९. कहीं अनन्त चेतनजीव देहोपाधिसे छोटे-बड़े देहोंके बराबर आकारवान् और सदैव मुक्तिमें एक व्यापक स्वरूप या अनन्त व्यापकरूप रहते, ऐसा ठहराये हैं। ऐसे-ऐसे वेद, शास्त्र, पुराण, स्मृतियाँ अनेक ऋषि-मुनि तथा भक्त, मुसलमान, क्रिस्तान आदि सर्व सिद्ध किये हैं।

परन्तु सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके सत्यन्यायरूप बीजक सद्ग्रन्थमें पूर्वोक्त अनेक, कल्पित सिद्धान्तोंकी कल्पना करनेवाले अनादि कालके जगत्में मनुष्यादि देहधारी अनन्त चेतन जीव स्वयं ज्ञानस्वरूप हैं, ऐसा सिद्ध किये हैं। वही सर्व सिद्धान्तोंमें श्रेष्ठ सिद्धान्त है और आप ही श्रेष्ठ श्रीसद्गुरु ठहरते हैं; ऐसा पक्ष रहित सबोंको मानना चाहिये। ज्ञानको ही अन्य शास्त्रोंमें पारख, समझ, अकिल, बोध, स्वयंप्रकाश ऐसे भिन्न—भिन्न नाम रखे हैं।

नाशमान शब्दादि पाँच विषय सुखोंके सूक्ष्म अहंकाररूप अध्यासके ही सर्व चेतनजीवोंके और अनेक देहोंके जड़ सम्बन्ध, अर्थात् सूक्ष्म और स्थूल देहोंके सम्बन्ध प्रवाहरूप अनादि कालसे चले आते हैं। परन्तु नरदेह कर्म भूमिका रहनेसे नर-देहधारी ही सर्व मनुष्य अनेक जीवोंको काया, वाचा, मनसे अनेक प्रकारसे सुख-दुःख देनारूप अनेक पुण्य-पापोंके कर्म

करनेमें स्वतन्त्र हैं । और तिनके ही फल सुख-दुःखरूप प्रारब्ध भोग वे मनुष्यादि चारों खानियोंमें देहोंको बारम्बार धारण करके भोग रहे हैं । नरदेहधारी हंसजीवोंकी जड़ाध्यासरूपी वासना भून्ने बीजवत् नष्ट हुये बिना वे शुद्ध रहनिको धारण करके जीवन्मुक्त हो ही नहीं सकते । सो वासनाका नाश करनेके लिये किसी पारखी जीवन्मुक्त सन्तको शोध कर आपकी पारखरूप सदोदित स्थिर बुद्धिप्रमाण अपनी स्थिर बुद्धि बनाना चाहिये । ऐसे नरतनधारी, कायावीर अर्थात् सर्व जड़ाध्यासोंको जीते ही नष्ट किये हुये, सद्गुरु श्रीकबीर साहेबरूप सन्त अनादि कालके जगत्में ऐसे पारखी आदिगुरु सद्गुरुरूप होते ही चले आते हैं । आपके शरणमें जाकर चित्तशुद्धिके लिये काया, वाचा, मनसे आप समान सन्तोंकी सेवा और सत्संग जिज्ञासु जनोंको करते रहना चाहिये । तब जीवन्मुक्त एकरस स्थिति होगी; उसीको बनाना यही मनुष्योंका कर्तव्य कर्म है । सोई बनाना चाहिये ।

॥॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
प्रथम प्रकरणम् समाप्तम् ॥ १ ॥॥
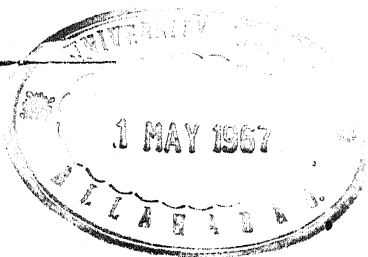
॥*॥ अथ द्वितीय प्रकरण ॥ २ ॥*॥

तत्त्व विवरण ।

अनादि पाँच तत्त्वोंके नाम ॥ १ ॥

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और समानवायुरूप आकाश, ये अनादि पाँच तत्त्वोंके नाम हैं ।

अनादि पाँच तत्त्वोंके आकार ॥ २ ॥

१. आकाशतत्त्वः—यह अन्य चार नित्य जड़ तत्त्वोंका और अनन्त, नित्य चेतनजीवोंका स्थान छोड़कर, सबसे पृथक्, एकदेशी, पोलाकार अवकाशरूप वा शून्यरूप (अनन्त छिद्र-रूप) निराकार, अक्रिय है । गोलाकार, अनन्त त्रसरेणुओं, अणुओं और परमाणुओंसे मिलापरूप पृथ्वी आदि नित्य, कारणरूप, चार तत्त्वोंके और तिनके कार्यरूप, अनन्त पदार्थोंके सन्धियोंमें अनन्त छिद्ररूपसे पिण्ड-ब्रह्माण्डमें सर्वत्र वह एकदेशी आप ही रहा है । अकेले आकाशतत्त्वको कहीं बीता भर न्यारा करके विवेकसे कोई भी दिखानेमें समर्थ नहीं । चार तत्त्वोंके स्वरूपसे भिन्न सन्धियोंमें पोलरूप आकाश स्थित है । अतः आकाश व्यापकसे रहित एकदेशी ही शून्य जहाँ-तहाँ है । इस-लिये आकाशको अन्तर बाहर व्यापक और तिसका कार्य

साकार, दृश्य प्रतिबिम्ब वा क्रियावान्, सूक्ष्माकार शब्दरूप गुण वा विषय माने हैं, वह मनुष्योंकी कल्पना ही सिद्ध होती है, सिर्फ पोल या शून्यमात्र आकारसे रहित निराकार आकाश है।

२. पृथ्वीतत्त्वः—यह अनन्त त्रसरेणु वा अनन्त रजरूपसे संयोगवान्, अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित, विशेष वजनदार, दृश्य-प्रत्यक्ष "स्थूलाकार" है, जिसको 'भूगोलपिण्ड' भी कहते हैं।

३. जलतत्त्वः—यह अनन्त अणुरूपसे संयोगवान्, अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित, पृथ्वीसे कम वजन, दृश्य-प्रत्यक्ष 'स्थूलाकार', पृथ्वीसे त्रिगुणाधिक मुख्य समुद्ररूपसे स्थित है।

४. वायुतत्त्वः—अनन्त परमाणुरूपसे संयोगवान् अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित जलसे कम वजन, त्वचासे स्पर्शद्वारा जानने योग्य, अदृश्य "सूक्ष्माकार" है। वह जल तत्त्वसे संकोचवान् और तेजतत्त्वसे विकाशवान् नित्य रहनेसे सदोदित समान विशेषरूप जहाँ-तहाँ सर्वत्र गतिवान् रहता है।

५. तेजतत्त्वः—यह विशेष तेजमय मुख्य अनन्त परमाणुओंसे संयोगवान् सूर्य, तारागणादि अधरमें स्थित दृश्य खगोलपिण्ड हैं। वे अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित दृश्य, स्थूलाकार, अनेक, अनादि और कारणरूप हैं। वह काष्ठादि सर्व पदार्थोंमें अनन्त परमाणुरूपसे संयोगवान्, अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित, सर्वत्र स्थित सामान्य तेज, वायुसे बहुत ही हलुक, अदृश्य, "सूक्ष्माकार" है।

ऐसे नित्य शून्यरूप आकाशतत्त्व एकदेशी, निराकार और पृथ्वी आदि चारों नित्य तत्त्व स्थूल और सूक्ष्माकार पिण्ड, ब्रह्माण्डमें अनन्त चेतन जीवोंको छोड़कर, सर्वत्र स्थित निराधार हैं ।

त्रसरेणु, अणु, परमाणुओंका वर्णन ॥ २ ॥

जालियाँ, झरोखों आदिमेंसे सूर्यकी किरणोंद्वारा तिरछी-तिरछी प्रकाशरूप धूप सबेरे घरोंमें आ जाती है । तिनमें वायुके वेगद्वारा झीने-झीने अनेक रज नीचे-ऊपर जाया करते हैं । तिनमेंके सबसे सूक्ष्म-सूक्ष्म प्रत्येक रजको त्रसरेणु कहते हैं ❀ । पृथ्वी तत्त्वके अखण्ड, अनन्त रजरूप त्रसरेणु स्वरूपसे नित्य हैं ।

एक त्रसरेणुके तीन अंशोंमेंसे एकको अणु कहते हैं । जलतत्त्वके भाफरूप अखण्ड, अनन्त अणु भी स्वरूपसे नित्य हैं ।

एक अणुके दो अंशोंमेंसे एक, अतिसूक्ष्म, अदृश्य अंशको परमाणु कहते हैं । जिसका फिर अंश नहीं बनता । वायु और तेज ये दो तत्त्वोंके अखण्ड, अनन्त परमाणु, स्वरूपसे नित्य हैं ।

❀ दो परमाणुओंका एक अणु और तीन अणुओंका एक त्रसरेणु कहाता है । जो जाली और झरोखोंके भीतर सूर्यकी किरणोंमें दिखाते हुए नीचे ऊपर जाया करते हैं । तिनमेंके हर एक झीनेको त्रसरेणु कहा है । (भा० ३।१२।५), १ परमाणु, २ अणु—द्व्यणुक, ३ त्रसरेणु त्र्यणुक, चतुरणुक इत्यादि बनना, वही पारिमाण्डल्य—परमाणुओंके कार्य हैं ॥

अतिसूक्ष्म परमाणुओंको भी सिद्ध योगीजन सूक्ष्म दृष्टिसे देख सकते हैं। ऐसा गुरुवा लोग कल्पना करते हैं। परन्तु परमाणु कुछ दिखाई देता नहीं। अथवा सूक्ष्म-सूक्ष्म पदार्थ थोड़ेसे कुछ बड़े देखनेके खुर्दबीन नामके यन्त्रसे वे अणु, त्रसरेणु आदि दिखाय देते हैं। उसीको सूक्ष्मदृष्टिसे सब कोई देख सकते हैं। यह मानना वास्तविक बात होनेसे सत्य है।

अनादि चार तत्त्वोंके कार्य ॥ ४ ॥

अनादि भूगोल पिण्डरूप पृथ्वीमें और अधर ब्रह्माण्डरूप वातावरणमें अनन्त रजोंका समुदायरूप पृथ्वी, अनन्त अणुओं-का समुदायरूप जल और अनन्त परमाणुओंका समूहरूप वायु और तेज ये दो तत्त्व, ऐसे अनादि चारों तत्त्व सर्वत्र कारणरूप-से स्थित हैं। तिनमेंके कछुक त्रसरेणु, अणु, परमाणु अलग, अलग हों, तिनके मिश्रणसे और तत्त्वोंके रसायनाकर्षण शक्तिसे अनेक कार्यरूप स्थूल पदार्थ बनकर, अन्तमें अपने-अपने कारणरूप नित्य तत्त्वोंमें लयरूप नाश सदोदित होते रहते हैं।

१. पृथ्वीतत्त्वके कार्यः—मुख्य स्थूलरूप पृथ्वीतत्त्वयुक्त सोनादि अष्टधातु, अनेक रङ्गोंके पाषाण, अनेक क्षार, कोयला, गन्धक, सोरा, पारा, अनेक वृक्षादि वनस्पति, अनेक भिन्न-भिन्न देहें इत्यादि पृथ्वी तत्त्वके ही मुख्य-मुख्य कार्य माने जाते हैं।

२. जलतत्त्वके कार्यः—मुख्य बाफरूप जलतत्त्वयुक्त अनेक मेघ, वर्षारूपसे अनेक बून्दें, बुद्बुदे, धुँवावत् कुहिरें; ओले, पाला,

सूक्ष्म-सूक्ष्म बर्फके अनेक अणु, ओस, बर्फ इत्यादि जलतत्त्वके प्रधान कार्य हैं।

३. तेजतत्त्वके कार्यः—मुख्य समान अदृश्य तेजतत्त्वयुक्त अनेक सूक्ष्म-सूक्ष्म चिनगारियाँ, दियाओंकी ज्योतियाँ, आग, बिजुलियाँ इत्यादि दृश्य पदार्थ जो हैं, सो अग्नितत्त्वके प्रधान कार्य हैं।

४. वायुतत्त्वके कार्यः—मुख्य समान गतिवान् वायुतत्त्वसे अनहद नादरूप सूक्ष्म शब्द और चञ्चल, गतिवान् वायुतत्त्वसे मनुष्य, पश्वादिकोंके स्थूल नाँद और वर्णरूप शब्द प्रगट होने, तुफानी हवा तथा चक्राकार बौंडर होना, अधरमें अनादि कालसे स्थित सूक्ष्म बाफरूप, दृश्य, श्याम रङ्गके जलचक्रमेंसे प्रेरक वायु द्वारा अनेक बादल जम जाना, बिजलियाँ प्रगट होके किसी समय पृथ्वी पर गिरना; ओले, ओस, पाला, बर्फके झीने-झीने तुषार गिरना; कुहिरें प्रगट होना, आग जलना, जलमें लहरें उठना; डार, पत्र, फूल, फल, पत्तादिकोंको सदोदित हिलाते रहना; अनाज आदि झीने-झीने पदार्थ परस्पर मिलाय देना, डालियाँ, वृक्षादिकोंको तोड़ कर गिराना, इत्यादि वायुतत्त्वके प्रधान कार्य हैं। अधरमें स्थित निराधार खगोलपिण्डरूप बड़े-छोटे आकारवान् सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, तारागणादि मुख्य तेजतत्त्वयुक्त विशेष प्रकाशरूप और सूर्यसे प्रकाशित चन्द्र, स्वरूपसे मुख्य जलतत्त्वयुक्त विशेष शीत-रूप, ये भी जड़तत्त्वोंसे मिश्रित, स्थूलाकार कारणरूप पदार्थ

स्वरूपसे अनादि हैं।

५. सूर्यके कार्यः—सदोदित पृथ्वी घूमनेसे अर्ध पृथ्वीपर दिन और रात्रि रहना, सर्व पदार्थोंको प्रकाशित करना, अनन्त रजरूप त्रसरेणु और अनन्त अणु तथा परमाणुओंको चमकीले बनाय, सर्वत्र अर्ध पृथ्वीपर धूप होना, गर्मी प्रगटाना, विशेष या सामान्यरूपसे तपाना, जमे हुए घी, बर्फादि पदार्थोंको पिघलाना, सुखाना, जलाना इत्यादि विशेष करके सूर्यके प्रधान कार्य हैं।

६. चन्द्रके कार्यः—दाह (गर्मी) मिटाना, सर्व पदार्थोंको शीतलयुक्त करना, कुछ-कुछ बादलोंके भाग बर्फवत् जम जाना, इत्यादि चन्द्रमाके प्रधान कार्य हैं।

उल्कादि तारे बाफ और प्रवाही पदार्थोंसे समय-समय पर बनके टूटकर फिर तत्त्वोंमें लय होते रहते हैं।

पूछल तारे भी समय-समय पर उदय और अस्त होते रहते हैं। (इन सबका विशेष वर्णन-समाधान-"निर्पक्ष सत्यज्ञान दर्शन" ग्रन्थमें जगत्कर्ता दर्शनकी अन्त्य भागमें विस्तारसे कहा है, चाहे वहाँसे देखिये) ॥

॥ ❀ ॥ अनादि तत्त्वोंका मिलापरूप संयोग सम्बन्ध ॥ ❀ ॥
पृथ्वी तत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ५ ॥

कारणरूप, अनादि भूगोलपिण्डरूप स्थूल पृथ्वी और तिसके कार्यरूप अनन्त दृश्य पदार्थ प्रत्यक्ष दृश्यरूप मुख्य

पृथ्वीतत्त्व हैं।

मुख्य पृथ्वीतत्त्वके कार्यरूप ईंट, तवादि पदार्थोंको विशेष तपाय, भूमिपर धरनेसे उष्णतासे तिसमेंका जल ऊपर आकर्षण होकर, तिनके नीचेकी जगह गीली हो जाती है; वह पृथ्वीतत्त्वमें जलतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

मुख्य पृथ्वीतत्त्वके कार्यरूप बाँसोंमें वायुके विशेष वेगद्वारा तिनके परस्पर घर्षणसे अग्नि प्रगट हो जाती है। अथवा चकमकके ठोकरोंसे पथरीमें अग्निकी चिनगारियाँ प्रगट होती हैं; वह पृथ्वीतत्त्वमें तेजतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

मुख्य पृथ्वीतत्त्वके सूक्ष्म गोलाकार, नित्य, अनन्त त्रसरेणुओंके सन्धियोंमें सूक्ष्म अनन्त छिद्ररूपसे एकदेशी आकाशतत्त्व सदोदित स्थित है ही। अथवा पदार्थ विज्ञान शास्त्रके प्रमाणसे पृथ्वीरूप भूगोलपिण्ड समुद्रादि जलसहित और उसके पास की ४५ मील घनी हवा सहित पश्चिमसे पूर्व तरफ गिरे हुये गाड़ीके चाकवत्, आगे-आगे जानेवाला रात-दिनमें एक बार उलट-पुलट सदोदित वातावरणमें ही घूमा करता है॥ वहाँ अनन्त छिद्ररूपसे एकदेशी आकाश तत्त्व पृथ्वीमें अनादि कालसे रहा ही है।❀

---

* तत्त्वोंके परमाणु, और चेतन जीवोंके स्वरूप अखण्ड होनेसे ठोस है। अर्थात् उनमें सन्धिरूपछिद्र नहीं है। इसीसे आकाश

पृथ्वीमेंके अनन्त छिद्ररूप आकाशतत्त्वके सन्धियोंमें गतिवान् वायु सदोदित भीतर-बाहर जाती-आती रहती है; वह पृथ्वीतत्त्वमें वायुतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

इस प्रकारसे अनादि पृथ्वीतत्त्वमें अन्य तत्त्वोंका संयोगरूप मिलाप अनादि कालसे है ही। परन्तु निराकार आकाश तत्त्व तिसमें अनन्त छिद्ररूपसे एकदेशी आप ही रहा है। तिसका और दृश्य पृथ्वीका संयोगरूप मिलाप नहीं। पृथ्वीतत्त्वके नित्य, अनन्त त्रसरेणुओंने तिसका स्थान रोक रखा है।

जलतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ६ ॥

कारणरूप अनादि, अनन्त अणुओंका समूहरूप, दृश्य, स्थूलाकार समुद्रादि विशेष जल और कार्यरूप अनेक बून्द, बुदबुदे, बर्फ, ओले आदि सामान्य जल प्रत्यक्ष दृश्य मुख्य जलतत्त्व है।

किसी माँजे हुये स्वच्छ बर्तनपर जलकी बून्दें छिड़कनेसे वहाँ दाग पड़ जाते हैं; वह जलमें पृथ्वीका मिलाप है। अथवा शक्कर वा निमक ये पृथ्वीके कार्यपदार्थ जलमें घुल जानेसे जल ही स्वरूप प्रतीत होते हैं। परन्तु उसे विशेष तपाय, बाफ रूपसे अधरमें जल उड़के पूर्ववत् शक्कर वा निमक शेष रह जाते हैं। इसीसे जल और पृथ्वीका संयोगरूप मिलाप अनादिसे है।

व्यापक नहीं है। वह अवकाशरूप सर्वत्र है, तो भी सन्धिरूप होनेसे ही एकदेशी कहा गया है।—संशोधक।

शीत समयमें नदियाँदिकोंके जलोंमें तेजद्वारा बाफ निकला करती है। अथवा शरीरोंमें रहे हुये जलमेंसे विशेष शीत समय पर मुखमेंसे तेजके बलसे बाफ निकलती हुई सब देखते हैं; वह जलतत्त्वमें तेजतत्त्वका अनादिसे मिलाप है।

नदियाँदि विशेष जलमें पत्थरादि पृथ्वीके कार्य कठिन पदार्थ डूब जाते हैं; वह अनन्त छिद्ररूपसे एकदेशी आकाशतत्त्व जलतत्त्वमें आप ही अनादिसे रहा है।

जलमेंके एकदेशी अनन्त छिद्ररूप आकाशमें गतिवान् वायु भीतर-बाहर जाती-आती रहती है; वह जलतत्त्वमें वायुतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

इस प्रकारसे अनादि जलतत्त्वमें अन्य तत्त्वोंका संयोगरूप मिलाप अनादिकालसे है ही। परन्तु निराकार एकदेशी आकाशतत्त्व तिसमें अनन्त छिद्ररूपसे आप ही रहा है, तिसका और जलका संयोगरूप मिलाप नहीं। जलतत्त्वके नित्य, अनन्त अणुओंने तिसका स्थान रोक रखा है।

तेजतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ७ ॥

कारणरूप, अनादि, अनन्त परमाणुओंका समूहरूप, अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित, अदृश्य, सामान्य मुख्य तेजतत्त्व है। और कार्यरूप ज्योतियाँ, बिजली, आग आदि विशेष दृश्य अग्नितत्त्व है। परन्तु कारणरूप, अनादि, अधरमें स्थित, दृश्य स्थूलाकार सूर्य, तारागणादि मुख्य प्रकाशरूप तेजतत्त्व है।

दियाओंकी ज्योतिरूप अग्नियाँ या विशेष तपाया हुआ लोहा विशेष पीला वा लाल रङ्गका दीखता है। वह तेजतत्त्वमें मिलापरूप पृथ्वीतत्त्व अनादिसे है। यद्यपि बिजलीका सफेद प्रकाश या सूर्यकी सफेद धूप अग्निका रंग दीखता है। तथापि उसमें पीला, नीला, हरा, लाल आदि सात रंग त्रिकोणवाली सफेद काँचद्वारा दीखते हैं, वे अन्य तत्त्वोंके मिश्रित रंग हैं।

ज्योतिरूप अग्निमें धुँवा निकला करता है, वह तेजतत्त्वमें जलतत्त्वका मिलाप अनादिसे है; जैसे रेलगाड़ीमें धुँवारूप ग्यासोंके लगाये हुये प्रकाशरूप दिये।

ज्योतिरूप अग्निमें लोहेकी तार भीतरसे बाहर निकल जाती है। उसीसे अनेक छिद्ररूपसे, एकदेशी आकाशतत्त्व तेजतत्त्वमें अनादिसे रहा है। सर्वत्र सामान्यरूप तेजतत्त्व वा कार्यरूप विशेष ज्योतियाँदि अग्निका अनन्त परमाणुओंसे मिश्रित स्वरूप रहनेसे तिसमेंके अनन्त छिद्ररूप, एकदेशी आकाशमें गतिवान् बायु भीतर–बाहर आती–जाती रहती है, वह तेजतत्त्वमें वायुतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

इस प्रकारसे अनादि तेजतत्त्वमें अन्य तत्त्वोंका संयोगरूप मिलाप अनादि कालसे है। परन्तु निराकार, एकदेशी आकाश-तत्त्व तिसमें अनन्त छिद्ररूपसे आप ही रहा है; तिसका और तेजतत्त्वका संयोगरूप मिलाप नहीं। तेजतत्त्वके नित्य अनन्त परमाणुओंने तिसका स्थान रोक रखा है।

वायुतत्त्वका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ८ ॥

कारणरूप, अनादि, अनन्त परमाणुओंका समूहरूप और अन्य तत्त्वोंके अनन्त त्रसरेणु, अणु और परमाणुओंसे मिश्रित, सामान्य-विशेषरूपसे पिण्ड—ब्रह्माण्डमें सर्वत्र गतिवान् त्वचासे स्पर्शद्वारा जानने योग्य, अदृश्य सूक्ष्मरूप मुख्य वायुतत्त्व है।

जालियाँ, झरोखोंमेंसे सूर्यकी किरणोंद्वारा सबेरे घरोंमें कहीं-कहीं धूप आजाती है। तिनमें अनन्त, दृश्य, सूक्ष्म—सूक्ष्म रजरूप त्रसरेणु वायुके गतिद्वारा नीचे—ऊपर जाया करते हैं; वह वायुतत्त्वमें पृथ्वीतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

सर्वत्र गतिवान् अदृश्य वायुमें अनन्त परमाणुरूपसे तेजतत्त्व और अनन्त अणुरूपसे जलतत्त्व मिश्रित रहनेसे वायुद्वारा उक्त तत्त्वसंयुक्त तिसमेंसे गरम और शीत निकलकर उन तत्त्वोंसे गर्म और शीत वायुको सर्वजीव जानते हैं। वह वायुतत्त्वमें तेजतत्त्व और जलतत्त्वका मिलाप अनादिसे है।

सर्वत्र पिण्ड—ब्रह्माण्डमें गतिवान्, अनादि अनन्त परमाणुरूप वायुतत्त्वमें अन्यतत्त्वोंके अनन्त त्रसरेणु, अणु और परमाणुओंका संयोगरूप मिलाप अनादिसे है। तिनके सन्धियोंमें अनन्त छिद्ररूप, एकदेशी आकाशतत्त्व आप ही रहा है। वह निराकार, अक्रिय रहनेसे तिसका और अदृश्य, सूक्ष्माकार, क्रियावान् वायुतत्त्वका संयोगरूप मिलाप नहीं। क्योंकि वायुतत्त्वके अनन्त, अखण्ड परमाणुओंने तिसका स्थान रोक रखा है।

इस प्रकारसे तत्त्वोंके अनन्त त्रसरेणु, अणु और परमाणुओंके संयोगरूप सन्धियोंमें अनन्त छिद्ररूपसे निराकार, अक्रिय, एकदेशी आकाशतत्त्व छोड़के अन्य चार अनादि तत्त्वोंका संयोगरूप मिलाप सर्वत्र पिण्ड-ब्रह्माण्डमें अनादि कालसे है ।

जगत्में झीने कंकरमें भी पाँचों तत्त्व, कठिनसे कठिन पदार्थमें भी रहे हैं। जैसे दृश्य कंकर या भारीपना प्रत्यक्ष 'पृथ्वीतत्त्व' का है। उसका दृश्य पिण्ड बन्धा हुआ 'जलतत्त्व' से है। उसमें तेजतत्त्वका दृश्य 'रूप' प्रत्यक्ष ही है । उसके अखण्ड परमाणु, अणु और त्रसरेणुओंके सन्धियोंमें कुछ छिद्ररूप, निराकार, एकदेशी 'आकाशतत्त्व' आप ही रहा है। और तिन छिद्ररूप आकाशमें भीतर-बाहर गतिवान् वायु आती-जाती रहती है, वह 'वायुतत्त्व' है ।

अनादि चार खानियोंके अनन्त चेतन जीवोंको छोड़के पूर्वोक्त अनादि पृथ्वी आदि चारों जड तत्त्व पिण्ड-ब्रह्माण्डमें सर्वत्र स्थित हैं। और अनन्त छिद्ररूपसे आकाश तिनमें आप ही रहा है। ऐसा यथार्थ निर्णयसे मनुष्योंको निश्चय होगा, तब तिनके उत्पन्नकर्ताका भ्रम सहज ही मिट जायगा। अतः सत्संग द्वारा सत्यबोध होना चाहिये। तभी निज स्वरूपकी स्थिति होगी।

अनादि चार तत्त्वोंके धर्म ॥ ९ ॥

१. पृथ्वीतत्त्वमें–मुख्य 'कठिनता' धर्म है ।

२. जलतत्त्वमें–मुख्य 'शीतलता' धर्म है ।

३. तेजतत्त्वमें–मुख्य 'प्रकाश करना और उष्णता' करना धर्म है।

४. वायुतत्त्वमें–मुख्य 'अतिकोमलता' धर्म है।

इस प्रकारसे अनादि अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित चार तत्त्वोंके धर्म स्वरूपसे अनादि हैं। परन्तु अनेक छिद्ररूप आकाशतत्त्वमें कोई धर्म नहीं।

अनादि चार तत्त्वोंके गुण ॥ १० ॥

१. पृथ्वीतत्त्वमें–मुख्य 'गन्ध गुण वा विषय' है।

२. जलतत्त्वमें–मुख्य 'रस गुण वा विषय' है।

३. तेजतत्त्वमें–मुख्य 'रूप गुण वा विषय' है।

४. वायुतत्त्व–अन्य तत्त्वसे मिश्रित रहनेसे तिसमें सामान्य-विशेष गति भेदसे "शब्द और स्पर्श" ये मुख्य दो 'गुण वा विषय' हैं।

इस प्रकारसे अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि चारों तत्त्वोंके 'गुण वा विषय' स्वरूपसे अनादि हैं। परन्तु निराकार, अक्रिय 'अनन्त छिद्ररूप' आकाश तत्त्वमें कोई 'गुण वा विषय' नहीं।

अनादि चार तत्त्वोंके आवाज ॥ ११ ॥

१. पृथ्वीतत्त्वका–मुख्य, खट्-खट् ऐसा आवाज वा ध्वनिरूप शब्द है।

२. जलतत्त्वका–मुख्य, चुल्-चुल् वा झुल्-झुल् ऐसा आवाज वा ध्वनिरूप शब्द है।

३. तेजतत्त्वका—मुख्य, भुक्-भुक् वा भक्-भक् ऐसा आवाज वा ध्वनिरूप शब्द है।

४. वायुतत्त्वका—मुख्य सों—सों वा सर-सर ऐसे आवाज वा ध्वनिरूप शब्द है।

इस प्रकारसे अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि चारों तत्त्वके मुख्य आवाज वा ध्वनिरूपसे विशेष शब्द हैं। जब कोई अष्टांग योग साधन-सिद्ध, योगी शरीर भरके सर्व वायुको योग, साधनसे मस्तकके ब्रह्मरंध्रमें, अर्थात् बालकोंकी छोटेपनमें तालु लप्-लप् करती है, वहाँ चढ़ाय ले जाते हैं; तब अनहद ध्वनिरूप दुन्दुभी, भेरी, मृदंग, सितार, घण्टा, शंख, झाँझ, वीणा, सहनाई और बाँसुरी—ये मुख्य दश सूक्ष्म शब्द वा आवाज सुनाई देते हैं। अथवा किसीको दोनों कानोंके छिद्र बन्द करके कुछ अनहद ध्वनिरूप शब्द वा आवाज सुनाई देते हैं। वे आवाज वा अनहद शब्द अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित मुख्य समान वायुतत्त्वके हैं।

अनादि पृथ्वीतत्त्वके गन्धके भेद ॥ १२ ॥

अनादि पृथ्वीतत्त्वमें मुख्य सुगन्ध और दुर्गन्ध ऐसी दो गन्ध हैं।

करम्भ, सौरभ्य और शांत,—ये तीन प्रकारकी सुगन्ध हैं।

१. कपूरादिककी गन्ध करम्भ है।

२. कस्तूरी आदिककी गन्ध सौरभ्य है, और,

३. कमलादिककी गन्ध शांत है। और

उग्र, खट्टी और पूति (बदबू),—ये तीन प्रकारकी दुर्गन्ध हैं।

१. लहसनादिककी गन्ध उग्र है।

२. कोई फेन आये हुए पदार्थकी गन्ध खट्टी है, और,

३. सड़े हुए पदार्थकी गन्ध पूति (बदबू) है।

अनादि जलतत्त्वके रसके भेद ॥ १३ ॥

अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि जलतत्त्वमें मधुर, खट्टा, कडुवा, तीखा, कषाय और खारा, ये षट् रस हैं। तिसमें मधुर रस मुख्य जलका है, क्योंकि हर्रा खाकर उसपर जल पीनेसे उसका मधुर रस प्रगट होता है।

अनादि तेजतत्त्वके रूपके भेद ॥ १४ ॥

अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि तेजतत्त्वमें दिव्य तेज, भौम तेज, आकरज तेज और उदर तेज,—ऐसे चार प्रकारके तेजस्वरूप 'रूप' हैं। बिजुलीका 'दिव्य तेज'। आग, ज्योति आदिकोंका 'भौम तेज'। खानियोंमेंसे निकलते हुए सोनादि अष्ट धातुओंका 'आकरज तेज'। और नाभिमें स्थित जव प्रमाण जठराग्नि रहता है, वह 'उदरतेज' है। ऐसे चार प्रकारसे तेजतत्त्वके मुख्य रूप हैं।

अनादि वायुतत्त्वके स्पर्शके भेद ॥ १५ ॥

अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि वायुतत्त्वमें अति कोमल, कठिन, शीत और उष्ण,—ये चार स्पर्श हैं। तिनमें 'अति कोमल स्पर्श' मुख्य वायुतत्त्वका है। और कठिन स्पर्श पृथ्वीतत्त्वका,

शीत स्पर्श जलतत्त्वका, उष्ण स्पर्श तेजतत्त्वका, ऐसे तीन स्पर्श अन्य मिश्रित तत्त्वोंके वायुतत्त्वमें रहे हैं।

अनादि चार तत्त्वोंके रङ्ग ॥ १६ ॥

१. अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि पृथ्वी तत्त्वका मुख्य 'पीला रंग' है। क्योंकि पृथ्वीके कार्यरूप बीजोंमेंसे प्रथम पीले रङ्गोंके सर्व अंकुर भूमिसे निकल पड़ते हैं। कहीं पृथ्वी काली, सफेद और लालरंगकी दिखाती है; वे अन्य विशेष तत्त्वोंके मिश्रणके रंग हैं।

२. अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि जलतत्त्वका मुख्य 'सफेद रंग' है। क्योंकि बर्फ, ओले, वीर्य, खकारादि मुख्य जलतत्त्वके ही 'सफेद रंग' हैं। परन्तु अन्य तत्त्वोंके विशेष अंश जलमें मिल जानेसे उसके पीले, काले आदि अन्य रंग भी बन जाते हैं।

३. अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित अनादि तेज तत्त्वका मुख्य 'लाल रंग' है। दियाओंकी ज्योतियाँ पीले रंगकी और ग्यासकी वा बिजुलीके दियाओंकी ज्योतियाँ सफेद रंगकी देख पड़ती हैं, वे मुख्य पृथ्वी और जलतत्त्वके रंग हैं। पदार्थ विज्ञानशास्त्रमें लिखा है कि, सूर्यके प्रकाशरूप धूपमें सफेद, पीला, लाल, नीला, हरा, बेङ्गनी, नारंगी ये सात रंग रहे हैं। तीन कोनवाली सफेद काँच द्वारा वे सब दिखाई देते हैं। वे रंग चार तत्त्वोंके अनन्त त्रसरेणु, अणु, और परमाणुओंका मिश्रण सर्वत्र वातावरणमें रहनेसे हैं। ऐसे जानना चाहिये।

४. और अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित, गतिवान् अनादि वायु तत्त्वका मुख्य 'नीला रंग' है । क्योंकि घरके भीतर समान गतिवान् वायुमें धरे हुये कुण्डियोंमें जमे हुए किसी अनाजके अंकुरोंका प्रथम पीला रंग रहता है । और बाहरके विशेष गतिवान् वायुमें तिनको धरे बाद वायुतत्त्वका नीला और पृथ्वी-तत्त्वका पीला रंग मिलके दूसरे ही दिन उसका 'हरा रंग' बन जाता है।

इस प्रकारसे अनादि पृथ्वी आदि चार तत्त्वोंके पीला, सफेद, लाल और नीला, ये चार ही रंग मुख्य हैं। क्षारसहित सफेद रंगके चूनेमें बराबर भागसे पीला रंग मिलानेसे 'लालरंग' बनता है, और तिसमें विशेष पीला रंग मिलाया कि, 'बेंगनी' वा काला रङ्ग, बन जाता है। पीला और लाल रंग मिलानेसे 'नारंगी रंग' बन जाता है, और लाल तथा नीला रंग मिलानेसे 'बेङ्गनी रंग' बनता है । ऐसे तत्त्वोंके कार्यरूप भिन्न-भिन्न रंगोंके पदार्थ मिलानेसे गुलाबी, किरमिजी आदि भिन्न-भिन्न रंगोंके और भी पदार्थ बन जाते हैं। परन्तु आकाशतत्त्व निराकार, अनन्त छिद्ररूपसे एकदेशी, अदृश्य रहनेसे तिसमें कोई भी दृश्य साकार रंग नहीं।

अनादि चार तत्त्वोंकी शक्तियाँ।। १७ ।।

अनादि पृथ्वी आदि चार तत्त्वोंमें गुरुत्त्वाकर्षण, धारणाकर्षण, रसायनाकर्षण और स्नेहाकर्षण (केशाकर्षण), ये चार

प्रकारकी शक्तियाँ हैं।

१. अधरमें ठहरे हुये पृथ्वी, चन्द्र, सूर्यादि बडे-बड़े पदार्थ और छोटे-बड़े सर्व दृश्य पदार्थोंका परस्पर आकर्षण रहनेसे वे जहाँ—तहाँ अपने-अपने जगहोंमें ठहरे हैं, वह "गुरुत्वाकर्षण" शक्ति है।

२. किसी पदार्थको जहाँके तहाँ स्थित रखके अपने भीतर घुसने नहीं देना, यह दूसरी "धारणाकर्षण" शक्ति है। यह शक्ति मुख्य पृथ्वीतत्त्वमें पूर्णतासे और कुछ अंशमें जलतत्त्वमें, ऐसी दो तत्त्वोंमें सदोदित रही है।

३. अनन्त त्रसरेणु, अणु और परमाणुओंके मिश्रणसे पूर्वमें वर्णन किये हुये अनादि पृथ्वी आदि चारतत्त्वोंके स्थूल-रूपसे अनेक कार्यरूप पदार्थ बारम्बार बनकर तत्त्वोंमें लयरूप नाश सदोदित होते ही रहते हैं। वह तीसरी "रसायनाकर्षण" शक्ति है।

४. परन्तु तेजतत्त्वोंमें अन्न-जलको पचाना, पदार्थोंको गरम कराना, पिघलाना (गलाय डारना), सुखाना, जलाना, भस्म कराना, इत्यादि अनेक शक्तियाँ हैं। और—

५. वायुतत्त्वमें ऊपरके अनादि नीलेरंगके जलचक्रमेंसे बादल निकालना, मुर्दे फुलाना, वृक्षोंकी डालियाँ तोड़ना, और वृक्षोंको गिराना, लोहादि-पत्रा खपरादिकोंको दूर उड़ा देना, अन्नरस सर्व देहोंमें पहुँचाय, देहधारी जीवोंमें तिसका बल रखाना, इत्यादि अनेक शक्तियाँ हैं।

६. उक्त चारों तत्त्वोंके भिन्न–भिन्न अनन्त त्रसरेणु, अणु और परमाणुओंका परस्पर संयोगरूप मिलाप सदोदित रखना, वह चौथी "स्नेहाकर्षण" शक्ति है।

पूर्वोक्त चारों शक्तियाँ पृथ्वी आदि चार तत्त्वोंमें अनादि रहनेसे सर्व देहादि दृश्य पदार्थरूप जगत् प्रतीत होकर सर्व पदार्थ जहाँके तहाँ ठहरके पिंड-ब्रह्मांडमें सर्व व्यवहार बराबर हो रहे हैं। परन्तु इच्छा शक्तिसे सर्व देहधारी चार खानियोंके जीव अपने-अपने देहोंके व्यवहार स्वतन्त्रतासे कर रहे हैं।

अनादि चार तत्त्वोंकी क्रियाएँ ॥ १८ ॥

१. पृथ्वीतत्त्वमें गिरे हुए चाकवत् सदोदित पश्चिमसे पूर्वकी ओर रात-दिनमें एकबार आगे–आगे घूमनेकी क्रिया है। जिससे रात्त-दिन बराबर होते रहते हैं। नीचेके पाताल वा अमेरिका देशमें रात्रि होती है, तो यहाँ ऊपरके हिन्दुस्तानादि देशोंमें दिन रहता है। और वहाँ दिन होता है, तो यहाँ पर रात्रि रहती है।

२. जलतत्त्वमें नीचेकी ओर बहनेकी और पदार्थोंको बहाय ले जानेकी क्रिया है। जैसे नदियाँ आदिकोंका जल और मेघोंमें की बून्दोंका जल नीचे ही बहा करना, वृत्तादि पदार्थ जलमें नीचे ही बहते रहना, ऐसा क्रिया होता है, इत्यादि 'अर्ध गमन जलकी क्रिया' है।

३. तेज तत्त्वमें ज्योतियाँ आगकी लपटें, ऊपर उठनेकी क्रिया

है। उसको 'उर्ध्वगमन क्रिया' कहते हैं।

४. गतिवान् वायुतत्त्वमें 'तिरछी गमन' करनेकी क्रिया है। क्योंकि बरसातमें वायुके वेगसे जलकी बून्दें सदोदित तिरछी ही पृथ्वीपर गिरती रहती हैं। वायुतत्त्वकी और क्रियायें वायुके कार्यमें पूर्व ही वर्णन की हैं। (पृष्ठ १४+४ में देखिये)।

५. आकाश तत्त्व निराकार, अनेक छिद्ररूप अक्रिय रहनेसे शब्दादि कोई भी क्रिया तिसमें नहीं है। शून्य-पोलमेंसे स्वतः कोई क्रिया होती नहीं, अतः अक्रियरूप ही आकाशतत्त्व है, ऐसा जानना चाहिये।

अनादि चार तत्त्वोंकी कलाएँ ॥ १९ ॥

जगत्‌में चार तत्त्वोंके कार्यरूप मनुष्योंके शरीर संयोगसे खानि और वाणीकी 'पिण्ड, ब्रह्माण्डरूप' मुख्य दो कलाएँ बन्धनरूप प्रगट हुई हैं।

निद्रावश वासनारूप स्वप्न अवस्थामें मुख्य पृथ्वीतत्त्वका कार्यरूप शरीरका कोई अवयव कट जाय, जलतत्त्वसे शरीर गीला हो जाय और अग्नितत्त्वसे जलकर शरीरमें फोले पड़ जायँ, अथवा शरीरकी बहुतसी त्वचा जलकर मांस भी दीखने लग जाय, ऐसे स्वप्नमें भास भी हो गया हो, तो भी दृश्य स्थूलाकार पृथ्वी, जल और अग्नि—ये तीनों तत्त्वोंके स्पर्शोंका परिणाम जाग्रत् अवस्थामें किसीको कुछ भी देखनेमें नहीं आता है। परन्तु स्वप्नमें अदृश्य सूक्ष्माकार विशेष वायुतत्त्वयुक्त स्पर्श और शब्द

ये दो स्पर्श विषयोंका परिणाम जाग्रत्में प्रत्यक्ष प्रतीत हो जाता है। जैसे स्वप्नमें वासनामय स्त्रीसे मैथुनकर्म करनेसे वीर्य गिरकर जाग्रत्की धोती गिली हो जाती है। और चोर, बाघ, साँपादि-कोंके डरसे स्वप्नमें चिल्लाते हुए आवाज—जाग्रत्के मुँहसे निकलके बहुतसे मनुष्योंके घबराहट शब्द सुनाई देते हैं।

इसमें निर्णयसे यह सिद्ध हुआ कि, जगत्के पाँच विषयोंमें अल्पकाल तक स्थिर रहनेवाला स्त्रीके साथ मैथुन कर्मका स्पर्श विषय सुख खानिकी कलारूप मुख्य बन्धन हैं। और मनुष्योंका दृढ़ माननारूप आत्मा, ब्रह्म और ईश्वर, अर्थात् विशेष कालतक स्थित वृत्तिसे होनेवाले सुखका सूक्ष्म अहंकाररूप अध्यास सोई व्यापक शुद्ध आत्मा है। स्थिर वृत्तिका विशेष आनन्द सोई ब्रह्म है। और सुखके लिये इच्छाशक्तिसे कर्मरूप पुरुषार्थ करना, सोई ईश्वर है। ऐसे अध्यास, आनन्द और कर्म—ये तीनों वाणीकी कलारूप मुख्य बन्धन हैं। खानिमें स्पर्शका अध्यास और वाणीमें शब्दका अध्यास विशेषरूपसे बन्धन है, उसे परख के मिटाना चाहिये।

अनादि तत्त्वोंका देहमें मुख्य स्थान ॥ २० ॥

१. पृथ्वीतत्त्वका देहमें मुख्य स्थान कलेजा है ❀। मुख द्वार है। अन्न-जलके आहारसे रक्त और मांस बनकर कलेजा

❀ दोहाः—पृथ्वी कलेजा वास है, मुखको जानिये द्वार।
पीला रंग है अवनिको, पीवन खान अहार॥

पुष्ट रहता है ।

२. जलतत्त्वका देहमें मुख्य स्थान कपालके भीतर है। वहाँ ही अन्न-जलके सेवनसे स्त्रियों और पुरुषोंका 'रज' और 'वीर्य' रूप मुख्य जल जमा रहता है ❀। किसी मनुष्यादि जीवकी मृत्यु हुये बाद सूक्ष्म देहयुक्त वह जीव वायुद्वारा पुरुषके वीर्यमें जाके ठहरता है। फिर स्त्री-पुरुषके सम्भोग समय दोनोंका वह कपाल-का द्वार खुलके पीठके मध्य नलीद्वारा वीर्य उतरके स्त्रीके योनिमें प्रवेश होकर, रजका संयोग करके गर्भाशयमें नौ महीने तक देह बनकर, बालकरूपसे पुत्र और पुत्री जन्म लेते हैं। स्त्रीका रज योनिमें प्रथम उतरा, तो पुत्रीकी देह और पुरुषका वीर्य स्त्रीके योनिमें प्रथम उतरा, तो पुत्रकी देह बन जाती है। ऐसा गुरुवा लोगोंने-अनुमानसे मान रखा है। परन्तु वास्तवमें कर्माध्यास विशेषसे ही जीव गर्भमें जाता है, संस्कारके अनुसार पुरुष या स्त्रीका देह जीव धारण करता है। ऐसा यथार्थ जानना चाहिये।

३. तेजतत्त्वका देहमें मुख्य स्थान हृदयके दहिने ओर छोटीसी, लम्बी पित्तकी † नलीके जगहपर है । द्वार नेत्र हैं। पित्तसे ही नेत्रोंको तेज पहुँचता है। और देहमें दूसरा तेजतत्त्वका

❀ दोहाः—जलके वासा भाल है, लिंग जानिये द्वार।
मैथुन कर्म अहार है, रंग सफेद निहार॥

† पित्तेमें पावक रहै, नैन जानिये द्वार।
लाल रंग है अग्निको, लोभ औ मोह अहार॥

मुख्य स्थान नाभिमें, जहाँ पर जव प्रमाण जठराग्नि है। जिससे लेह्य (चाटनेके पदार्थ), पेय (पीनेके पदार्थ), खाद्य (हाथसे उठायके खानेके पदार्थ), और चोष्य (चूसनेके पदार्थ), ये चार प्रकारके अन्न और जल हजम हो जाते हैं।

४. वायुतत्त्वका देहमें मुख्य स्थान नाभि है ❀। जहाँ देह भरके सर्व नाड़ियोंकी गाँठ लगी है। द्वार नाक है। जहाँसे सुगन्ध और दुर्गन्ध मालूम हो जाती है।

५. आकाशतत्त्वरूप समान पवनका देहमें मुख्य स्थान मस्तकमेंका ब्रह्मरन्ध्र (भ्रमरगुफा) है। योगीजन वहाँपर सर्व शरीर भरके चञ्चल गतिवान् वायु समानरूपसे स्थिर करके अनेक प्रकारके अनहद सूक्ष्म ध्वनियोंको सुनते हैं। अथवा कानके छेद अङ्गुलियोंसे बन्द करके वैसी ही अनहद ध्वनियाँ सबको सुनाई देती हैं।

अनादि तत्त्वोंका परस्पर वैर ॥ २१ ॥

१. अनन्त छिद्ररूप आकाशतत्त्व पिंड-ब्रह्मांडमें जहाँ-तहाँ एकदेशी, अक्रिय और स्थिर है।

२. तैसे ही भूगोलपिण्डरूप पृथ्वी मुख्य पृथ्वीतत्त्वरूपसे यद्यपि सदोदित गिरे हुये चाकवत् आगे-आगे चलनेवाली क्रियावान् है, तथापि जहाँ है, वहाँ तैसी ही स्थिर है।

❀ दोहाः—पवन नाभिमें रहत है, नासा जानिये द्वार।
हरा रंग है वायुको, गन्ध सुगन्ध अहार॥

३. अन्य जल, तेज और वायु ये तीनों तत्त्व सदोदित क्रियावान् रहनेसे तिनमें परस्पर वैर रहता है। ब्रह्माण्डमें कभी जलतत्त्व विशेष बढ़ा ही चला जाता है, तब तेज और वायु ये दोनों तत्त्वोंका जोर घटके तिनका वैरी जल तत्त्व बन जाता है। जैसे बहुत दिनों तक जलकी झड़ी लग जाना; नदियोंका विशेष बाढ आ जाना; गाँवों, पदार्थों, मनुष्यादि जीवोंको जल बहाय ले जाना; पत्थर (ओले), पाला, ओस गिरना; कुहिरें या विशेष ठण्ड बढ़ जाना इत्यादि अनेक जल बढ़नेका कार्य होते हैं।

४. ब्रह्माण्डमें तेजतत्त्व विशेष बढ़ गया कि, जल और वायु ये दो तत्त्वोंका वह वैरी बन जाता है। जैसे गरमीके दिनोंमें लूका (अङ्गारवत् गर्म वायु) रात-दिन चलने लगना, ज्वालामुखी पहाड़ोंसे बहुत दूर तक अग्नि उड़कर वहाँके सर्व पदार्थ जल जाना, बिजलियाँ गिरना इत्यादि होता है।

५. ब्रह्माण्डमें चञ्चल वायु तत्त्व विशेष बढ़ गया कि, तेज और जल ये दो तत्त्वोंका वह वैरी बन जाता है। जैसे तुफानी हवा या आँधी हवा, चलना; पवनसे बड़े-बड़े बद्दल बनके विशेष गर्ज हुआ करना, बिजलियाँ गिरना इत्यादि होता है।

६. पिण्डरूप देहमें कफ, पित्त और वात ये ही क्रमसे जल, तेज, और वायुतत्त्व हैं। जब वे समभावसे देहमें बराबर रहते, तब देहोंमें जीवोंको सुख होता रहता है। और यदि वात और

पित्त दबके कफ बढ़ जाय, या वात और कफ दबके पित्त बढ़ जाय, अथवा कफ और पित्त दबके वात बढ़ जाय, तो देहोंमें जीवोंको दुःख होता रहता है। जब कफ, पित्त और वात तीनों एकत्र हो जाते हैं; तब त्रिदोष या सन्निपात होकर देह छूट जाती है, अर्थात् मृत्यु प्राप्त होती है।

पूर्वोक्त क्रियावान् तीन तत्त्वोंमें जलतत्त्व सोई ब्रह्मा, उत्पन्न करनेवाला है। तेजतत्त्व सोई विष्णु, पालन करनेवाला है। और वायुतत्त्व सोई महादेव, नाश करनेवाला है; ऐसा गुरुवा लोगोंने माने हैं।

पाँच तत्त्वोंको उत्पत्ति क्यों मानी गई ? ॥ २२ ॥

१. ज्ञानसरोदा (स्वरोदय ज्ञान) जाननेवाले नासिकाके बाँये छिद्रद्वारा चलनेवाली श्वासवायुको इडा वा इङ्गला नाड़ी कहते हैं और नासिकाके दहिने छिद्रद्वारा चलनेवाली श्वास-वायुको पिङ्गला नाड़ी कहते हैं। ये दोनों नाड़ियाँ अढ़ाई घड़ियोंमें वा एक घण्टेमें सदोदित दिन-रात्रिमें उलट-पलट बदलती रहतीं; और सुषुम्ना नाड़ी (स्थिर पवन) दोनों श्वास बदलनेके समय पाँच मिनिट चलती है; ऐसा स्वरोदयके साधकोंने सिद्ध किये हैं। इसमें स्थिर पवनरूप आकाशतत्त्वकी उत्पत्ति नासिकाके भीतर-भीतर श्वास चलनेको मानकर, आकाश निराकार, अदृश्य रहते भी भ्रमसे उसका दृश्य काला या विचित्र रङ्ग ठहराये हैं। फिर श्वासवायु नासिकाके बाहर आठ अङ्गुल

चलनेको वायुतत्त्वकी उत्पत्ति ठहराय, उसका हरा या नीला रङ्ग ठहराये हैं। फिर श्वासवायु नासिकाके बाहर चार अङ्गुल चलनेको अग्नितत्त्वकी उत्पत्ति ठहराय, उसका लाल रङ्ग ठहराये हैं। फिर श्वासवायु नासिकाके बाहर १६ अङ्गुल नाभि तक चलनेको जलतत्त्वकी उत्पत्ति ठहराय, उसका सफेद रङ्ग ठहराये हैं। फिर श्वासवायु नासिकाके बाहर १२ अङ्गुल चलनेको पृथ्वीतत्त्वकी उत्पत्ति ठहराय, उसका पीला रङ्ग सिद्ध किये हैं। इस प्रकारसे क्रमसे आकाशादि पाँच तत्त्वोंकी उत्पत्ति श्वासवायुमें कल्पनासे मानकर, स्वरोदयज्ञान जानने वालोंने ब्रह्माण्डके पाँच तत्त्वोंके उत्पत्तिकी, भी मिथ्या कल्पना किये हैं। सो गुरुवा लोगोंका धोखा भ्रममात्र है।

२. ॐकाररूप ब्रह्म माननेवाले ब्रह्मज्ञानी प्राण वायुका मुख्य स्थान मस्तकमें बिन्दुरूप शुद्धब्रह्म आकाशवत् अव्यक्त माने हैं। फिर चञ्चलरूप प्राणवायु मस्तकसे नाभिमें आई, उसे अर्धचन्द्ररूप या वायुरूपसे व्यक्तरूप आदिशक्ति, सबलब्रह्म, ईश्वर या महत्तत्त्व माने हैं। फिर प्राणवायु मकाररूपसे हृदयमें आई, उसे तेजतत्त्वरूप महादेव माने हैं। फिर प्राणवायु उकाररूपसे कण्ठमें आई, उसे जलतत्त्वरूप विष्णु माने हैं। फिर प्राणवायु त्रिकुटीमें (दोनों भौंहोंके बीच) आई, तब अकार-रूप ब्रह्मा, सोई पृथ्वीतत्त्वकी उत्पत्ति मानी है। ऐसी बाहर, भीतर श्वासवायु आते–जाते समय पिण्डमें आकाशादि पाँच

तत्त्वोंकी उत्पत्ति और लय श्वास-उच्छ्वासरूप प्राणवायुकी चलन गतिमें मानी गई । और ब्रह्माण्डमें वैसी ही पञ्च तत्त्वोंकी उत्पत्तिकी कल्पना किये हैं, सो मिथ्या है ।

३. योगी जन या सांख्यवादी नासिकामें चलनेवाला इङ्गला कहिये बाँया श्वास और पिङ्गला कहिये दहिना श्वास, ये दोनों श्वास सुषुम्नामें लय करके स्थिर वायुयुक्त तत्त्वोंका प्रकाश या आनन्दरूप निर्विकल्प स्थितिको शुद्धब्रह्म आकाशवत् व्यापक ठहराये हैं । फिर स्फूर्तिरूप सुषुम्ना नाड़ीसे इङ्गला नाड़ी प्रकृतिरूपसे उत्पन्न हुई । फिर पिङ्गला नाड़ी वही पुरुषरूप ईश्वर उत्पन्न हुआ। फिर पुरुष और प्रकृति दोनों मिलकर ब्रह्माण्डरूप आकाशादि पाँच तत्त्वोंका सब संसार उत्पन्न हुआ, ऐसा कल्पनासे मान लिये हैं। सोई गाफिली भ्रम है ।

इस प्रकारसे अनादि कारणरूप पाँच तत्त्वोंका कार्य यह पिण्डरूप देह अपने पास रहते ही प्राणवायु वा श्वासवायुकी सामान्यरूपसे स्थिरता और विशेषरूपसे चञ्चलता देहमें देखकर ब्रह्माण्डमें पाँच तत्त्वोंकी उत्पत्ति मानी गई, वह केवल कल्पना मात्र है वा अनुमान धोखा मात्र है ।

४. यद्यपि वेदके तैत्तिरीय उपनिषद्में परमात्मासे आकाश और आकाशसे एकके पीछे एक (क्रमसे) वायु, तेज, जल और पृथ्वी- ये चारों तत्त्व उत्पन्न हुए, ऐसा लिखा है । तथापि परमात्मा चेतन पुरुष सर्वत्र व्यापक अकर्ता, निरीच्छ, निर्गुण,

निराकार ठहराये हैं। आपसे जड़, निराकार आकाशतत्त्व और सूक्ष्माकार और स्थूलाकार अन्य वायु आदि चारों जड़ तत्त्व उससे क्रमसे उत्पन्न होना, असम्भव दोषयुक्त कथन है। सो मानने योग्य नहीं। क्योंकि—

५. आकाश निराकार पोलस्वरूप है, तिससे सूक्ष्माकार त्वचासे स्पर्शद्वारा जानने योग्य वायुतत्त्वकी उत्पत्ति मानना असम्भव है। सूक्ष्माकार अदृश्य स्पर्श गुणवाले वायुतत्त्वका कार्य रूप गुणवाले दृश्य साकार तेजतत्त्वकी उत्पत्ति मानना भी असम्भव है। उष्ण धर्मवाले तेजतत्त्वका कार्य शीतरूप समुद्रादि विस्तीर्ण रसगुणवाले जलतत्त्वकी उत्पत्ति कैसी होगी? और शीत धर्मवाले रसरूप जलतत्त्वका कार्य गन्ध गुणवाली अनन्त रजोंके समूहरूप पृथ्वीतत्त्वकी उत्पत्ति कैसी मानना? क्योंकि जलका विशेष स्थूल कार्य बर्फ बनता है। परन्तु मिट्टी-रूप स्थूल पृथ्वी किसीने बनते देखा ही नहीं। इसलिये स्वरूपसे तत्त्वोंकी उत्पत्तिका कथन मिथ्या भ्रम कल्पना ही ठहरती है।

इस प्रकारसे आकाशादि पाँचों जड़तत्त्व उत्पत्ति रहित, कारणरूप, स्वरूपसे अनादि हैं। और पृथ्वी आदि स्थूल–सूक्ष्मा-कार चारों तत्त्वोंके कार्य प्रवाहरूप अनादि हैं। जड़ तत्त्वोंका कर्त्ता कोई भी चेतन पुरुष सिद्ध होता ही नहीं। इसीसे जगत् या संसार कर्त्ता रहित अनादि ही ठहरता है।

पाँच जड़ तत्त्वोंको ईश्वर मानना ॥ २३ ॥

१. पृथ्वी तत्त्वको ईश्वर माननेवाले स्थूलाकार भूगोल पिण्डरूप पृथ्वीको ही ईश्वर माने हैं। तहाँ १ धातु, २ पाषाण, ३ काष्ठ, ४ मिट्टी, ५ काँच, ६ रेती, ७ चित्र वा तसवीर और ८ भीतपर वा पीढ़ापर चन्दनसे लिखी हुई मूर्ति,—ऐसे अष्ट प्रकारसे जड़ प्रतिमारूप पृथ्वीको ही ईश्वर माने हैं। पूजन, अर्चन, बन्दनादि भक्ति भी वही जड़, पृथ्वीरूप कल्पित ईश्वकी करते हैं। इस प्रकारसे पृथ्वी तत्त्वको ही ईश्वर थापे हैं। बिना विचार मिथ्या जड़ भावना करके कल्पनामें भूले पड़े हैं।

२. जलतत्त्वको ईश्वर माननेवाले वीर्यरूप ऐसे भगवान् माने हैं। उसमें स्त्रीसम्भोग विषयानन्दको ही ईश्वर ठहराये हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, अवतारी पुरुष ऋषि, मुनि इत्यादिकोंने सच्चिदानन्द परमात्माका अंश विषयानन्द माना है। कोई समुद्र, गङ्गा, यमुना, सरयू, गोदावरी, आदि नदियाँ विराट्स्वरूप ईश्वरका पसीना कहते हैं, गङ्गादि नदियाँ ईश्वरके पगसे प्रगट हुई, ऐसा जलका महात्म्य फैलाया है। स्नान करनेसे या नदियोंकी परिक्रमा करनेसे मुक्ति मानी है। इस प्रकारसे भ्रमिक हो करके जलतत्त्वको ही मिथ्या कल्पनासे ईश्वर माने हैं।

३. तेज तत्त्वको ईश्वर माननेवाले अग्निकी त्रिकाल पूजा करते हैं, धूनीको अग्निमाता कहते हैं, अग्निकुण्ड बनाय, अग्नि-होत्री उसमें होम—हवन करते हैं,कभी अग्नि बूझने नहीं देते।

कोई जड़ मूर्तियोंका हृदयमें ध्यान करते हैं । वही ध्यानके अन्तमें श्वासमें लच बैठ जानेसे अङ्गुष्ठमात्र बिजुलीवत् मूर्ति दिखाई देती है । उसको भक्तजन ईश्वर ठहराये हैं । योग मार्गसे नाभिमें या मस्तकमें प्राणवायु स्थिर करके जड़ तत्त्वोंका अर्धअङ्गुष्ठ विशेष नील रंगका ज्योति प्रकाश देखकर, उसको परमतत्त्व परमात्मा योगीजनोंने सिद्ध किये हैं । इस प्रकारसे तेज तत्त्वको ही ईश्वर थापे हैं । सो सरासर भ्रम भूल है ।

४. वायुतत्त्वको ईश्वर माननेवाले "वायुः सर्वत्रगोमहान्" अर्थात् वायु सर्वत्र रहके सर्वसे अलिप्त—न्यारी रहती है । तैसा ही ईश्वर सर्वमें व्यापक, परन्तु सबसे न्यारा ठहराये हैं । श्वास-रूप वायुमें सोऽहं और राम ये दो अक्षरोंकी कल्पना करके उसमें सुरति समाय देते हैं । फिर मनकी स्थिरतासे जो आनन्द होता है, उसी आनन्दको ईश्वर माने हैं । मुसलमान लोग वही श्वासवायुको खुदाका दम वा नूर मानते हैं । इस प्रकारसे वायु तत्त्वको ही ईश्वर थापे हैं । सो धोखामें ही भूले पड़े हैं ।

५. आकाशतत्त्वरूप समानवायुको ईश्वर माननेवाले "ॐमित्येकाक्षरं ब्रह्म" अर्थात् ॐ शब्द ईश्वर वाचक कहते हैं । अकार, उकार, मकार, अर्धमात्रा और बिन्दु—ऐसी पाँच मात्रा मिलके एक ॐकाररूप ईश्वर माना है । ब्रह्माण्डमें पृथ्वी अकार ब्रह्मा, जल उकार विष्णु, तेज मकार महादेव, वायु अर्धमात्रारूप आदिमाया और बिन्दु केवल शून्य वा पोलाकार आकाश

सोई निरञ्जन परमात्मा है । ऐसी पाँच मात्रा मिलके ॐकाररूप परमात्मा आकाशवत् सर्वत्र समानरूपसे व्यापक माने हैं । और पिण्डरूप देहमें त्रिकुटी, अकार सोई ब्रह्मा; उकार, कण्ठ, विष्णु; मकार, हृदय, महादेव; अर्धमात्रा, नाभि, मूलमाया; और बिन्दु सोई मस्तक, तहाँ निरञ्जन परमात्माका वासा; ऐसी पाँच मात्रा मिलके श्वासरूप चक्रको पिण्डमें ॐकार माने हैं। श्वासवायु स्थिर करके समाधिमें निर्विकल्प स्थिति हुई, महा आनन्द प्रगट हुआ, उसको (शून्य गाफिलीको) सच्चिदानन्द परमात्मा माने हैं । इस प्रकारसे आकाशतत्त्वको ही परमात्मा थापे हैं । सो बिना पारख कल्पनामें जीव जहँड़े हैं ।

इस रीतिसे जगत्में पाँच जड़ तत्त्वोंको ही ईश्वर वा परमात्मा मानते हैं । परन्तु तिसकी कल्पना करनेवाले चैतन्य मनुष्यजीव तिसके भासक हैं, और तत्त्वोंके देहोंमें तिनके सत्तासंयोगसे पाँच जड़ तत्त्वरूप ही ईश्वर भास हो रहा है, ऐसा सत्य विवेक होना चाहिये । अर्थात् भासिकजीव उस भास, कल्पनाओंसे न्यारा ही रहता है; भासिक कभी भास ही नहीं हो सकता है । इसका यथार्थ पारख श्रीसद्गुरुके सत्सङ्ग विचारद्वारा होना चाहिये । पारखबोध होनेपर ही जिज्ञासुओंकी भ्रम, भूल मिटेगी । उसीके लिये सत्पुरुषार्थ करना चाहिये ॥

॥❀॥ इति श्री तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
द्वितीय प्रकरणम् समाप्तम् ॥ २ ॥ ❀ ॥

॥*॥ अथ तृतीय प्रकरण प्रारम्भः ॥३॥*॥

त्रिगुण विवरण ।

क्रियारूप तीनों गुण वर्णन ॥ १ ॥

१. रज, सत्त्व और तम—ये जड़ तत्त्वोंके अनादि क्रियाएँ-रूप तीन गुण हैं। त्रिगुणको ही कहीं प्रकृतिरूप माया वा अज्ञान माने हैं। परन्तु त्रिगुणरूप क्रियाएँ कर्त्ता पदार्थ रहे बिना भिन्न रह ही नहीं सकतीं, जैसी सदोदित क्रियावान् वायु। अर्थात् गुणी, बिना गुणके भिन्न होके रह ही नहीं सकता। तैसे जीव कर्त्ताके आश्रय या देह सम्बन्धसे ही त्रिगुणी क्रियाएँ दिखाई देती हैं।

२. मुख्य पृथ्वी और जलतत्त्व मिलके देह, वृक्ष, पाषाणादि अनेक पदार्थ उत्पन्न होनेवाली रजोगुणी क्रिया है। रजोगुणको ही 'ब्रह्मा' माना है। तेज और वायु ये मुख्य दो तत्त्व मिलके देह, वनस्पति आदिकोंका रक्षणरूप पालन होनेवाली सत्त्वगुणी क्रिया है। सत्त्वगुणको ही 'विष्णु' माना है।

३. स्थिर पवनसे पिण्डकी चञ्चल प्राणवायु और ब्रह्माण्डमें विशेष गतिवान् वायुतत्त्वकी क्रिया समानरूपसे स्थिर होनेवाली तमोगुणी क्रिया है; जैसे सुषुप्ति अवस्था, मूर्छा, समाधि, और

स्थिरपवन समय सर्व क्रियाओंकी स्थिरता। और तमोगुणको ही 'महादेव' माना है।

४. मनुष्यादि चेतन जीवोंकी इच्छारूप सत्ताओंसे रजोगुणी, सत्त्वगुणी और तमोगुणी क्रियाएँ देहसम्बन्धसे हुआ करती हैं। तिनमें:—

५. रजोगुण—कर्ममार्ग है। उसमें चार वर्ण, चार आश्रमोंके कर्म, पेटपालनके शब्दादि पाँच विषयोंके कर्म, नाम, जाति, पाँति, कुल, मान, मर्य्यादादि जगत् प्रपञ्चके कर्म, स्त्री—सम्भोगादि खान, पान, ऐश—आरामके अनेक कर्म जहाँ हो रहे हैं, वे सब 'रजोगुणके' कर्म हैं।

६. सत्त्वगुण—सर्व ज्ञान प्राप्तिके कर्म हैं। उसमें कृमि, कीट, गौवें, कुत्तें, कौवें आदि पशु, पक्षी, अङ्गहीन मनुष्य, ब्राह्मण, साधु, अतिथि, अभ्यागतादि मनुष्य और मुख्य श्री सद्गुरुकी चित्त शुद्धिके लिये सर्व प्रकारकी चेतन सेवा है। जैसे अन्न, जल, पात्र, वस्त्र, तृण, पत्र, फूल, फल, द्रव्यादिकोंसे यथाशक्ति दयायुक्त दानरूपसे परोपकार करना। और भक्तियुक्त सत्सङ्गमें प्रेम, ज्ञान प्राप्तिके लिये सत्यज्ञान ग्रन्थोंका पठन—पाठन, इन्द्रियजीत निर्विषय होना; स्त्रीसङ्ग रहित, आसन दृढ़ रखना, भजन, पूजन, विवेक, विचार, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षात्कार इत्यादि अनेक साधनोंके सब कर्म सद्गुणआदि सत्त्वगुणके हैं।

७. तमोगुण—सर्व उन्मत्त और तामसी कर्म हैं। उसमें

पशु पक्षीवत् मांसभक्षण, मदिरा, गाँजा, भाँग, अफीम, तमाकू आदि अमली पदार्थोंका सेवन, बहुत निद्रा और आलस्य, चोरी जुआरीमें प्रीति, कोई जीवकी हत्या—घात करने, कसाईपना, मारपीटके किसीको दुःख देने, शस्त्र बाँधकर रणमें युद्ध करके मरने—मारनेको नहीं डरने, मल्लयुद्ध करने, शोकमें व्याकुल होने, क्रोध करने, चिन्तादि सब कर्म—कुकर्म तमोगुणके हैं।

८. पूर्वोक्त रज, सत्त्व और तम ये तीनों गुणके तत्त्वयुक्त परस्पर व्यवहार एकत्र मिले हैं। जहाँ जो तत्त्वोंका गुण विशेष बलवान् होता है, वही दिखाई देता है। रजोगुण और तमोगुण दबे हैं, तब सत्त्वगुण दिखाता है। तमोगुण और सत्त्वगुण दबे हैं, तब रजोगुण दिखाता है। और सत्त्वगुण और रजोगुण दबे हैं, तब तमोगुण दिखाता है।

९. सर्व जड़ तत्त्वोंके कार्य पदार्थ त्रिगुणरूपसे मिले हैं। त्रिगुण ही त्रिपुटीरूप है; वही देहादि जड़ तत्त्वरूप माया है।

१०. त्रिगुणी मायाके मुख्य गुरु ब्रह्मा, विष्णु और महेश हो गये हैं। उन्होंने ही कर्म, उपासना और ब्रह्मज्ञान—ये तीन मार्ग दर्शक त्रिकाण्ड वेद जगत्में प्रसिद्ध किये। और सर्व मनुष्योंको जड़ कर्मरूप वाणीके जालोंमें दृढ़ बाँध दिये। मुख्य श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञान विद्या ठहराये हैं। उसमें परमात्मा जड़—चैतन्य सम—समान एकरूप, सर्वत्र व्यापक ठहराके आप भी जन्म-मरणादि अनेक देह दुःखोंको भोग रहे हैं; और अन्य नरजीवों-

को भी वही ब्रह्मबोध देकर, गुरु–शिष्य सहित सर्व जन जन्म, मरण, गर्भवास– ये दुःसह दुःख और देह धरके दैहिक, दैविक और भौतिक–ये तीन तापोंका दुःख भोग रहे हैं।

१. दैहिक कहिये देहके अनेक रोग और मानसिक चिन्ता, तथा काम, क्रोधादि दुःख होनेका हैं।

२. दैविक कहिये कारण बिना दुःख होने, जैसे–दुष्काल पड़ने; बिजली, ओले, गिरने; घर, वृक्षादि टूटके अङ्ग पर गिरने इत्यादि दुःख जो होते हैं, सो दैविकताप है।

३. भौतिक कहिये छोटे-बड़े सर्व देहधारी चेतनजीवोंसे काया, वाचा, मनयुक्त परस्पर अनेक दुःख होनेके हैं। ऐसे अनेक दुःख मनुष्यादि देहधारी सर्व जीव अध्यास वश भोग रहे हैं।

पूर्वोक्त नाशवान् त्रिगुणरूप जड़ तत्त्वोंकी क्रियाओंकी आसक्ति श्रीसद्गुरु पारखी सन्तोंकी सत्सङ्गसे दूर करना चाहिये। और प्रारब्ध व्यवहारमात्र आवश्यकीय अन्न, वस्त्रादि उदासीन कर्मोंको छोडकर, और पाप–पुण्य कर्मोंके अध्यास रहित मनुष्यकी शुद्ध चाल–चलनयुक्त जिज्ञासु मनुष्योंने जीवन्मुक्त हो जाना चाहिये। तब देहान्तके पीछे विदेह मुक्तिमें मनुष्यरूप हंसजीव शान्त, स्थिर सदैवके लिये रह जावेंगे, उसीको बनाना चाहिये। यही मनुष्य जीवनका मुख्य कर्तव्य है॥

॥❀॥ इति श्री तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे–
तृतीय प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ३ ॥❀॥

॥*॥ अथ चतुर्थ प्रकरण प्रारम्भः ॥४॥*॥

चेतनजीवोंके गुण लक्षण वर्णन।

चेतनजीवोंकी देहयुक्त उत्पत्ति और अमरता कथन ॥ १ ॥

मनुष्य, पशु, अण्डज और उष्मज—ये चार खानियोंमें अनन्त चेतनजीव स्वरूपसे अनादि हैं। मनुष्य, पशु और अण्डज—ये तीन खानियोंमें माताओं और पिताओंके द्वारा रज-वीर्यके सम्बन्धसे और मैथुनोंके स्पर्श विषयद्वारा तिनके शरीर उत्पन्न होते हैं। देहधारी जीवोंकी मृत्युबाद वे वासनावश सूक्ष्मदेह सहित प्रथम पुरुषोंके वीर्यमें आकर ठहर रहते हैं। फिर मैथुन समय स्त्रियोंके योनियोंद्वारा गर्भोंमें तिनके देहोंरूप पिण्डोंके आकार बन जाते हैं। उष्मज खानिमें माता-पिताके बिना सूक्ष्मदेह सहित जड़ तत्त्वयुक्त गन्ध, रस, रूप और शब्द विषयोंके सम्बन्धद्वारा तिनके शरीर प्रथम आप ही आप अण्डाकार बनकर, फिर वे स्थूलदेहयुक्त तिनमेंसे प्रकट हो जाते हैं। मुख्य पृथ्वीतत्त्वयुक्त सुगन्ध और दुर्गन्धमें अर्थात् नरक, मूत्र, सड़े पदार्थ, सुगन्धी फूल, बचनाग, सूखे लकड़ इत्यादिकोंमें जन्म लेनेवाले कृमि-कीटादि जीव हैं। फल, जलादि मुख्य जल तत्त्वयुक्त रसमें जन्म लेनेवाले कृमि आदि जीव हैं। मुख्य

तेजतत्त्वके उष्णतारूप रूपविषय द्वारा सर्व अनाजोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव हैं। और मेण्डक, जोंकादि मृग नामक नक्षत्रके बड़ी गर्जरूप मुख्य वायुतत्त्वयुक्त वासनावश शब्दद्वारा उत्पन्न होनेवाले जीव हैं। और उद्भिज कहिये अंकुरज अर्थात् वृक्ष, बेल, तृणादि, वनस्पति और स्थावर खानि पाषाणादि अनेक जड़ निर्जीव पदार्थ हैं। तहाँ पृथ्वी आदि चार तत्त्वोंके अनेक सूक्ष्म-सूक्ष्म त्रसरेणुओं, अणुओं और परमाणुओंके मिलापसे तिनके स्थूल आकार बन जाते हैं। इसलिये वे अजीव (जड़) हैं; वे ही ज्ञानगुणयुक्त चेतनजीव नहीं हैं। जहाँ—

१. 'इच्छाशक्ति'; और तिससे भिन्न-भिन्न अनेक—

२. 'क्रियाएँ'; जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति ये तीन—

३. 'अवस्थाएँ'; पाँच विषय नाना पदार्थ सुख-दुःख इत्यादि जाननेका—

४. 'ज्ञान'; और—

५. 'अमरता'; ये पाँच गुण दिखाते हैं, तहाँ ही देहधारी चेतन जीवोंका निवाश है। उक्त पाँचों गुणरहित सर्व वृक्ष, पाषाण इत्यादि पदार्थ जड़ तत्त्वोंके कार्य हैं। अन्तमें वे अपने-अपने अनादि कारणरूप तत्त्वोंमें लयरूपसे नाश हो जावेंगे।

चेतनजीवोंको अमर कहनेका कारण ऐसा है कि, जाग्रत् और स्वप्न अवस्थामें तो क्रियायुक्त मनुष्योंको अपनी प्रतीति बनी ही रहती है। तैसे ही सुषुप्तिमें भी हृदयमें स्थिर वृत्ति

रहनेसे विशेष आनन्दके स्मृतिका भावरूप ज्ञान, और देहादि जगत्के पदार्थोंका अभावरूप ज्ञान, ये दो ज्ञानोंकी मनुष्योंको जागृतिमें स्मृति बनी रहती है। इसी सबब (हेतु) उक्त तीनों अवस्थाओंमें चेतन जीव अमर अविनाशी वा किसीके कार्य रहित नित्य हैं। अथवा वर्तमान कालमें देहोंमें अनेक क्रियावान् सर्व जीव प्रत्यक्ष ही हैं। नरदेहादि मनुष्य खानियोंमें प्रथम दिनके जन्मे हुए बालकोंमें भी पशुओंके आहार, निद्रा, भय, मैथुन—ये चार लक्षणोंके संस्कार मालूम होते हैं।

१. माताओंके स्तन चूसनेका ज्ञान रहनेसे 'आहारका ज्ञान' इनमें है।

२. 'निद्रा' लेते ही हैं।

३. कोई बन्दूकादिकी बड़े आवाज किये वा बड़ा शब्द होवे, तो वे चमक उठते हैं, इसलिये तिनमें 'भय' है।

४. तिनकी लिंग इन्द्री सीधी वा खड़ी हो जाती है, या बकरोंके छोटे-छोटे बच्चे एकपर-एक मैथुनकर्मवत् चढ़ जाते हैं, इसलिये 'मैथुन' कर्मका संस्कार भी तिनमें है। अथवा रज, सत्त्व और तम—ऐसे भिन्न-भिन्न गुणवाले तथा दरिद्री, धनवान्, मन्दबुद्धि, तेजबुद्धि, रागी, वैराग्यवानादि अनेक प्रकारके मनुष्य दीखते हैं। इसलिये हम भूतकालमें देहयुक्त जन्म लिये थे, और आगे भी वासनावश सूक्ष्म देहयुक्त फिर स्थूल देह धरेंगे। इस हेतु भूत, वर्तमान और भविष्यत् ये तीनों कालोंमें सर्व चेतन

जीव अनादि अमर हैं, ऐसा जानना चाहिये । इस प्रकार त्रय-कालोंमें जीव नित्य अमर चेतन स्वरूप हैं, ऐसा जानिये ॥

चेतन जीवोंके आकार ॥ २ ॥

चार खानियोंके अनन्त देहधारी चेतनजीव ज्ञानाकार सर्वके जाननहार साक्षी वा दृष्ट (दृश्य) जड़से न्यारे हैं; तिनको साकार वा निराकार कहना नहीं बनता। क्योंकि—पृथ्वी, जल, तेज और वायु—ये चार जड़ तत्त्व 'स्थूलाकार' और 'सूक्ष्माकार' हैं। तथा तिन तत्त्वोंके और तिनके कार्ययुक्त पदार्थोंमें अनन्त छिद्ररूपसे 'शून्याकार वा निराकार' या आकाशतत्त्व एकदेशी आप ही रहा है। ऐसा पूर्वमें वर्णन हुआ है । इसलिये पाँच जड़ तत्त्ववत् साकार या निराकार रहित, सर्व चेतन जीव तिनसे भिन्न जातिवाले रहनेसे शुद्ध 'ज्ञानाकार' स्वरूप या सबोंके साक्षी वा द्रष्टा अनन्त एकदेशी ही हैं । क्योंकि वे किसीके कार्य रहित अखण्ड अनेक ही हैं। जड़ाकारसे भिन्न चेतन जीव 'ज्ञानाकार अर्थात् ज्ञानस्वरूप साकार' हैं, ऐसा जानना चाहिये॥

चेतनजीवोंका देहसम्बन्ध ॥ ३ ॥

जड़ देहोंका और चेतन जीवोंका घनिष्ठ संयोगसंबंध नहीं। क्योंकि संयोग और वियोग सूक्ष्माकार और स्थूलाकार साकार पदार्थोंका ही होता रहता है। सर्व चेतनजीव वासनावश सूक्ष्म देहोंयुक्त फिर स्थूल देहोंको धारण करते हैं। इसलिये देहोंका और जीवोंका संयोग सम्बन्ध माना जाता है। परन्तु चेतनजीव

स्वरूपसे जड़ तत्त्वके तद्वत् साकार या निराकार रहित ज्ञान-स्वरूप (ज्ञानाकार) अनन्त हैं । इसलिये देहोंका और जीवोंका संयोगसम्बन्ध कहना नहीं बनता ।

दूसरा—चेतनजीवोंका और जड़देहोंका समवायसम्बन्ध, तादात्म्यसम्बन्ध, नित्यसम्बन्ध वा स्वरूपसम्बन्ध भी नहीं । क्योंकि समवायसम्बन्ध गुण-गुणीका, धर्म-धर्मीका होता है; जैसे पृथ्वी गुणी और गन्ध उसका गुण, जल धर्मी और शीत उसका धर्म है ।

इस हेतु अनन्त, चार खानियोंके चेतनजीवोंका और अनन्त, जड़ विजाति देहोंका 'जड़ासक्तिरूप' या विषयानन्दादि सुखोंके सूक्ष्म 'अहङ्कार' वा 'अध्यासरूप' अथवा नाशवान् देहोंको दृढ़तासे सत्यमाननारूप 'मानन्दी मात्र सम्बन्ध' हैं । भूल वा भ्रमसे अनादि प्रवाहरूप कालसे सर्व चेतनजीव देहोंको मानते ही चले आते हैं । इसीसे वासनावश सूक्ष्म और स्थूल देहोंकी अदलाबदल वा फेरफार तिनका होता ही रहता है। वह अध्यास वा जड़ासक्तिरूप अज्ञानको पारखी श्रीसद्गुरुके पारखदृष्टिको दृढ़तासे ग्रहण करके देह रहते ही मिटाना चाहिये । तब मनुष्यरूप जिज्ञासु हंस जीवन्मुक्त हो सकते हैं ।

चेतनजीवोंमें धर्म वा गुण ॥ ४ ॥

अनन्त चेतनजीवोंमें ज्ञानधर्म वा ज्ञानगुण समवाय सम्बन्धसे, या स्वरूपसम्बन्धसे नित्य है । ज्ञानको ही पारख,

समझ, बोध या स्वयंप्रकाश कहते हैं। ज्ञानस्वरूप और चेतन-जीव कहनेको दो नाम है, परन्तु स्वरूपसे एक ही पदार्थ है। जैसे अग्नि और अग्निका धर्म वा गुण उष्णता कहनेको दो नाम है, परन्तु स्वरूपसे वस्तु एक है। चार खानियोंके सर्व चेतनजीवोंमें आहार, निद्रा, भय, मैथुन—ये चार पशुधर्म जानने-का गुण है, परन्तु उष्मज खानिमें मैथुन धर्म नहीं। और तिनमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय ये देहविकार प्रगट होते हैं। तथा सुख—दुःखादि जाननेका गुण भी है। परन्तु नरदेही वा मनुष्य खानीके चेतनजीवोंमें उक्त गुण रहकर, तिनकी बुद्धि विशेष बलवान् रहनेसे अनेक विद्याएँ, नाना कलाएँ, नाना प्रकार-की चतुराई इत्यादि प्रगट करनेका 'ज्ञान' और 'स्मृतिज्ञान' तिनमें विशेष है। इसलिये नरदेहधारी चेतनजीव ही देहोंके सर्व जड़ाध्यास बन्धनरहित जीवन्मुक्त हो सकते हैं, उसे बनाना चाहिये।

चेतनजीवोंमें शक्तियाँ ॥ ५ ॥

मनुष्यादि चार खानियोंके चेतनजीवोंमें 'इच्छाशक्ति' अन्न—जलकी 'बलरूप शक्ति' और पूर्वके कर्मसंस्कारसे घड़ीको कुञ्जी दिये प्रमाण आयुकी गतिरूप 'प्राणवायुकी चलनशक्ति'—ये तीन शक्तियाँ मुख्य हैं। तिनमें अन्न—जल सेवनकी बलरूप शक्ति और आयुकी गतिरूप प्राणवायुकी चलनशक्ति ये दो शक्तियाँ देहके साथ सबकी आपही छूट जाती हैं। परन्तु शब्दादि पाँच विषयोंसे होते हुये आनन्दोंके सूक्ष्म अहङ्कार

(अध्यास) रहनेसे ही तिन विषयसुखोंके लिये नरदेहधारी सर्व चेतनजीव बारम्बार इच्छाशक्ति, स्फूर्ति वा सङ्कल्प करके नाना कर्म किया करते हैं। तिनमें अल्प सुख और विशेष दुःख वे भोग रहे हैं । वह इच्छाशक्ति न चेतनजीवोंमें है, न जड़ शरीरोंमें है। परन्तु जड़ाध्यासवश मनुष्यादि सर्व चेतनजीव रहनेसे जड़ देहें और चेतनजीवोंके सम्बन्धोंमें है । इसलिये इच्छाशक्ति जड़तत्त्वोंकी ही रहनेसे पारखी गुरुरूप श्रीसद्गुरुकी कृपासे और सत्सङ्गसे छूटकर जिज्ञासु नरजीव अध्यास रहित हो जीवन्मुक्त हो सकते हैं, उसीको बनाना चाहिये ।

चेतनजीवोंमें क्रियाएँ ॥ ६ ॥

नरदेहधारी आदि चार खानियोंके चेतनजीवोंमें चलना, बोलना, उठना, बैठना, आवागमनादि अनेक कर्म वा क्रियाएँ हैं। तिनका कारण विषयसुखोंके सूक्ष्म अहङ्काररूप अध्यासयुक्त इच्छाशक्ति तिनके पास सदैव गुप्त रहनेसे हैं। यदि सर्व सुखोंके अध्यास जिज्ञासु मनुष्योंके देह रहते ही जीवन्मुक्त होकर छूट जावैंगे, तो देहरहित विदेहमुक्तिमें सदैवके लिये वे देहोपाधिरहित आप स्वयं ज्ञानस्वरूपसे स्थिर रह जावेंगे। और तिनकी मुख्य इच्छाशक्ति वा मनके सर्व सङ्कल्प मिट जावेंगे । स्वयं अचल, अटल रह जावेंगे ।

चेतनजीवोंमें सुख–दुःख ॥ ७ ॥

नरदेहधारी आदि सर्व चेतनजीवोंमें वृत्ति अन्तःकरणमें वा

245458.
120-H
246

हृदयमें स्थिर रहनेसे अल्प वा बहुत कालतक तिनको सुख भास होते रहते हैं। परन्तु स्थिरवृति चञ्चल होते ही अनेक कर्मोंमें वे नाना दुःख विषयसुखोंकेही लिये उठाते रहते हैं । इसलिये वृत्तिकी स्थिरतासे होनेवाले सर्व सुख, दुःखोंकेबीज हैं। जगत्में विषयानन्द, प्रेमानन्द, योगानन्द, ज्ञानान्द, ब्रह्मानन्दादि सर्व आनन्द दुःखोंके ही बीज रहनेसे नाशवान् हैं। इसी सबब (हेतु) सर्व चेतनजीव सुखस्वरूप नहीं, परन्तु ज्ञानस्वरूप स्वयंप्रकाशी हैं। ऐसा निश्चय करके, सुख कहिये आनन्दरूप ब्रह्म और अनेक दुःख कहिये देहादि जड़ जगत्, ये दोनों अध्यासरूप संस्कार मनुष्योंके छूट सकते हैं। उसको बनाना चाहिये, तब सदैवके लिये जिज्ञासु जन मुक्त हो जावैंगे। वाणी और खानीके संपूर्ण अध्यास छोड़कर पारख बोधकी दृढ़ता होनेपर ही जीवन्मुक्ति स्थिती प्राप्त हो सकती है।

चेतनजीवोंका देहोंमें वास ॥ ८ ॥

विषयसुखोंके जड़ाध्यासवश देहोंके प्रवाहरूप सम्बन्धसे सर्व जीव बिजुलीवत् अति चपल क्रियावान् चञ्चल वृत्तिवाले हो गये हैं । इसलिये जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति—ये तीन अवस्थाओंमें क्रमसे नरदेहधारी आदि चेतनजीवोंका वृत्तिके विशेषरूपसे वास विशेष करके नेत्र, कण्ठ और हृदयमें रहता है। तुरिया अवस्थामें राजयोगियोंका वृत्तिके वास नाभिमें और हठयोगियोंका वृत्तिके वास मस्तकमें रहता है । तुरियातीत

अवस्थावाले परमहंसोंकी विशेष स्थिरवृत्ति रहनेसे देहोंमें वास विशेष करके हृदयमें रहता है। परन्तु वे हम चराचर व्यापक, एक अद्वैत ब्रह्म, अर्थात् जड़ तत्त्वोंके अन्तर-बाहिर सर्वत्र मानने से अपना वास सर्वत्र है, ऐसा निश्चय करते हैं। सारांश जहाँ-जहाँ जड़ाध्यासी, देहधारी चेतनजीव वृत्तिद्वारा लक्ष दृढ़ रखते हैं, तहाँ-तहाँ ही देहोंमें तिनका वृत्तिविशेषकी स्थिति या वास होता रहता है। परन्तु सर्व देहधारी जीवोंका देहोंमें एक कायम-का रहनेका स्थान अन्तःकरण या हृदयहीमें कह सकते हैं। अन्य स्थानोंमें जीव रहता है, कहना बनता नहीं। पारखी जीवन्मुक्त सन्तमात्र हम देहोंसे भिन्न, तथा देहादि सर्व जड़ पदार्थोंके साक्षी, सदैव न्यारे हैं, ऐसा बोधवान् रहनेसे वे विशेष करके अपनी स्वयं पारख दृष्टिमें स्थिर रहते हैं। परन्तु प्रारब्ध-वेगसे तिनका वृत्तिद्वारालक्ष फैल जानेसे देहोंमें भिन्न-भिन्न स्थानोंपर भी वे अपना लक्षद्वारा संरक्षण करते रहते हैं। यानी शुद्ध रीतिसे देहके कार्योंको करते रहते हैं। निज स्वरूप स्थितिमें ही सदा अटल रहते हैं।

चेतनजीवोंके जीव, चेतन, साक्षी, परमहंस वा पारखी सन्त, ऐसे नाम धरनेमें कारण वर्णन ॥ ९ ॥

(१) १ जाग्रत्, २ स्वप्न, ३ सुषुप्ति और १ वर्तमान, २ भूत, ३ भविष्यत्—ये तीनों कालोंमें हम जीव नित्य हैं। ऐसी प्रतीति सर्व मनुष्योंको है; इसलिये सर्व चेतन सदैव जीवित रहनेवाले

ठहरनेसे वे 'जीव" कहाते हैं । १ नर (मनुष्य), २ पशु, ३ अण्डज और ४ उष्मज–ये चारों खानियोंके देहधारी जीव, १ आच्छादन, २ भोजन, ३ मैथुन, ४ भय, ५ निद्रा, और ६ मोह–ये षट् पशु धर्मोंमें जड़ासक्त अज्ञानी बने हैं। और नरदेह-धारी संसारी जन उक्त षट् पशुधर्मोंमें तथा काम, क्रोध, अहङ्कार, आशा, तृष्णादि और स्त्री, पुत्रादि खानिजालोंमें जड़ासक्त अज्ञानी बने हैं । तैसे ही परमार्थी त्यागीजन वेद–शास्त्रादि वाणीके प्रमाणोंसे स्वर्गलोक, यमलोक, जगत्कर्ता–ईश्वर, खुदादि मानकर, उसके प्राप्तिके लिये अनेक कर्मोंके वाणीजालोंमें जड़ासक्त अज्ञानी बने हैं। इस हेतु पारखी सन्तोंने सर्व चेतनोंका "जीव" ऐसा नाम धरा है ।

(२) मनुष्यादि देहधारी सर्व जीव विषय सुखोंके अह-ङ्काररूप अनेक जड़ाध्यास अन्तःकरणमें रखनेसे सुखके ही लिये इच्छा करके, इन्द्रियाँ, प्राण, अन्तःकरण पञ्चकादिकोंको अपनी सत्तारूप शक्ति देकर अनेक व्यवहार करते रहते हैं। अथवा अनेक जड़ पदार्थोंमें नाना प्रकारकी गति, शब्दादि प्रगट करते हैं। और इन्द्रियादिकोंके सत्तासंयोगसे ही तिनमें अनेक पदार्थ, पञ्चविषय, सुख–दुःखादि जाननेका ज्ञान स्वयं सिद्ध है। इस-लिये पारखी सन्तोंने जीवोंका "चेतन" ऐसा नाम धरा है।

(३) देहोपाधिसे अनेक देहाध्यासयुक्त सर्व देहधारी मनुष्यादि जीव साक्षीरूपसे ही बुद्धिद्वारा सर्व पदार्थ सुख, दुःख,

पशुओंके षट् धर्मादि जानते हैं। परन्तु देहरूप मुख्य मायाका मोह और विषयाशक्तिसे अनेक जड़ पदार्थोंको दृढ़ सत्यरूप मानके अज्ञानमें भूले फिरते हैं। इस हेतुसे पारखी सन्तोंने सर्व देहधारी जीवोंके पास जड़ाध्यास रहनेसे तिनका "साक्षी" ऐसा नाम धरा है। परन्तु विदेहमुक्त जीवोंमें जड़ाध्यास और देहसाधन नहीं रहनेसे वे साक्षी नाम रहित 'स्वयंप्रकाशी-शुद्धज्ञानमात्र' रह जाते हैं। और :—

(४) भूत, वर्तमान, भविष्यत्—ये त्रिकालमें 'मैं चैतन्य नरजीव सत्य हूँ'। और देह, तत्त्व, अनेक पदार्थ, ये सब विजाति जड़ हैं; ऐसा जिज्ञासु जनोंको बुद्धिसे प्रथम पक्का निश्चय हो गया है। फिर दया, क्षमा, विवेक, वैराग्यादि शुद्ध गुण—लक्षणयुक्त प्रारब्धमात्र देहव्यवहारमें वे उदासीनतासे पारखदृष्टि एकसम रखते हैं, इस हेतुसे पारखी सन्तोंने ऐसे विवेकी सन्तोंका "परमहंस या पारखीसन्त" ऐसा नाम उपदेश-के लिये धरा है। परन्तु देहसाधनरूप देहोपाधिरहित पारखी सन्तोंका पारखस्वरूप, स्वयंप्रकाशी, ज्ञानमात्र, ऐसा एक ही नाम औरोंके समझानेके लिये कहा जाता है। इस प्रकारसे जीव, चेतन, साक्षी आदिके रहस्यको जान लीजिये॥

॥ ❀ ॥ इति श्री तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
चतुर्थ प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ४ ॥ ❀ ॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥*॥ अथ पञ्चम प्रकरण प्रारम्भः ॥५॥*॥

इन्द्रियाँ–नाडियाँदि वर्णन ।

पञ्च तत्त्वोंकी दश इन्द्रियाँ ॥ १ ॥

१. आकाशतत्त्वरूप समानवायुकी दो इन्द्रियाँ— 'कान' और 'मुख' हैं।

२. वायुतत्त्वरूप चञ्चल वायुकी दो इन्द्रियाँ–'त्वचा' और 'हाथ' हैं।

३. तेजतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ–'नेत्र' और 'पाँव' हैं।

४. जलतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ–'जीभ' और 'लिंग' हैं।

५. पृथ्वीतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ–'नाक' और 'गुदा' हैं।

दश इन्द्रियोंमें पाँच 'राजा' और पाँच 'सेवक' ॥ २ ॥

आकाशतत्त्वरूप समानवायुकी दो इन्द्रियोंमें 'कान-राजा' और 'मुख-सेवक' है। वायुतत्त्वरूप चंचल वायुकी दो इन्द्रियोंमें 'त्वचा-राजा' और 'हाथ-सेवक' हैं। तेजतत्त्वकी दो इन्द्रियोंमें 'नेत्र-राजा' और 'पाँव-सेवक' हैं। जलतत्त्वकी दो इन्द्रियोंमें 'जीभ-राजा' और 'लिंग-सेवक' है। पृथ्वीतत्त्वकी दो इन्द्रियोंमें 'नाक-राजा' और 'गुदा-सेवक' है।

इसीमें १ कान, २ त्वचा, ३ नेत्र, ४ जीभ और ५ नाक,

इन्होंसे पञ्च विषयोंका नरजीवोंको ज्ञान होता है। इसलिये ये पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। १ मुख, २ हाथ, ३ पाँव, ४ लिङ्ग और ५ गुदा,—ये पाँचों इन्द्रियाँ सेवकवत् ज्ञानेन्द्रियोंकी सेवा करते हैं। और ज्ञानेन्द्रियाँ बैठे-बैठे पञ्च विषयोंका स्वाद चेतनजीवकी सत्तासे लेती हैं, इसीसे वे पाँचों कर्मेन्द्रियाँ हैं।

देहमें ब्रह्माण्डकला ३ नाडियाँ ॥ ३ ॥

१. इडा कहिये इङ्गला, २. पिङ्गला और ३. सुषुम्ना,—ये ब्रह्माण्डकलाकी मुख्य ३ नाडियाँ माने हैं।

१. इङ्गला नाडीः— नाकके बायें छिद्रद्वारा बहती हुई वायु है, यह स्त्रीका अंश है; इसको 'चन्द्रनाडी' कहते हैं। इसीमें 'सावित्री' और 'ब्रह्मा' दोनोंका निवासस्थान माना है, यह उत्पत्तिकी नाडी मानी है।

२. पिङ्गलानाडीः— नाकके दहिने छिद्रद्वारा बहती हुई वायु है, यह पुरुषका अंश है; इसको 'सूर्यनाडी' कहते हैं। इसीमें 'लक्ष्मी' और 'विष्णु' दोनोंका निवासस्थान माना है, यह पालनकी नाडी मानी है।

३. सुषुम्नानाडीः— दोनों श्वासवायु भीतर-भीतर और कभी समान चलते हैं, या मस्तकमें स्थिर रहते हैं, उसको कहते हैं। यह नपुंसकका अंश है। यही 'राहुनाडी' चन्द्र-सूर्यका ग्रास करनेवाली मानी है। इसीमें 'महादेव' और 'पार्वती' दोनोंका निवासस्थान माना है। यह प्रलयकी नाडी ठहराये हैं।

इङ्गलानाडीसे श्वास नाकके भीतर खैंचते हैं, वह 'पूरक-क्रिया' है । पिङ्गला नाडीसे श्वास धीरे-धीरे उतारके बाहिर डालते हैं, वह 'रेचकक्रिया' है । दोनों इङ्गला और पिङ्गला नाडियोंका श्वास मस्तकमें छिपायके स्थिर रखते हैं, वह 'कुम्भकक्रिया' है । ये तीनों क्रिया दोनों नासापुटद्वारा उलट-पुलट करनेसे एक 'प्राणायाम' कहलाता है । तिसमें पूरकसे दूना रेचकको और रेचकसे दूना कुम्भकको समय देना, ऐसा कहा है । यह योगका एक अंग है ।

देहमें पिण्डकी कला ३ नाडियाँ ॥ ४ ॥

१ वात, २ पित्त और ३ कफ,—ये पिण्डकी कला मुख्य तीन नाड़ियाँ हैं ।

इसीमें 'वात-महादेव', 'पित्त-विष्णु' और 'कफ-ब्रह्माका' स्थान माना है ।

जौंक, सर्प इनके समान नाडी चलने लगे, तब वातका विकार विशेष बढ़ जाता है । मेण्डक, काग इनके समान नाडी चलने लगे, तब पित्तका विकार विशेष बढ़ जाता है । परेवा, हंस, इनके समान नाडी चलने लगे, तब कफका विकार विशेष बढ जाता है । ऐसी तीनों नाडियोंकी पारख करके उसी माफिक वैद्य दवाई देते हैं । वैद्य लोगोंकी मानन्दी वैद्यक अनुसारसे वात, पित्तादि नाडियोंकी गति ऊपर बताया गया है । ऐसा जानिये ।

देहमें ब्रह्माण्डकी कला ५ वायु ॥ ५ ॥

१ धनञ्जय, २ कृकल, ३ कूर्म, ४ नाग और ५ देवदत्त, ये ब्रह्माण्डकलाके पञ्चवायु हैं।

१. धनञ्जयवायुः—आकाशतत्त्वरूप समान वायुका अंश है। यह योग साधनमें बल देती है। इसीसे मरण बाद देह फूलती है।

२. कृकलवायुः—वायुतत्त्वरूप चञ्चल वायुका अंश है। इससे छींक आती है।

३. कूर्मवायुः—तेजतत्त्वका अंश है। इससे नेत्रोंकी दोनों पलक खुलती और ढकती हैं।

४. नागवायुः—जलतत्त्वका अंश है। इससे डकार या उद्गार आती है।

५. देवदत्तवायुः—पृथ्वीतत्त्वका अंश है। इससे जम्भाई आती है।

पञ्चवायुओंको देवता मानना आदि वर्णन ॥ ६ ॥

१. धनञ्जयवायुः— 'निरंजन परमात्मा' माना है। इससे वेदका 'विज्ञानमार्ग' प्रगटा है, ऐसा मानते हैं। योगीजन इसी वायुसे दश प्रकारकी अनहद ध्वनि मस्तकमें श्वास चढायके सुनते हैं। उसी सूक्ष्म शब्द विषयमें योगी लोग भूले हुये हैं।

२. देवदत्तवायुः—सोई 'माया' मानी है। इससे वेदका 'कर्ममार्ग' प्रगटा है, ऐसा कहते हैं। योगीजन इसी वायुसे

इङ्गलानाडीसे श्वास नाकके भीतर खैंचते हैं, वह 'पूरक-क्रिया' है । पिङ्गला नाडीसे श्वास धीरे-धीरे उतारके बाहिर डालते हैं, वह 'रेचकक्रिया' है। दोनों इङ्गला और पिङ्गला नाडियोंका श्वास मस्तकमें छिपायके स्थिर रखते हैं, वह 'कुम्भकक्रिया' है । ये तीनों क्रिया दोनों नासापुटद्वारा उलट-पुलट करनेसे एक 'प्राणायाम' कहलाता है । तिसमें पूरकसे दूना रेचकको और रेचकसे दूना कुम्भकको समय देना, ऐसा कहा है । यह योगका एक अंग है ।

देहमें पिण्डकी कला ३ नाडियाँ ॥ ४ ॥

१ वात, २ पित्त और ३ कफ,—ये पिण्डकी कला मुख्य तीन नाड़ियाँ हैं ।

इसीमें 'वात-महादेव', 'पित्त-विष्णु' और 'कफ-ब्रह्माका' स्थान माना है ।

जोंक, सर्प इनके समान नाडी चलने लगे, तब वातका विकार विशेष बढ़ जाता है । मेण्डक, काग इनके समान नाडी चलने लगे, तब पित्तका विकार विशेष बढ़ जाता है । परेवा, हंस, इनके समान नाडी चलने लगे, तब कफका विकार विशेष बढ जाता है । ऐसी तीनों नाडियोंकी पारख करके उसी माफिक वैद्य दवाई देते हैं । वैद्य लोगोंकी मानन्दी वैद्यक अनुसारसे वात, पित्तादि नाडियोंकी गति ऊपर बताया गया है । ऐसा जानिये ।

देहमें ब्रह्माण्डकी कला ५ वायु ॥ ५ ॥

१ धनञ्जय, २ कृकल, ३ कूर्म, ४ नाग और ५ देवदत्त, ये ब्रह्माण्डकलाके पञ्चवायु हैं।

१. धनञ्जयवायुः—आकाशतत्त्वरूप समान वायुका अंश है। यह योग साधनमें बल देती है। इसीसे मरण बाद देह फूलती है।

२. कृकलवायुः—वायुतत्त्वरूप चञ्चल वायुका अंश है। इससे छींक आती है।

३. कूर्मवायुः—तेजतत्त्वका अंश है। इससे नेत्रोंकी दोनों पलक खुलती और ढकती हैं।

४. नागवायुः—जलतत्त्वका अंश है। इससे डकार या उद्गार आती है।

५. देवदत्तवायुः—पृथ्वीतत्त्वका अंश है। इससे जम्भाई आतो है।

पञ्चवायुओंको देवता मानना आदि वर्णन ॥ ६ ॥

१. धनञ्जयवायुः— 'निरंजन परमात्मा' माना है। इससे वेदका 'विज्ञानमार्ग' प्रगटा है, ऐसा मानते हैं। योगीजन इसी वायुसे दश प्रकारकी अनहद ध्वनि मस्तकमें श्वास चढायके सुनते हैं। उसी सूक्ष्म शब्द विषयमें योगी लोग भूले हुये हैं।

२. देवदत्तवायुः—सोई 'माया' मानी है। इससे वेदका 'कर्ममार्ग' प्रगटा है, ऐसा कहते हैं। योगीजन इसी वायुसे

सहस्रदलचक्रके सुगन्धमें भँवराके नाईं बनके धुन्द गाफिल पड़े रहते हैं। सोई गन्ध विषयके अध्यासी बनते हैं।

३. कृकलवायुः—सोई 'महादेव' माना है। इससे वेदका 'ज्ञानमार्ग' प्रगटा है, ऐसा मानते हैं। योगीजन मस्तकमें श्वास चढाय, वहाँ कमलका स्पर्शरूप आनन्द भोगते हैं। शून्य वृत्ति करके गरगाफ हो जाते हैं। सोई स्पर्श विषयके अध्यासमें भूले हैं।

४. कूर्मवायुः— सोई 'विष्णु' माना है। इससे वेदका 'उपासनामार्ग' प्रगटा है, ऐसा कहते हैं। योगीजन मस्तकमें ज्योतिप्रकाशरूप कल्पित परमतत्त्व परमात्माको देखते हैं; सो रूप विषयके अध्यासी हुए हैं। सोई तत्त्वोंके प्रकाशको ईश्वर मानके अज्ञान दशामें पड़े हैं।

५. नागवायुः— सोई 'ब्रह्मा' माना है। इससे वेदका 'योगमार्ग' प्रगटा है, ऐसा कहते हैं। योगीजन इसी वायुके आधार से जीभ उलटाय, अमृतपान करते हैं। अर्थात् लाररूपको अमी मानके चाखते हैं। सोई रसविषय है।

यही पाँचों तत्त्वोंका सूक्ष्मविषय अध्यास रहनेसे योगीजन फिर-फिर जन्म-मरणके चक्रमें पड़ते हैं।

देहमें पिण्डकी कला ५ वायु ॥ ७ ॥

१ प्राण, २ व्यान, ३ समान, ४ उदान और ५ अपान— ये पिण्डकी कला पञ्चवायु हैं।

उक्त पञ्च वायुओंके कर्म ॥ ८ ॥

१. प्राणवायुः—सोई निरंजन परमात्मा माने हैं, सो हृदयमें रहता है । इससे रात-दिनमें इक्कीस हजार छः सौ श्वास-उच्छ्वास चलते रहते हैं। ऐसा अनुमान किये हैं।

२. व्यानवायुः—सोई माया (शक्ति) माने हैं। वह सर्व शरीरमें रहके शरीरके सब जोड़ोंको फिराती है।

३. समानवायुः—सोई महादेव माने हैं । नाभिमें रहती है। इसका कर्म नाभिमें कोल्हूवत् अन्न-जलको औटाय, उसका रक्तरूप रस नव नाडियोंद्वारा सर्व शरीरभरके नाडियोंको पहुँचाय देना है। इससे शरीर प्रफुल्लित होता है। यह वायु मालीसमान है। जैसा माली झाडोंको सींचके सर्व झाडोंको हरे प्रफुल्लित रखता है, तैसी ही यह वायु है।

४. उदानवायुः—सोई विष्णु माने हैं। कण्ठमें रहती है। इसका कर्म कण्ठमें नाडियोंद्वारा अन्न-जलको बायें तथा दहिने अङ्गमें पहुँचाय देना, कण्ठमें हितानामक नाडीमें स्वप्न देखाना, कल्पित भ्रमभास आदि प्रतिभास हो जाना है ।

५. अपानवायुः—सोई ब्रह्मा माने हैं । गुदा स्थानमें रहती है। इसका कर्म मल-मूत्रका त्याग कराना है। यह वायु भङ्गीसमान है ।

ऐसी पिण्ड-ब्रह्माण्डकी दश वायु अपने-अपने स्थानमें व्यवहार कर रही हैं। परन्तु सबोंको चेतनजीव भिन्न-भिन्न

देहमें अपनी-अपनी सत्ताएँ दे रहे हैं। नहीं तो सर्व वायु मुर्दावत् जड हैं। अर्थात् सर्व वायु जड़ हैं, जीवकी चेतनशक्ति (सत्ता) पाये बिना कोई कार्य देहोंमें नहीं हो सकती है। ऐसा विचार करके जानिये ! ॥

॥ ❀ ॥ इति श्री तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
पञ्चम प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ५ ॥ ❀ ॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥*॥ अथ षष्ठ प्रकरण प्रारम्भः ॥६॥*॥

स्थूलदेह विवरण ।

पञ्च तत्त्वोंकी २५ प्रकृतियोंकी स्थूल देह ॥ १ ॥

(१) आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी ५ प्रकृतिः– १ काम, २ क्रोध, ३ लोभ, ४ मोह, ५ और भय हैं।

(२) वायुतत्त्वरूप चञ्चल वायुकी पाँच प्रकृतिः– १ चलन, २ बोलन, ३ धावन, ४ प्रसारण और ५ सङ्कोचन हैं।

(३) तेजतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः–१ क्षुधा, २ तृषा, ३ आलस्य, ४ निद्रा और ५ मैथुन हैं।

(४) जलतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः–१ लार, २ रक्त, ३ पसीना, ४ मूत्र और ५ वीर्य हैं।

(५) पृथ्वीतत्त्वकी पांच प्रकृतिः—१ हाड़, २ मांस, ३ त्वचा, ४ नाडी और ५ रोम हैं ।

ऐसे एक-एक तत्त्वके पाँच—पाँच भाग मिलके २५ प्रकृतियों-की स्थूलदेह हुई है ।

स्थूलदेहकी २५ प्रकृतियोंका मिलापरूप पञ्चीकरण ॥ २ ॥

॥ आकाश तत्त्वरूप समान वायुकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥

(१) आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी ५ प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

१. काम—आकाशतत्त्वरूप समानवायु और चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होता है ।

२. क्रोध—आकाशतत्त्वरूप समानवायु और तेजतत्त्व मिलके होता है ।

३. लोभ—❀ आकाशतत्त्वरूप पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों समान वायुतत्त्व मिलके होता है ।

४. मोह—आकाशतत्त्वरूप समानवायु और जलतत्त्व मिलके होता है ।

५. भय—आकाशतत्त्वरूप समानवायु और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है ।

इसीमें आकाशतत्त्वरूप समानवायुका मुख्य विशेष भाग "लोभ" है । और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं ।

❀ पण्डितोंने वेदान्तप्रकरणमें 'लोभ' के जगह 'शोक' प्रकृति माना है ॥

एक भाग पिण्डकला और एक भाग ब्रह्माण्डकलालेके उत्पत्ति कही है ।

चञ्चल वायुतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ३ ॥

(२) वायुतत्त्वकी ५ प्रकृति कही हैं, उसीमें:—

१. चलन—चञ्चल वायुतत्त्व और जलतत्त्व मिलके होता है।

२. बोलन (वलन)—चञ्चल वायुतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके होता है।

३. धावन—पिण्ड-ब्रह्माण्डकी दोनों चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होता है।

४. प्रसारण—चञ्चल वायुतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समानवायु मिलके होता है।

५. संकोचन (आकुंचन)—चञ्चल वायुतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

इसीमें चञ्चल वायुतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "धावन" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

तेजतत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ४ ॥

(३) तेजतत्त्वकी ५ प्रकृति कहे हैं, ❀ उसीमें:—

❀ अन्य ग्रन्थोंमें क्रमशः प्रकृतियोंमें निम्न तत्त्वोंके मिलाप कहा है:—क्षुधा-तेज। तृषा-वायु। आलस्य-पृथ्वी। और मैथुनके जगह 'कान्ति' प्रकृति बताया है। कान्ति-जल। तेजके साथ उक्त तत्त्वोंके मिलाप कहा है॥

१. क्षुधा– तेजतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके लगती है।

२. तृषा– तेजतत्त्व और जलतत्त्व मिलके लगती है।

३. आलस्य–पिण्ड और ब्रह्माण्डके दोनों तेजतत्त्व मिलके आता है।

४. निद्रा– तेजतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके आती है।

५. मैथुन– तेजतत्त्व और चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होता है। इसीमें तेजतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "आलस्य" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

जल तत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ५ ॥

(४) जलतत्त्वकी पाँच प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

१. लार– जलतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु-तत्त्व मिलके होती है।

२. रक्त– जलतत्त्व और चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होता है। ❀

३. पसीना– जलतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके आता है।

४. मूत्र– पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों जलतत्त्व मिलके होता है।

५. वीर्य– जलतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

❀ अन्यत्र क्रमशः निम्न रीतीसे कहा है:— रक्त-पृथ्वी। स्वेद (पसीना)-वायु। मूत्र-तेज। शुक्र-जल। जल और इन तत्त्वोंके मिलापसे उत्पत्ति बताया है॥

इसीमें जलतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "मूत्र" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

पृथ्वी तत्त्वकी प्रकृतियोंका अन्य तत्त्वोंसे मिलाप ॥ ६ ॥

(५) पृथ्वीतत्त्वकी पाँच प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

१. हाड़—पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों पृथ्वीतत्त्व मिलके होते हैं।

२. मांस—पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्व मिलके होता है।

३. त्वचा—पृथ्वीतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके होती है। *

४. नाडी—पृथ्वीतत्त्व और चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होती है।

५. रोम—पृथ्वीतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके होते हैं।

इसीमें पृथ्वी तत्त्वका मुख्य विशेष भाग "हाड़" हैं। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

ऐसी २५ प्रकृतियोंका मिलाप अथवा पञ्चीकरण हुआ है। ऐसा कथन किये हैं। †

---

* त्वचा-वायु। नाडी-तेज। पृथ्वीमें उक्त तत्त्व मिलके उत्पत्ति अन्यत्र कहा है॥

† उपरोक्त पचीस प्रकृतियोंमें पञ्च देवताओंका बासा भी गुरुवा लोगोंने माने हैं। उसका खुलासा-विवरण निम्नलिखित कोष्ठकद्वारा जान लीजिये॥

स्थूल देहकी २५ प्रकृतियोंमें पञ्च देवताओंके बासाका कोष्ठक ॥ ७ ॥

आकाश तत्त्वरूप-समान वायु-की प्रकृति ।	चञ्चल वायु तत्त्वकी प्रकृति ।	तेजतत्त्वकी प्रकृति ।	जलतत्त्वकी प्रकृति ।	पृथ्वीतत्त्वकी प्रकृति ।	पञ्च देवता-ओंका बासा ।
भय	सङ्कोचन (आकुंचन)	निद्रा	वीर्य	हाड	निरञ्जन
मोह	बोलन (वलन)	क्षुधा	रक्त	नाड़ी	माया
क्रोध	धावन	मैथुन	पसीना	रोम	महादेव
काम	चलन	आलस्य	लार	त्वचा	विष्णु
लोभ	पसारन (प्रसारण)	तृषा	मूत्र	मांस	ब्रह्मा

इसीमें आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी प्रकृतियोंमें 'भयमें, निरञ्जन' है।

चञ्चल वायुतत्त्वकी प्रकृतियोंमें 'सङ्कोचन, निरञ्जन' है।

तेजतत्त्वकी प्रकृतियोंमें 'निद्रा, निरञ्जन' है। जलतत्त्वकी प्रकृतियोंमें 'वीर्य, निरञ्जन' है। और पृथ्वीतत्त्वकी प्रकृतियोंमें 'हाड़' निरञ्जन' है। ऐसे सबोंको क्रमसे पढ़ना चाहिये।

ऐसी २५ प्रकृतियोंमें १ निरञ्जन, २ माया, ३ महादेव, ४ विष्णु और ५ ब्रह्मा, ये पञ्च देवताओंका बासा माना है।

स्थूल देहमें दूसरे अष्ट भाग ॥ ८ ॥

१ रजोगुण, २ अकारमात्रा, ३ नेत्रस्थान, ४ विश्व अभिमान, ५ क्रियाशक्ति, ६ स्थूल भोग, ७ वैखरी वाचा और ८ जाग्रत् अवस्था। ऐसे अन्य अष्ट भाग माने हैं।

१. रजोगुण—राग, रङ्ग भोगोंमें प्रवृत्तिका होना, वह रजोगुण है।

२. अकार मात्रा—दोनों भौंहोंके बीचमें त्रिकुटी स्थानमें माना है।

३. नेत्रस्थान— रूप देखनेका साधन नेत्र (आँख) रूपी स्थानसे ही होता है।

४. विश्वअभिमान—विराटरूप सर्व सृष्टिके पदार्थोंका अहं-ममताका अभिमान है।

५. क्रिया शक्ति—अनेक प्रकारकी शारीरिक, और मानसिक

क्रियायें करनेकी शक्ति है ।

६. स्थूलभोग—पञ्च विषयोंका प्रत्यक्ष यथेष्ट उपभोग होना है ।

७. वैखरीवाचा—शङ्का-समाधान करनेकी या नर जीवोंमें एक-दूसरेको कहनेकी (बोलनेकी) वाचा यही वाच्य शक्ति है ।

८. जाग्रत् अवस्था— देखना, सुनना, उपभोग करना, विषय व्यवहार, जगत्कार्यमें प्रवृत्त होनेका समयको 'जाग्रत् अवस्था' कहते हैं ।

ऐसी २५ प्रकृतियाँ और उक्त अष्ट भाग मिलके ३३ कलाओंकी मुख्य स्थूलदेह होती है ।

स्थूलदेहमें दश द्वार ॥ ९ ॥

कानोंके दो छिद्र सोई दो द्वार हैं ।—(२)

नाकके दो छिद्र सोई दो द्वार हैं ।—(४)

नेत्रोंके दो छिद्र सोई दो द्वार हैं ।—(६)

७ मुख, ८ लिङ्ग और ९ गुदा ये तीन द्वार और हैं । ऐसे नव द्वार बाहर स्थूलरूपसे प्रगट हैं । १० दसवाँ द्वार मस्तकमें 'ब्रह्मरन्ध्र' माना है । जहाँ बालक दशामें बालकोंकी तालु लप्-लप् करती है ।

वह द्वार सूक्ष्मरूप होनेसे गुप्त है । वहाँ पर कल्पनासे परमात्माका वासा माने हैं । योगीजन वहाँपर प्राण चढ़ाय, वायु आदि तत्त्वोंके प्रकाश देखते हैं । उसी समय वह द्वार खुलता

है, ऐसा कहते हैं । अथवा पुरुषोंने स्त्री–सम्भोग करनेसे स्त्री-पुरुषोंका रज– वीर्य गिरते समय वह द्वार खुलता है । ऐसा माने हैं ।

ऐसा अर्ध या ऊर्ध्व दोनों प्रकारसे विषयानन्द और ब्रह्मानन्द दोनोंके सुखविलासका अहङ्काररूप सूक्ष्म अध्यास मृत्यु समय रहके फिर सूक्ष्म देहयुक्त स्थूल अनेक देहें मनुष्योंको या नर जीवोंको धारण करना पड़ेंगी । इसलिये ये दश द्वारोंकी आसक्ति पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे जिज्ञासु मनुष्योंको छोड़ना चाहिये; तब वे जीवन्मुक्त हो जावेंगे ।

स्थूलदेहमें सप्त पाताल ॥ १० ॥

१. अतलः— हस्तस्थानमें जहाँ 'विष्णुका' वास माना है ।

२. तलातलः— पगस्थानमें जहाँ 'लक्ष्मीका' वास माना है । इन दोनोंका सदोदित सम्बन्ध रहता है । ऐसा माना है ।

३. वितलः—हृदय स्थानमें जहाँ 'ब्रह्माका' वास माना है ।

४. सुतलः— जठरस्थानमें जहाँ 'सावित्रीका' वास माना है । इन दोनोंका सदोदित सम्बन्ध रहता है । ऐसा माना है ।

५. तलः— पीठस्थानमें जहाँ 'महादेवका' वास माना है ।

६. रसातलः—लिङ्ग वा भग स्थानमें जहाँ 'पार्वतीका' वास माना है । इन दोनोंका सदोदित सम्बन्ध रहता है । ऐसा माना है ।

७. पातालः— गुदास्थानमें, जहाँ 'गणेशका' वास माना है ।

ऐसे ७ पाताल स्थूलदेहमें कण्ठके नीचे अङ्गोंमें ठहराये हैं। अन्तमें वे देहके साथ नाश हो जावेंगे। यहाँ परखानेके लिये सिर्फ गुरुवा लोगोंकी मानन्दी ही दर्शाया गया है, ऐसा जान लीजिये।

स्थूल देहमें सात स्वर्गोंका मानना, तथा देवता, जाप, और उसीसे अक्षरोंकी उत्पत्तिका कथन ॥ ११ ॥

१. मूलाधार चक्रः—देवलोक, गुदास्थानमें मानके वहाँ 'गणेश' देवता माना है। "व, श, ष, स," ये चारों अक्षर इन्हींसे प्रगटे; इसीसे चतुर्दलकमल और छः सौ श्वासोंका जाप माना है।

२. स्वाधिष्ठान चक्रः— ब्रह्मलोक, पेड़ूस्थानमें (नाभिके छः अङ्गुल तरे), मानके वहाँ 'ब्रह्मा' देवता माना है। "ब, भ, म, य, र, ल", ये छः अक्षर इन्हींसे प्रगटे; इसीसे छः दलोंका कमल और छः हजार श्वासोंका जाप माना है।

३. मणिपूर चक्रः— वैकुण्ठलोक, नाभि स्थानमें मानके वहाँ 'विष्णु' देवता माना है। "ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ", ये दश अक्षर यहींसे प्रगटे; सोई दश दलका कमल और छः हजार श्वासोंका जाप माना है।

४. अनहद चक्रः— कैलाश लोक, हृदयस्थानमें मानके वहाँ 'महादेव' देवता माना है। "क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ" ये १२ अक्षर इन्हींसे प्रगटे; सोई द्वादश दलका

कमल और छः हजार श्वासोंका जाप माना है ।

५. विशुद्धि चक्र:— सत्तलोक, कण्ठस्थानमें मानके वहाँ 'शारदा देवी' देवता मानी है । यहाँसे "अ से अः" तक १६ स्वर प्रगटे; सोई षोडश दलका कमल, और एक हजार श्वासोंका जाप माना है ।

६. अग्निचक्र वा त्रिकुटीचक्र:— दोनों भौंहोंके बीचका स्थान मानके वहाँ 'महाविष्णु' देवता माना है । 'ह' और 'क्ष' ये दो अक्षर इन्हींसे प्रगटे; सोई द्विदलका कमल और एक हजार श्वासोंका जाप माना है ।

७. सहस्रदल कमल (भ्रमरगुफा):— मस्तकमें या ब्रह्माण्डस्थानमें मानके, वहाँ 'परमतत्त्व परमात्मा' देवता माना है । ॐकाररूप ब्रह्मज्ञानकी उत्पत्ति यहाँ होती है, (ऐसा वेदान्ती ब्रह्मज्ञानी जन कहते हैं ।) इस हेतु सहस्रदल कमल मानके वहाँ एक हजार श्वासोंका जाप माना है ।

ऐसे ७ स्थानोंमें वायुकी गाँठ बन्धी है । सोई "सात चक्र" और सोई "सात स्वर्ग" माने गये । इसीमें श्वास सोई 'अर्धमात्रा आदिमाया' है; इसीसे सर्व अक्षर प्रगट हुए हैं । इक्कीस हजार छः सौ श्वासोंका जाप रात-दिन मिलके 'सोऽहं' शब्दसे यहाँ होता रहता है । ऐसा मानते हैं । भीतर श्वास नाभितक गया, तब 'सो' और बाहिर नासिकाद्वारा श्वास निकला, तब 'हं' ऐसा 'सोऽहं' शब्दका श्वासमें योगी लोगोंने प्रमाण

किया है । यही महादेवका जाप और बीजमन्त्र है । ऐसा ठहराये हैं ।

ब्रह्माण्डमें श्वास स्थिर करके 'रं-रं' ऐसा अनहद ध्वनि होता है । सोई बाहर श्वासमें 'रा-म' ये दो अक्षर भक्तोंने सिद्ध किये हैं । वही विष्णुका जाप और बीजमन्त्र है । ऐसा माने हैं।

और पञ्च मात्रा— "अकार, उकार, मकार, अर्धमात्रा और बिन्दु हैं"; सोई क्रमशः त्रिकुटी, कण्ठ, हृदय, नाभि और मस्तक,— ये पाँच स्थानमेंसे प्रगट होती हैं, ऐसा कहते हैं । वही 'ॐकार' ब्रह्मपरमात्मा ब्रह्माका जाप और कर्ममार्गमें बीजमन्त्र है, ऐसा माने हैं । ऐसे श्वासहीमें बीजमन्त्र सिद्ध करके ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ये जगत्के गुरुवा लोग केवल देह भासमें भूले रहे । और सनकादि शिष्य लोग तो सहज ही भूलमें पड़े रहे । कारण, कल्पित सात स्वर्ग, तथा श्वास, बीजमन्त्र और जाप, ये सब देहके साथ नाश हो जावेंगे । उन्होंका भास और आसक्ति सत्सङ्गसे और श्रीसद्गुरुकी कृपासे मिटाना चाहिये । तभी नर जन्म पाया हुआ सफल होगी ! ॥

सप्त बीजमन्त्रोंका वर्णन ॥ १२ ॥

१, ॐ, २ श्रीं, ३ र रं, ४ सों, ५ ऐं, ६ ह्रीं, ७ क्लीं,— ऐसे सात अक्षर सर्व बीजमन्त्रोंके हैं । इन्हीं अक्षरोंके जापको महामन्त्रोंका जाप है । इनके जापसे कार्य सिद्ध होगी ! कहिके गुरुवा लोग कल्पना दृढ़ाके नर जीवोंको भुलाते हैं । उसको

सत्सङ्ग विचारसे परखके त्यागना चाहिये ।

सप्त बीजमन्त्रोंका विवरण ॥ १३ ॥

१. "ॐ" अक्षरः- कर्ममार्गमें बीजमन्त्ररूप वृक्ष है । इसीमें 'भय' सोई उसका 'अलवाल (थाला)' है । 'लोभ' जलसे सींचा है । १ यजन, २ याजन, ३ अध्ययन, ४ अध्यापन, ५ दान, ६ प्रतिग्रह और ७ मैथुन—ये मुख्य 'सात प्रकारके कर्म' सोई उसकी 'डारें' हैं । कर्मकाण्डकी अनेक प्रकारकी वाणी बनी, सोई उसके 'पल्लव' हैं । कर्मोंकी वासना, सोई उसके 'फूल' फूले हैं । और पाप पुण्यरूप उसमें 'फल' लगे हैं । कर्मी लोग पाप-पुण्यके कल्पित स्वर्ग—नरक आदि फल मानते हैं । कल्पित स्वर्गमें तारागण, चन्द्र, सूर्यादि, देवयोनि और यमलोकमें नरकादि अनेक दुःख वे कल्पनासे ठहराये हैं । परन्तु यहाँ ही नर (मनुष्य), पशु, अण्डज, उष्मज- ये चारयोनियाँ प्रत्यक्ष हैं । कर्मी लोग कल्पित "सालोक्य मुक्ति" स्वर्ग लोकोंका सुख भोगके फिर जगत्में वे जन्म लेते हैं, ऐसा गुरुवा लोगोंने ठहराये हैं ।

२. "श्रीं" अक्षरः- उपासनामार्गमें बीजमन्त्ररूप वृक्ष है । इसीमें 'मर्यादा' सोई उसका 'थाला' है । 'भाव जल'से 'सींचते' हैं । १ शिव, २ विष्णु, ३ सूर्य, ४ गणेश, ५ देवी, ६ राम, और ७ कृष्ण- ये मुख्य सात देवताओंकी उपासना, सोई उसकी 'डारें' माने हैं । सप्तकोटि महामन्त्रोंकी उपासनाकाण्डकी अनेक

वाणी बनी, सोई उसके 'पल्लव' हैं। वैकुण्ठलोक, कैलाशलोक, सत्यलोक, इन्द्रलोक, वरुणलोक, चन्द्रलोक, सूर्यलोक, ऐसे-ऐसे कल्पितलोकादि उसमें 'फूल' फूले हैं। उन कल्पित लोकोंमें "सामीप्य मुक्ति" हजूरी दासवत् सूक्ष्मदेह धरके 'सुखभोगरूप फल' भोगना, सो उसीमें 'फल' माने हैं। सो भ्रम मात्र है। भक्तजन उपासनारूप भक्तिसे उन स्वर्गलोकोंमें जाके वहाँके सुख भोग कर पुण्य क्षीण हुये उपरान्त फिर-फिर जगत्में वे जन्म लेते हैं,❀ ऐसा गुरुवा लोगोंने ठहराये हैं।

३. "र रं" अक्षरः— योगमार्गमें बीजमन्त्ररूप वृक्ष है। इसीमें 'योगक्रिया' सोई उसका 'थाला' है। 'साधन जल' से उसको सींचते हैं। १ हठ, २ राज, ३ लय, ४ कुण्डली, ५ लम्बिका, ६ तारक, ७ अमनस्क, और ८ सांख्य,—ये मुख्य, अष्ट योग सोई उसकी 'डारें' हैं। योगकाण्डकी सब वाणी बनी, सोई उसमें 'पल्लव' हैं। समाधिमें निर्विकल्प स्थिति, सोई उसमें 'फूल'-फूले

❀ श्लोकः— ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति। एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते॥ भ० गीता ९।२१॥-वे उस विशाल स्वर्गलोकको भोगकर, पुण्य क्षीण होनेपर, मृत्युलोकको प्राप्त होते हैं, इस प्रकार स्वर्गके साधनरूप तीनों वेदोंमें कहे हुए सकाम कर्मके शरण हुए और भोगोंकी कामनावाले पुरुष बारम्बार जाने-आनेको प्राप्त होते हैं, अर्थात् पुण्यके प्रभावसे स्वर्गमें जाते हैं और पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें आते हैं॥ २१॥ मनुष्य देहरूप स्वर्गमें भोग पूरा करके मर जाते हैं, यह भावजानना॥

हैं। देह रहे तक अष्ट सिद्धियाँ, नव निधियाँ, षट् गुण ऐश्वर्य और अन्तमें "सारूप्य मुक्ति" (वैकुण्ठ, कैलाशादि लोकोंमें विष्णु, शिवादि देवतावत् शरीर धरके रहना), सो उसमें कल्पित 'फल' माने हैं। बड़े–बड़े समर्थ सिद्धयोगी सारूप्य मुक्तिका 'पुण्यफल' भोगे उपरान्त फिर-फिर जगत्में जन्म लेते हैं, ऐसा गुरुवा लोग योगीजनोंने ठहराये हैं।

४. "सों" अक्षरः– ज्ञानमार्गमें बीजमन्त्ररूप वृक्ष है। इसीमें 'भक्ति' सोई थाला है। 'प्रेम' सोई जलसे सींचते हैं। १ शुभेच्छा, २ सुविचारणा, ३ तनुमानसा, ४ सत्त्वापत्ति, ५ असंशक्ति, ६ पदार्थाभावनी, और ७ तुरिया,– ये 'सप्त ज्ञानभूमिका' सोई उसकी डारें माने हैं। ज्ञानकाण्डकी सब वाणी बनी, सोई उसमें 'पल्लव' हैं। परोक्ष ज्ञान (वाणीका कहनेमात्र ज्ञान), वाच्यांश, सोई उसमें 'फूल' लगे हैं। अपरोक्ष ज्ञान (अनुभव ज्ञान), एक अद्वैत परमात्मा सर्वमें व्यापक जानना, सोई उसमें 'फल' माने हैं। ऐसे ब्रह्मज्ञानसे ज्ञानीजन "सायुज्यमुक्ति" 'जलतरङ्ग न्याय' ठहराय, चारों खानियोंमें व्यापक बनके इच्छाबीज रहनेसे फिर-फिर जगत्में जन्म लेते हैं। बिना पारख कभी मुक्त नहीं होते हैं।

५. "एं" अक्षरः— उत्पत्तिका बीजमन्त्ररूप वृक्ष है। इसीमें 'विषय' सोई उसका थाला है। 'विषयवासना' वही जलसे सींचते हैं। १ शब्द, २ स्पर्श, ३ रूप, ४ रस, ५ गन्ध, तथा ६ वासना और ७ इच्छा,–'ये सात प्रकारकी उत्पत्ति' सोई उसमें

डारें माने हैं। अनेक प्रकारकी स्त्रियाँ सोई उसमें 'फूल'—फूले हैं। और अनेक प्रकारके पुरुष सोई उसमें 'फल' लगे हैं। इसीमें स्त्री—सम्भोगासक्तिसे उत्पत्ति कर्ममें नरजीवोंको स्थिरता नहीं आती है। विषय वासनावश सदा चञ्चल ही बने रहते हैं।

६. "ह्रीं" अक्षरः— पालनका बीजमन्त्ररूप वृक्ष है। इसीमें 'माया' सोई उसका थाला है। 'मोह' जलसे सींचते हैं; १ अन्न, २ जल, ३ तृण, ४ पृथ्वी, ५ पत्र, ६ फल, और ७ फूल, ये सात खानेके द्रव्य सोई उसकी 'डारें' हैं। सातोंकी अनेक प्रकारके पाक बनानेकी विधि, सोई उसमें 'पल्लव' आये हैं। सातोंके अनेक पदार्थ बने, सोई उसमें 'फूल'—फूले हैं। सातों पर सदोदित शरीर पोषण सोई स्थिति उसमें 'फल' लगे हैं। ये पेट पालनेके अनेक कर्मोंमें नरजीवोंकी स्थिति नहीं आती। वासना वश जीते तक विषय भोगोंमें भटकते रहते हैं, और शरीर छूटनेपर आवागमनमें जाते रहते हैं।

७. "क्लीं" अक्षरः— प्रलयका बीजमन्त्ररूप वृक्ष है। इसीमें 'कठोरता' सोई उसका थाला है। 'क्रोध' जलसे सींचते हैं। १ पृथ्वी, २ जल, ३ अग्नि, ४ पवन, ५ लात, ६ हाथ, और ७ दाँत,— ये मुख्य नाश करनेके सात साधन सोई उसकी डारें हैं। जीवघात करनेके लट्ठ अनेक हथियारादि सब पदार्थ सोई उसके 'पल्लव' आये हैं। इसीमें सबोंको देह छूटनेका 'डर' सोई उसमें 'फूल-'फूले हैं। और मृत्युरूप उसमें 'फल' लगे हैं। यह

प्रलयकर्मोंमें नरजीवोंको स्थिरता नहीं आती है। सदा भयभीत, सन्तप्त चञ्चल बने रहते हैं।

ऐसे सप्त बीजमन्त्र लेके १ कर्म, २ उपासना, ३ योग, ४ ज्ञान, ५ उत्पत्ति, ६ पालन और ७ प्रलय, यह सातों कर्म प्रगटे हैं। इन्होंके विस्ताररूप वाणीके बड़े-बड़े वृक्ष बने हैं। इसीमें सब ब्रह्माण्डके नरजीव "१ थाला, २ जल, ३ डार, ४ पल्लव, ५ फूल और ६ फल" ये सबमें अटके हैं। कोई बिरला, पक्षपात रहित, जिज्ञासु नरजीव जड़, चैतन्यका यथार्थ निर्णय करके स्थिर होता है। जब पारखी श्रीसद्गुरुकी दयासे निजस्थितिको जिज्ञासु जीव प्राप्त कर लेते हैं, तभी सर्व चञ्चलताएँ मिट करके पारखबोधसे स्वरूप स्थितिमें सद्गुण सम्पन्न जीवन्मुक्त हो जाते हैं। सोई बनाना चाहिये।

इसीसे सत्यन्यायी पारखी श्रीसद्गुरुसे मिलके ऐसे-ऐसे वाणीरूप वृक्षोंके सर्व जड़ासक्तिरूप जड़ोंको काटने चाहिये। तब कोई जिज्ञासुजन जीवन्मुक्त हो जावेंगे, वही बनाना चाहिये।

सप्त धातुओंके स्थूलदेह ॥ १४ ॥

१ हाड, २ मज्जा, ३ नाड़ी, ४ रक्त, ५ मांस, ६ त्वचा, और ७ रोम--ये सात धातु शरीरमें ठहराये हैं।

पुरुषके वीर्यसे देहमें १ हाड़, २ मज्जा (हाड़ोंपरका सफेद भाग), और ३ नाड़ियाँ-- ये तीन धातु उत्पन्न होते हैं। वीर्यका वजन भारी रहनेसे शरीरके भीतर ये तीन धातु बन्ध जाते हैं।

और:—

स्त्रीके रजरूप रक्तसे देहमें १ मांस, २ त्वचा और ३ रक्त, ये तीन धातु उत्पन्न होते हैं। रक्तका वजन हलका रहनेसे शरीरके ऊपर ये तीन धातु बन्ध जाते हैं। तथा:—

स्त्री और पुरुष दोनोंके रज-वीर्यके सन्धिमें अनेक रोम (केश) उत्पन्न होते हैं।

ऐसी सप्त धातुओंकी स्थूलदेह पानी-पवनकी या नाद, बिन्दुकी गाँठ बन्धनेसे उत्पन्न हो जाती है। सो सत्सङ्गद्वारा पारख स्वरूपका विचारकरके नाद-बिन्दुकी आसक्ति या अध्यासों-को छोड़ना चाहिये।

स्त्री-पुरुषोंके मैथुन समय दहिना श्वास उष्ण कला रहनेसे, स्त्रीका 'रज' दहिने श्वासमें प्रथम गिरेगा, तो 'कन्या' उत्पन्न होगी। और पुरुषका 'वीर्य' दहिने श्वासमें प्रथम गिरेगा, तो 'पुत्र' उत्पन्न होगा। यदि दोनोंकी सुषुम्ना चलेगी, परन्तु कुछ दहिना वा बायाँ भाग लेके चलेगी और स्त्रीको गर्भ रहेगा, तो पुत्र 'नपुंसक' (हिजड़ा) और कन्या 'बाँझ' उत्पन्न होगी। ऐसा गुरुवा लोगोंने अनुमानसे माने हैं।

ऐसे रक्त और वीर्यरूप बीजसे बिन्दुकला स्त्री, पुरुष और नपुंसक देहें पैदा होती हैं।

स्थूलदेहमें १६ प्रकारसे मानना ॥ १५ ॥

१. स्त्री, पुरुष और नपुंसक—ये 'देहभावना' मानी हैं।

२. स्थूलदेहमें खसम, मेहरी, माता, पिता, पुत्रादि देहका 'नाता' माने हैं ।

३. पद्मिनी १, चित्रिणी २, हस्तिनी ३, शंखिनी ४, नागिनी ५, और डंखिनी ६, ये मुख्य छः प्रकारकी स्त्रियाँ और १ शशा, २ मृगा, ३ घोड़ा, ४ गधा, ५ बैल और ६ भैंसा, ये मुख्य छः प्रकारके पुरुष, ऐसा स्त्रियाँ और पुरुषोंका 'जाति-स्वभाव' माना है ।

४. ब्राह्मण १, क्षत्रिय २, वैश्य ३, और ४ शूद्र, ये चार हिन्दुओंमें १ तथा सैय्यद, २ शेख, ३ मोगल और ४ पठान-ये चार मुसलमानोंमें देहके 'वर्ण' माने हैं ।

५. हिन्दु, मुसलमान, क्रिस्तान, यहुदी आदि देह सम्बन्धी 'धर्म' माने हैं ।

६. ब्राह्मण, कुरमी, तेली, चमार, धोबी आदि देहकी 'जातियाँ' माने हैं ।

७. केशव, माधव, दामोदरदास, इत्यादि देहके 'नाम' माने हैं ।

८. ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास, ये हिन्दुओंमें और सुनी, सिया ये मुसलमानोंमें देहके 'आश्रम' माने हैं ।

९. गोसाँई, वैरागी, संन्यासी, उदासी, कबीरपन्थी, दादूपन्थी, नाथपन्थी, नानकपन्थी, आदि सब पन्थ देहके 'भेष' माने हैं ।

१०. गर्भवास, जन्म, मरण, बाल, तरुण और वृद्ध- ये

देहके 'षट् विकार' माने हैं।

११. काला, गोरा, श्याम, पीलादि देहके 'रङ्ग' माने हैं।

१२. बवना, नाटा, मझोल, लम्बा ऐसी देहकी 'गढ़न' मानी है।)

१३. उत्तम, मध्यम, लघु और कनिष्ठ ये कुलके और जातिके 'देहभेद' माने हैं।

१४. बहिरा, अन्धा, काना (काणे) गुङ्गा, लूला, पङ्गा, नकबैठा, अष्टावक्र, कोढ़ी आदि देहकी हीनता और कहीं सुन्दरता ऐसे देहके 'सुरूप और कुरूप' माने हैं।

१५. आच्छादन, भोजन, मैथुन, भय, निद्रा, और मोह,— ये देहके षट् 'स्वभावधर्म' माने गये हैं ❀।

१६. जन्म, मरण, भूख, प्यास, शोक और मोह ये देहकी 'षट् ऊर्मियाँ' माने हैं।

स्थूलदेहमें नाद-बिन्दुको भगवान् मानना ॥ १६ ॥

ऐसी स्थूलदेहकी १६ प्रकारसे विकारादि भावना और स्त्री-भोगादि वासना, ये बिन्दुरूप देहका खानीका अध्यास है। इसीमें खानी सोई 'भगखाई' है, उसीको भग-धारण करनेवाली

❀ चौपाई:—

"छाजन भोजन मैथुन कर्मा। भय निद्रा मोह षट धर्मा ॥
पशु पत्ती सबहिनको व्यापै। निशि वासर सो दावा दापै ॥"

मानुषविचार, पञ्चग्रन्थी। (संशोधक) ॥

भगवान्‌रूप श्रेष्ठ स्त्रीको माना है। 'भग' कहिये सर्व गुण ऐश्वर्ययुक्त है, सो भगवान् * ईश्वर है। ऐसा गुरुवा लोग कहे हैं।

वास्तविक भगकुण्ड धारण करनेवाली १६ शृङ्गारयुक्त मोहिनीरूप स्त्री आदिमाया वा सियारूप जगत्‌की माता है। ऐसा जान-बूझके ब्रह्मा, विष्णु, महेश, अवतारादि माने हुए देव और सर्वज्ञाता, संसारी मनुष्य तथा विषयासक्त अज्ञानी मनुष्य विषयरूप संसारमें भगरूप नरकका ऐश्वर्य स्त्री-भोगादि भोग रहे हैं। बाहर प्रत्यक्ष 'भग' और 'लिङ्ग' एक जगह स्थापनाकर जड़ पाषाणको 'बड़ा महादेव' मानके, ब्राह्मण, साधु आदि उसीको पूजते-पुजाते हैं। ऐसे ठग गुरुवा लोग भगभोगी हुए हैं। ऐसा बिन्दुरूप देहभगवान्‌को या स्त्री—भगवान्‌को, हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्तानादि सर्व मनुष्य मान रहे हैं।

ऐसे ही दूसरे प्रकारसे, लिङ्गरूप भगवान् या खुदा माने हैं। लिङ्ग कहिये नादरूप श्वासवायु लिङ्गाकार त्रिकुटीसे नाभि तक लम्बाकार चलती है। उसी लिङ्गरूप श्वासको सहस्रदल कमलमें वा दशवें द्वारमें स्थिर करके, भगरूप गोलाकार परम-

---

* श्लोकः— "ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः॥
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा॥"
(नारदपुराण, पूर्व० ४६ + १७)

अर्थः—सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण धर्म, सम्पूर्ण यश, सम्पूर्ण श्री, सम्पूर्ण ज्ञान, तथा सम्पूर्ण वैराग्य—इन छः का नाम 'भग' है॥

तत्त्वरूप परमात्मा, जड़तत्त्वोंका एक प्रकाश मानन्दीसे बनाय, योगीजन, सूक्ष्मदेहका प्रतिबिम्ब या ज्योतिको देखकर उसका सुख मन—मानन्दीसे भोगते हैं। उन्मनी आदि ध्यान लगाय, वे बहुत काल तक समाधिमें स्थिर बैठते हैं, तब अष्ट सिद्धियाँ, नवनिद्धियाँ, षड्गुण ऐश्वर्य, मन्त्रसिद्धि आदि तिनको विशेष कला प्राप्त होती हैं, ऐसा गुरुवा लोग मानते हैं। वे ही जगत्में सिद्धरूप ईश्वर या भगवान् कहाते हैं, यानी अज्ञानी लोग उनको ऐसा बड़े मानते हैं। ऐसा लिङ्गाकार श्वास भगवान् या दमरूप श्वास खुदाका नूर हिन्दू, मुसलमानादि, सर्व मनुष्य कल्पनासे माने हैं।

ऐसा बिन्दुरूप भगवान् देहका भगभोग अधोभाग पिण्ड-कला है, और नादरूप श्वास, भगवान् सहस्रदल कमल भोग ऊर्ध्व भाग, ब्रह्माण्डकला है। ऐसी श्वासरूप 'नाद कला' वाणी-का भाग है, और बिन्दुरूप 'पिण्डकला' खानीका भाग है। ये दोनों कलाओंमें नरजीव आसक्त होके फँसे हैं। जब देह नाशवान है, तब स्थूलदेहकी 'नाद' और 'बिन्दु' ये दोनों कला भी सहज ही नाशवान हैं। इसलिये ये दोनों अभ्यास पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे और सत्सङ्गसे छूटने चाहियें, तब जिज्ञासु-जन जीवन्मुक्त हो जावेंगे, सोई बनाना चाहिये॥

॥ ❀ ॥ इति श्री तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
षष्ठ प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ६ ॥ ❀ ॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥✱॥ अथ सप्तम प्रकरण प्रारम्भः ॥७॥✱॥

सूक्ष्मदेह विवरण ।

पञ्च तत्त्वोंकी २५ प्रकृतियोंकी सूक्ष्म देह वायुकला ॥ १ ॥

(१) आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी पाँच प्रकृतिः— १ अन्तःकरण, २ चित्त, ३ मन, ४ बुद्धि और ५ अहङ्कार हैं।

(२) चञ्चल वायुतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः— १ प्राण, २ अपान, ३ व्यान, ४ उदान और ५ समान हैं।

(३) तेजतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः— १ कान, २ नाक, ३ नेत्र, ४ जीभ, और ५ त्वचा हैं।

(४) जलतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः— १ शब्द, २ स्पर्श, ३ रूप, ४ रस और ५ गन्ध हैं।

(५) पृथ्वीतत्त्वकी पाँच प्रकृतिः— १ हाथ, २ पाँव, ३ मुख, ४ गुदा और ५ लिङ्ग हैं।

ऐसे एक-एक तत्त्वके पाँच--पाँच भाग मिलके २५ प्रकृतियोंका 'सूक्ष्मदेह' हुआ है । इसीमें दश इन्द्रियाँ वायुरूप भीतरसे हैं, और वे बाहरसे गोलाकार देह झरोखे भगाकार और लिङ्गाकार लम्बरूप बनी हैं। अन्तःकरणपञ्चक, प्राणपञ्चक और विषयकपञ्चक—ये सब सूक्ष्म वायुरूप ही व्यवहार कर रहे

हैं। इसलिये–वायुकी कला सूक्ष्मदेह कही है। इसीमें सत्ता-चेतन जीवोंकी है। चेतन जीवोंकी सत्तासे ही सब इन्द्रियाँ, देहोंमें सञ्चालित हो रही हैं। जीवकी सत्ता बिना देहादि, निर्जीव शून्य हो जाती है। अतः देहके कर्ता चैतन्य जीव ही सर्वश्रेष्ठ है।

सूक्ष्मदेहकी २५ प्रकृतियोंका मिलापरूप पञ्चीकरण ॥ २ ॥

(६) आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी पाँच प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

आकाशतत्त्वरूप समानवायुकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ३ ॥

१. अन्तःकरणः– आकाशतत्त्वरूप पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों समान वायु मिलके होता है।

२. मनः– आकाशतत्त्वरूप समान वायु और जलतत्त्व मिलके होता है।

३. बुद्धिः– आकाशतत्त्वरूप समान वायु और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

४. चित्तः– आकाशतत्त्वरूप समान वायु और वायुतत्त्व मिलके होता है।

५. अहङ्कारः– आकाशतत्त्वरूप समानवायु और तेजतत्त्व मिलके होता है।

इसीमें आकाशतत्त्वरूप समान वायुका मुख्य विशेष भाग "अन्तःकरण" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं। एक भाग पिण्डकला और एक भाग ब्रह्माण्डकला मिलके उत्पत्ति कही है॥

चञ्चल वायुतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ४ ॥

(७) चञ्चल वायुतत्त्वकी पाँच प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

१. प्राणः– चञ्चल वायुतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके होता है।

२. अपानः– चञ्चल वायुतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

३. व्यानः– चञ्चल वायुतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके होता है।

४. उदानः– चञ्चल वायुतत्त्व और जलतत्त्व मिलके होता है।

५. समानः– पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों चञ्चल वायुतत्त्व मिलके होता है।

इसीमें चञ्चल वायुतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "समान वायु" । और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

तेजतत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ५ ॥

(८) तेजतत्त्वकी पाँच प्रकृति कही हैं, उसीमें:—

१. कानः— तेजतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके होते हैं।

२. नाकः– तेजतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

३. नेत्रः—पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों तेजतत्त्व मिलके होते हैं।

४. जीभः–तेजतत्त्व और जलतत्त्व मिलके होती है।

५. त्वचाः– तेजतत्त्व और वायुतत्त्व मिलके होती है।

इसीमें तेजतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "नेत्र" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

जल तत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ६ ॥

(६) जलतत्त्वकी पाँच प्रकृति कहे हैं, उसीमें:—

१. शब्दः—जलतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके होता है।

२. स्पर्शः—जलतत्त्व और वायुतत्त्व मिलके होता है।

३. रूपः—जलतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके होता है।

४. रसः—पिण्ड-ब्रह्माण्डके दोनों जलतत्त्व मिलके होता है।

५. गन्धः—जलतत्त्व और पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

इसीमें जलतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "रस" है। और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

पृथ्वी तत्त्वकी प्रकृतियोंका मिलाप ॥ ७ ॥

(१०) पृथ्वीतत्त्व की पाँच प्रकृति कही है। उसीमें:—

१. हाथः—पृथ्वीतत्त्व और वायुतत्त्व मिलके होते हैं।

२. पाँवः—पृथ्वीतत्त्व और तेजतत्त्व मिलके होते हैं।

३. मुखः—पृथ्वीतत्त्व और आकाशतत्त्वरूप समान वायु मिलके होता है।

४. गुदाः—पिण्ड—ब्रह्माण्डके दोनों पृथ्वीतत्त्व मिलके होता है।

५. लिङ्गः—पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्व मिलके होता है।

सूक्ष्म देहकी २५ प्रकृतियोंमें पञ्च देवताओंके बासाका कोष्ठक ॥ ८ ॥

आकाश तत्त्वरूप-समान वायु-की प्रकृति ।	चञ्चल वायु तत्त्वकी प्रकृति ।	तेजतत्त्वकी प्रकृति ।	जलतत्त्वकी प्रकृति ।	पृथ्वीतत्त्वकी प्रकृति ।	पञ्च देवता-ओंका बासा ।
मन	प्राण	कान	शब्द	मुख	निरञ्जन
अन्तःकरण	व्यान	त्वचा	स्पर्श	हाथ	माया
अहङ्कार	समान	नाक	गन्ध	लिङ्ग	महादेव
चित्त	उदान	नेत्र	रूप	पाँव	विष्णु
बुद्धि	अपान	जीभ	रस	गुदा	ब्रह्मा

॥ ※ ॥ कोष्ठकका स्पष्टीकरण विवरण ॥ ※ ॥

टिप्पणी:—

वास्तवमें पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु, यही मुख्य साकार चार तत्त्व हैं। आकाश कोई परमाणु संयुक्त वस्तु न होनेसे, साकारके अपेक्षासे निराकार कहा है। वेदान्ती लोग पाँचों तत्त्वोंकी उत्पत्ति तथा आकाशको साकार मानते हैं, सो उनकी भूल या भ्रमरूप अविचारपना है। अनन्त चैतन्य देहधारी जीव तथा चारों जड़तत्त्व स्वरूपसे स्वतः अनादि हैं। जड़ाध्यासी जीव चारखानियोंमें जाके, बारम्बार देहें धारण करते रहते हैं। तहाँ जीवोंकी सत्तासे, देहें स्थूल–सूक्ष्म प्रकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। साकार चारों तत्त्वोंकी अंशोंसे चैतन्य जीवकी सत्तासे सूक्ष्म अन्तःकरण पञ्चकादि २५ प्रकृति सूक्ष्म देहकी तथा स्थूल देहकी २५ प्रकृतियाँ, स्थूल–सूक्ष्म गोलकरूपसे साकार उत्पन्न हुई हैं। आकाश शून्य या निराकार है, परन्तु सब कोई आकाशको साकार तत्त्व मानके दृढ़ कर रक्खे हैं; सो उसको परखानेके लिये तथा प्रकृतियोंके पञ्चीकरण भेद समझानेके लिये, ग्रन्थकर्त्ताने "आकाश तत्त्वरूप समान वायु; और चञ्चल वायु" की दो विशेषणोंसे ग्रन्थमें प्रकृति उत्पत्ति समझाये हैं, सो यथार्थ है। प्रिय पाठक गण! इस बातको विशेष सत्सङ्ग विचारसे समझेंगे।

—ले० रामस्वरूपदासजी।

इसीमें पृथ्वीतत्त्वका मुख्य विशेष भाग "गुदा" है, और दूसरी प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं।

ऐसा २५ प्रकृतियोंका मिलाप या पञ्चीकरण हुआ है।

ऐसे २५ प्रकृतियोंमें पञ्च देवताओंका बास है । ऐसा मतवादी गुरुवा लोगोंने माना है ।

सूक्ष्मदेहमें दूसरे अष्ट भाग ॥ ९ ॥

१ सत्त्वगुण, २ उकार मात्रा, ३ कण्ठस्थान, ४ तैजस अभिमान, ५ द्रव्यशक्ति ६ सूक्ष्मभोग, ७ मध्यमा वाचा और ८ स्वप्नअवस्था, ये अष्ट भाग हैं। उसमें:—

१. सत्त्वगुण:— सद्गुण धारण, शान्त स्वभाव, भक्ति, ज्ञान, वैराग्यमें प्रीतिका होना है।

२. उकार मात्रा:— कण्ठ या गलामें माना है।

३. कण्ठ स्थान:— गलामेंके नलीको कहते हैं।

४. तैजस अभिमान:— सूक्ष्म चञ्चल वायुतत्त्वरूप प्रकृतियोंको चेतानेवाला अभिमान है।

५. द्रव्यशक्ति:— शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, तथा चित्त, मन, बुद्धि और अहङ्कार ये सूक्ष्मतत्त्व मिलके 'द्रव्यशक्ति' माने हैं।

६. सूक्ष्मभोग: सूक्ष्मविषयोंका मनोमय समाधि, स्वप्न, आदिका मानन्दीरूप भोग हैं।

७. मध्यमा वाचा:— कण्ठस्थानमें माना है। जहाँसे १६ स्वर उत्पन्न होते हैं।

८. स्वप्न अवस्थाः— अर्ध निद्रित अवस्थामें जाग्रत्का संस्कार उलटके विषय प्रतिभासित होना, स्वप्न है।

ऐसी २५ प्रकृतियाँ और उक्त अष्ट भाग मिलके ३३ कलाओंका मुख्य 'सूक्ष्मदेह' होता है।

सूक्ष्म देहमें १४ देवता वर्णन ॥ १० ॥

(११) सूक्ष्म देहमें १४ देवता वायुरूप माने हैं। १ अन्तःकरणका देवता महाविष्णु, २ मनका देवता चन्द्रमा, ३ बुद्धिका देवता ब्रह्मा, ४ चित्तका देवता नारायण, ५ अहङ्कारका देवता रुद्र, ६ कानका देवता दिशा, ७ नाकका देवता अश्विनीकुमार, ८ नेत्रका देवता सूर्य, ९ जिभ्याका देवता वरुण, १० त्वचाका देवता वायु, ११ हाथका देवता इन्द्र, १२ पाँवका देवता उपेन्द्र (वामन अवतार), १३ मुखका देवता अग्नि, १४ गुदाका देवता यम, और १५ लिङ्गका देवता प्रजापति हैं। इसीमें लिङ्गका देवता 'प्रजापति' पिण्डकलामें और बुद्धिका देवता 'ब्रह्मा' ब्रह्माण्डकलामें माने हैं। इसलिये दश इन्द्रियाँ और अन्तःकरण पञ्चकके १५ देवता होना था, परन्तु १४ ही गिने हैं।

सूक्ष्मदेहमें पञ्चविषय विवरण ॥ ११ ॥

(१२) शब्दविषयमें:— पारधीलोग वीणा, मुरली आदि बाजे बजाते हैं। वही आवाज सुनके मृग (हिरण) आशिक होकर, देहका भान भूलजाते हैं और उनके फन्देमें पड़कर मारे जाते हैं।

तैसे ही शब्दविषयमें अनेक प्रकारके बाजे बने हैं। तन्तुओंके बाजे वीणा, सितार, सारंगी आदि हैं। चमड़ा मढ़वायके नगारा, मृदङ्ग, ढोलक, खञ्जीरी आदि बाजे बने हैं। हाड़के बाजे शङ्खादि हैं। धातुओंके बाजे झाँझ, मञ्जीरादि हैं। छेद करके बाँसुरी, सहनाई आदि बनाये हैं और हारमोनियम, फोनोग्राफ, रेडियो आदि नया–नया अनेक प्रकारके बाजे बनाये हैं। उसीमें राग, रागिनी, स्वर, ताल, नृत्य, गायनादि रङ्ग–रागमें संसारीलोग पिण्डकलामें भूले पड़े हैं। और मस्तकमें वायु चढ़ाय, कानको ठेढ़ी देके ऐसे ही अनहद बाजे ब्रह्माण्डमें सुनके योगीलोग, तथा प्रेमलक्षणा वाणीमें भक्त लोग, और मन्त्रादि साधनोंमें कर्मीलोग, ऐसे दूसरी प्रकारसे, मनुष्य ब्रह्माण्डकलामें भूले हैं, बिना विचार।

(१३) स्पर्श विषयमें:– कजली वनमें, बड़ी खाँच तैयार करके, उसीपर कागजकी हथिनी खड़ी कर देते हैं। फिर कोई हाथी विषयमें उन्मत्त होके उसीपर कूदके खाँचमें गिरते हैं; ऐसे हाथी पकड़े जाते हैं। तैसे ही तकिये, गादियाँ, पलङ्ग, नरम बिछौने आदि और स्त्री–सम्भोगके विषयानन्दमें संसारी लोग पिण्डकलामें भूले पड़े हैं। और सहस्रदल कमलमें योगी, तथा सर्वजगत्‌को सच्चिदानन्द, अद्वैत आत्मा ठहरायके ज्ञानी, विज्ञानी आदि सर्व महात्मा ब्रह्माण्डकलाके भासरूप ब्रह्मानन्द-में भूले हैं।

(१४) रूपविषयमें:– पतङ्गादि जीव दियाओंका प्रकाश देखके ज्योतिमें जलके मरते हैं। तैसे ही हीरा, लालआदि रत्न, सोना, चाँदी, मोती आदि अनेक प्रकारके गहने, रेशमी, जरतारी आदि कपड़े, अनेक प्रकारकी रोशनाई और अनेक सुन्दर रूपवान् वस्तुओंमें, संसारी लोग पिण्डकलामें भूले पड़े हैं। और उपासक भक्त, योगी आदि मानसपूजा और ध्यानमें अन्य तत्त्वोंसे मिश्रित वायुतत्त्वमें ज्योतिस्वरूप कल्पित ईश्वरको, यानी भासको देखके, ब्रह्माण्डकलामें भूले हैं। बिना पारख भासिक जीव अपने ही भ्रमसे मिथ्याभासमें भूल रहे हैं।

(१५) रसविषयमें:– मछलियाँ चारेके स्वादके मारे बन्सीपर उछलके गलेमें बन्सीका काँटा छेदके तलफलाय–तलफलाय मरती हैं। तैसे ही १ खट्टा, २ मीठा, ३ खारा, ४ चर्परा, ५ कड़ुवा और ६ तीत (तीखा) ये षट्रस भोजन बने हैं। उसीमें तेल, घी, शक्कर, गुड़, मलाई, दूध, दही आदि डाले हुए अनेक प्रकारके अनेक व्यञ्जनादि पदार्थ,नाना फल, मेवे, मिठाई आदि अनेक पदार्थोंके स्वादमें पिण्डकलामें संसारी लोग भूले पड़े हैं। और अवतारी देवताओंकी और भक्तोंकी लीला, बड़े प्रेमसे भक्त लोग गाते हैं। उसीमें हँसना, नाचना, रोना, शोकमें व्याकुल होना, कण्ठ डट (रुक) जाना, ऐसे विरहरूप भक्तिके प्रेमरसमें प्रेमी उपासक भक्तजनादि ब्रह्माण्डकलामें भूले हैं।

(१६) गन्धविषयमें:- भँवरे कमलके गन्धमें मस्त होके रातके समयमें भी सुवासके मारे निकलते नहीं, कमलमें ही छिपके सब रात खुशीसे उसीमें बँधे रहते हैं; और संबेरा होनेपर, मदोन्मत्त हाथी आके उन कमलोंको खा जाते हैं, ऐसे भौंरे मारे जाते हैं। तैसे ही नाना अतर, अर्गजा, अबीर, चन्दन, उत्तम-उत्तम फूल, खसकी टट्टियाँदि, सुगन्धित पदार्थ हैं। और मदिरा, मांस, गाँजा, अफीम, सम्मलादि जहर, ऐसे-ऐसे दुर्गन्धित पदार्थ हैं। इसीमें संसारीलोग पिण्डकलामें भूले पड़े हैं। और ईश्वर, परमात्मा, खुदादि एक जगत्कर्ता कल्पनासे, भ्रमवश गुरुवा लोगोंने मालिक माने हैं। उसीको पृथ्वीके गन्धवत् समानरूपसे सर्वत्र व्यापक ठहराये हैं। सब मत-मतान्तर, नाना पन्थ, नाना मार्गोंके अधिकारी, छः दर्शन, छियानवे (९६) पाखण्ड इत्यादिकोंमें ब्रह्मज्ञानी बड़े-बड़े ज्ञाता हुये हैं। परन्तु सर्व अद्वैत व्यापकरूप भगवान् पृथ्वीवत् मानके, वेद, शास्त्र, व्याकरण, पुराण, इतिहास, कहानी आदि ब्रह्माण्ड कलारूप अनेक कल्पित वाणी सुन-सुनके मदान्ध हो, ब्रह्मके अध्यासमें भूले हैं। किसीकी जड़-चेतनकी ग्रन्थि नहीं छूटी; बिना पारख, धुन्ध गाफिलिमें ही पड़े हैं।

ऐसे पिण्ड-ब्रह्माण्ड कलाओंमें, संसारी और परमार्थी लोग पञ्चविषयोंमें ❀ भूले हैं। एक-एक विषयमें एक-एक पशु आदि

❀ चौ०— "शब्द स्पर्श रूप रस गन्धा।
पञ्च विषय वश जीव हैं अन्धा॥" सं० 'राम'-

जीव मारे गये हैं ❀। और मनुष्य तो पञ्चविषयोंकी सम्पूर्ण कला भोगनेवाले हैं; इसलिये बड़े होशियारीसे सावधान रहकर, पञ्चविषयोंकी आसक्ति पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे, धीरे-धीरे छुड़ाय, वर्तमानमात्र देहव्यवहार राखके, पञ्चविषयोंके पञ्च-विषयरूप, देहबन्धनसे, जिज्ञासु जनोंको, न्यारा होके विवेक, वैराग्य, बोधभावद्वारा, सम्पूर्ण जड़ाध्यासोंको टायके, जिवन्मुक्त हो जाना चाहिये।

सूक्ष्मदेहमें अन्तःकरण पञ्चक विवरण ॥ १२ ॥

१. अन्तःकरणः— आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी कला है। जहाँ 'करण' कहिये सब सूक्ष्म और स्थूल इन्द्रियोंके व्यवहारोंका अन्त वा लय होता है, वही 'अन्तःकरण' है। ऐसे लयको सच्चिदानन्द आत्मा निर्विकल्प, अनिर्वाच्य, महाआनन्दरूप कल्पनासे माने हैं। परन्तु वहाँ सर्व पिण्डकला संसारका बीज सूक्ष्म अहंभावरूप, इच्छा अध्याससे रहता है। 'भगद्वार' या नव द्वारोंके किसी द्वारमें आसक्त होके, संसारी लोगोंको थोड़ा अंश-मात्र विषयानन्द, माना हुआ निर्विकल्परूप ब्रह्मानन्दका भास प्राप्त होता है। ऐसे पिण्डकलामें संसारीलोग भूले हैं। और त्रिकुटी वा हृदयमें जड़ मूर्तियोंका ध्यान करनेसे, भक्तोंको; तथा नाभिमें श्वास लय करनेसे राजयोगियोंको; एवं मस्तकमें श्वास

❀ दोहाः— "गज अलि मीन पतङ्ग मृग। इक इक दोष विनाश ॥
जाके तनि पञ्चौ विषे। ताकी कैसी आश ॥

लय करनेसे हठयोगियोंको; तथा आकाशवत् सर्वत्र व्यापक जड़-चैतन्यमें परमात्मा है, ऐसे दृढ़ माननेवाले ज्ञानी, विज्ञानियोंको; वही कल्पित सच्चिदानन्द परमात्माका महाआनन्द अनुभव विशेष वृत्तिकी स्थिर भावसे मानन्दीसे भास-की दृढ़ता प्राप्त होता हैं। ऐसे ब्रह्माण्डकलामें भक्त, योगी, ज्ञानी, विज्ञानी आदि भूले हैं। ऐसा अन्तःकरणका विषय निर्विकल्प कल्पित परमात्मा जड़ और चैतन्यमिश्रित गोला-कार, सर्वत्र व्यापक ॐकार ब्रह्म गुरुवा लोगोंने माने हैं।

२. चित्तः- चञ्चल वायुतत्त्वकी कला हैं। उसके विषय 'चिन्तन' और 'अनुसन्धान' दो प्रकारसे होते हैं। कहीं ईश्वर है? ऐसा अनुसन्धानरूप कल्पनासे पिण्डकलामें संसारी लोग मानन्दी, करते हैं। और सहविकल्प समाधिरूप आत्मा है, ऐसा लयचिन्तन ब्रह्माण्डकलामें योगी, ज्ञानीजन मानन्दी करते हैं।

३. मनः- जलतत्त्वकी कला हैं। उसके विषय 'सङ्कल्प' और 'विकल्प' दो प्रकारसे हैं। अपना उत्पत्तिकर्त्ता और सुख-दुखोंका दाता, दूसरा कोई ईश्वर है, ऐसा सङ्कल्प वा कल्पना पिण्डकलामें संसारी लोग करते हैं। और सङ्कल्पको विकल्प करनेके लिये, मन-पवनकी गाँठ बाँधके श्वासको लय नाभिमें वा मस्तकमें करते हैं. तब ब्रह्मानन्द साक्षात्काररूप मन-मानन्दी दृढ़ होता है; ऐसी स्थितिको योगी, ज्ञानी जन माने हैं। परन्तु वे ब्रह्मा-ण्डकलाके कल्पनामें प्रत्यक्ष भूले हैं। सत्य पारख उन्हींको हुई नहीं।

४. बुद्धिः— पृथ्वीतत्त्वकी कला है। उसके विषय 'निश्चय' और 'निश्चयात्मक' दो प्रकारसे हैं। ईश्वर सर्वत्र व्यापकरूपसे भरा है। ऐसा भास भ्रमिक गुरुवा लोगोंके बोधसे संसारी लोगोंको मिथ्या मानन्दी दृढ़ हुआ है। सोई निश्चय करके पिण्डकलामें संसारी लोग भूले पड़े हैं। और परमात्मा सगुण न निर्गुण, साक्षी न असाक्षी, एक न दो, सहविकल्प न निर्विकल्प, सो जैसेका तैसा सम्पूर्ण आप ही आप मैं अकेला हूँ। ऐसा ब्रह्माण्डकलामें ज्ञानियोंका निश्चयात्मक बुद्धिसे मिथ्या भास हो रहा है।

५. अहङ्कारः— तेजतत्त्वकी कला है। उसके विषय 'अहङ्कार' और 'अहङ्कारका कर्तव्य' दो प्रकारसे हैं। पञ्च-विषयादि अनेक जड़ कर्तव्यके कर्मरूप अहङ्कारमें पिण्डकलामें संसारीलोग अध्यास बाँधे हैं। और जगत्कर्ता ईश्वर मुक्तिदाता है, ऐसा कल्पनासे मानके उसकी प्राप्तिके लिये जप, तप, तीर्थ, व्रत, नेम, धर्म, योग, ध्यानादि अनेक कर्म भक्त, योगी आदि बिना पारख करते हैं। परन्तु ईश्वर जड़—चैतन्य सबोंमें परिपूर्ण भरा है। यह अहङ्काररूप सूक्ष्म इच्छाध्यास या दृढ़ मानना, तिनका रहकर, ब्रह्माण्डकलामें कर्मी, उपासक, योगी, ज्ञानी आदि सर्व नरजीव भूले हैं। अर्थात् सत्य चेतन स्वरूपका पारखबोध हुए बिना भ्रमवश जीव धोखामें पड़े हैं।

ऐसा चित्त, मन, बुद्धि और अहङ्कार,— ये चारोंका सूक्ष्म

बीज एक 'अन्तःकरण' है; सो निर्विकल्परूप शून्य वृत्तिका मानन्दीरूप आनन्द है । उसीमें अज्ञान और विज्ञानरूपसे पिण्ड, ब्रह्माण्डकलाका अध्यास बना रहता है । सो जड़ाध्यास पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे स्वरूपबोध सत्यनिर्णय करके जिज्ञासुजनोंको छोड़ना चाहिये ।

सूक्ष्मदेहमें पञ्च-प्राण और दश इन्द्रियोंका वर्णन प्रथम ही हुआ है।

सूक्ष्मदेहः– १ चित्त, २ मन, ३ बुद्धि, ४ अहङ्कार, ५ शब्द, ६ स्पर्श, ७ रूप, ८ रस और ९ गन्ध,– ये मुख्य नव तत्त्वोंका सूक्ष्म भाग है । जागृतिमें जो-जो पदार्थ देखे, सुने और विषय-भोग भोगे हैं, उन्होंका संस्कार वा वासना फोटोवत् अन्तःकरण-में गुप्त रहके स्वप्नमें वासनामात्र अनेक पदार्थोंके व्यवहार और सुख-दुःख, हर्ष–शोकादि भोग प्रत्यक्षवत् भास होते हैं । उसीमें पिण्ड और ब्रह्माण्डकलाकी वासना सूक्ष्म बीजरूपसे रहती है । सो वासना बीज पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे, पारख ज्ञानरूप अग्निसे चनेवत् भूँजना चाहिये । जिससे स्थूलदेहरूप वृक्ष कभी उत्पन्न होनेका नहीं । सोई जिज्ञासुजनोंको बनाना चाहिये, तब जीवन्मुक्त स्थिति होगी । सोई स्थिति बनाना नर-जीवोंका निज कर्त्तव्य है । ऐसा जानिये ।

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे–
सप्तम प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ७ ॥ ❀ ॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥*॥ अथ अष्टम प्रकरण प्रारम्भः ॥८॥*॥

कारण, महाकारण, कैवल्यदेह विवरण ।

कारणदेह वर्णन ॥ १ ॥

शून्य निर्विकल्पवत् स्थिति होके, सर्व स्थूल और सूक्ष्मदेहके व्यवहारोंकी सूक्ष्म बीजरूप वासना या अध्यास अन्तःकरणमें रह जाती है। ऐसा बीजरूप अध्यास सोई कारणदेह "अज्ञान सुषुप्ति" है।

अपान वायु गन्धमें मिली, गन्ध पृथ्वी तत्त्वमें रहा। उदान वायु रसमें मिली, रस जलतत्त्वमें रहा। प्राण वायु रूपमें मिली, रूप तेजतत्त्वमें रहा। समान वायु स्पर्शमें मिली, स्पर्श चञ्चल वायुतत्त्वमें रहा। व्यानवायु शब्दमें मिली, शब्द आकाशतत्त्वरूप समान वायुमें रहा। ऐसे दश भाग हृदयमें बीजरूपसे रहे, तब गाढ़-निद्रा वा 'सुषुप्ति अवस्था' होती है।

यहाँ इन्द्रियोंको विश्रान्ति मिलनेसे देहकी सब थकावट दूर हो जाती है। अकेली श्वास चल रही है, उसमें सर्व स्थूल, सूक्ष्म देहोंके कर्मोंका लय होके रहा है। कोई समय श्वास वायुका घोर आवाज हो रहा है, सो भी खबर मनुष्योंको नहीं रहती। शून्य आनन्दमें सबोंका बीज गुप्तरूपसे रहके सब जीव

अज्ञानदशामें धुन्द पड़े रहते हैं; उसको "नित्यप्रलय" कहा है। वह सुषुप्तिका शून्य आनन्द मानन्दीरूपसे पञ्चविषयोंके भोगोंमें, शुभाऽशुभ कर्मोंमें, अष्ट प्रतिमादि पूजन और मानसपूजादि ध्यानके प्रेममें, हठ और राजयोगादि साधनोंके शून्य निर्विकल्प स्थितिमें होता है। सोई अज्ञानदशा शून्यआनन्दरूप 'सुषुप्ति' या 'गाफिली' है।

कारणदेहमें मुख्य अष्ट भाग ॥ २ ॥

१ तमोगुण, २ मकार मात्रा, ३ हृदयस्थान, ४ प्राज्ञ अभिमान, ५ इच्छाशक्ति, ६ आनन्दभोग, ७ पश्यन्ति वाचा और ८ सुषुप्ति अवस्था—ये कारणदेहके मुख्य अष्ट भाग हैं। उसमें:—

१: तमोगुण:—निद्रा, आलस्य, प्रमाद, व्यभिचार, चोरी, जुवारी, हिंसा आदि दुष्कर्मोंमें प्रवृत्तिका गुण (तामसी वृत्ति) सोई तमोगुण है।

२. मकार मात्रा:— हृदयमें या अन्तःकरणमें मानी है।

३. हृदय स्थान:— मध्य अन्तःकरण सोई हृदय स्थान है।

४. प्राज्ञ अभिमान:— विशेष अज्ञान (अविद्या) का अभिमान वहाँ गुप्तरूपसे रहता है।

५. इच्छाशक्ति:— इच्छा या स्फुरणा अध्यावश हृदयमें उठा करनेकी या उठनेकी उसमें शक्ति है।

६. आनन्द भोग:— स्थूल, सूक्ष्म इन्द्रियाँदि सर्व लय हो करके शून्य वृत्तिका आनन्दभास मानन्दीका भोग है।

७. पश्यन्ति वाचाः— केवल शून्य आनन्दको ही जानना, बोलनेको वाचा इस स्थानमें नहीं रहती है।

८. सुषुप्ति अवस्थाः— जाग्रत्, स्वप्नके व्यवहार सर्व इन्द्रियाँदि लय होकर गाढ़ी निद्रामें शून्य गाफिली या बेभान होना, सोई 'सुषुप्ति' अवस्था है।

पूर्वोक्त अष्ट भागोंका मुख्य 'कारण देह' माना है। ऐसे कारण देहके पिण्डकलाकी अज्ञानरूप शून्य आनन्दकी गाफिली या बीज अध्यास पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे सत्सङ्ग विचार करके जिज्ञासु जनोंको मिटाना चाहिये। जिस कारणरूप देहमें स्वप्नका अनुभव हुआ है, जाग्रत् अवस्थामें वह देह नहीं है। जाग्रत् अवस्थामें वह पूर्ववत् अन्ध-हस्त-शून्य, चरण-शून्य, रुग्न और वृद्ध है। अथ च जाग्रत् अवस्थामें उसको स्वप्नावस्थाका स्मरण होता है। यदि कारण देह ही आत्मा मान लिया जाय, तो तमोगुण, मकार मात्रा, हृदय स्थान आदि आठ भागकी कल्पना कैसे हो सकेगी? और स्वप्नदेह तथा जाग्रत् देह भिन्न-भिन्न होनेसे स्वप्नवस्थाका आत्मा और जाग्रत् अवस्थाके आत्मामें क्या भेद रहेगा? इसलिये जाग्रत् अवस्थामें स्वप्न दृष्ट इन सब विषयोंका स्मरण नहीं हो सकेगा। विशेषतः स्मर्त्ता (स्मरणकर्त्ता) स्वप्न और जाग्रत् अवस्थामें देहके भेदको अनुभव करके भी अपनेको अभिन्नरूपमें दोनों देहोंमें प्रत्यक्ष अनुभव करता है। लोकोंका इस प्रकार अनुभव समर्थन करता

है कि, आत्मा कारणदेह नहीं है, वरन् देहसे अतिरिक्त पदार्थ है। वास्तवमें आत्मा माना हुआ तो जीवोंका किया हुआ कल्पना है; कल्पनाकर्ता नर जीव ही नित्य, सत्य स्वयं प्रत्यक्ष है।

केवल स्वप्नावस्थाकी बात ही क्यों कहें? देहात्मवादमें पहले दिनके अनुभव किये विषय अगले दिन स्मरण नहीं रहते। क्योंकि, पहले दिन जो शरीर था, अगले दिन वह शरीर नहीं है; अन्य शरीर हो गया है, ऐसा माने हैं। वही क्या? शरीर क्षण-क्षणमें बदलता रहता है। कुछ दिन पीछे शरीर बिलकुल नया हो जाता है। तब पूर्व शरीरका कुछ नहीं रहता। बाल्यावस्थाका शरीर, यौवन अवस्थामें और यौवनावस्थाका शरीर वृद्धावस्थामें नहीं रहता है। यह प्रत्यक्ष देखा जाता है। बाल्यावस्था और वृद्धावस्थाका शरीर परिवर्तन होनेसे भिन्न-भिन्न है, एक नहीं। यह सर्व सम्मत है। परिमाण-भेद, द्रव्य-भेदका कारण है। एक वस्तुका काल भेदसे परिमाण भेद नहीं हो सकता। अवयवके परिमाणानुसार अवयवीका परिमाण उत्पन्न होता है। बालशरीरका अवयव है, किन्तु वृद्ध शरीरका एक अवयव नहीं है।

जिस-जिस विषयको अनुभव नहीं किया है, उस-उस विषयका स्मरण कारण देहको कभी नहीं हो सकता, यानी कारण देह जड़ है, सत्ता देनेवाला चेतन जीव उससे भिन्न है,

ऐसा जानना चाहिये ।

महाकारण देह वर्णन ॥ ३ ॥

तुरिया अवस्था, जिस समय देही(जीव)को प्राप्त होती है, उस समय वह बाह्य-जगत्का सब विषय भूल जाता है, वृत्ति लय हो जाती है। इस अवस्थाके आनन्द शून्य वृत्तिके अनुभवको सचमुच वही जानता है, जो वास्तविक साधनाभ्यासी योगी है। बड़े ही सौभाग्य और पूर्व जन्मके किसी उत्तम संस्कारसे यह पुण्य अवस्था मिलती है, ऐसा गुरुवा लोग मानते हैं । सर्व साधारण युवा वा वृद्ध शरीर उपरोक्त अवस्थाका कभी अनुभव नहीं कर सकता है ॥

इस अवस्थाके प्राप्त होनेपर ऐसा कौन पदार्थ है, जिसको योगी प्राप्त न कर सके ? ऐसा योगी गुरुवा लोग निश्चय करके मानते हैं ॥ १ ॥

तीनों गुणकी क्रियाएँ श्वासवायुमें लय हुई, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई ॥ २ ॥

अन्तःकरण चतुष्टय और प्राण, अपान, उदान, समान—ये चारों प्राणवायु श्वासमें लय हुए, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई है ॥ ३ ॥

अन्तःकरण पञ्चक और विषय पञ्चक श्वासवायुमें लय हुई, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई ॥ ४ ॥

९ व्याकरणोंकी सर्व वाणी श्वासवायुमें लय हुई, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई ॥ ५ ॥

सप्त महामन्त्रोंके बीज श्वासवायुमें लय हुए, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई ॥ ६ ॥

२१ ब्रह्माण्ड श्वासवायुमें लय हुए, सोई तुरीय साक्षीदशा मानी गई ॥ ७ ॥

ऐसी ७ प्रकारसे तुरिया साक्षीदशा श्वासवायुको शून्य निर्विकल्परूप स्थिर करके मानी गई है।

तुरिया महाकारण देह सोई अर्धमात्रा (मूलमाया) अथवा समानरूप श्वासवायुको ही ठहराये हैं। योगीजन श्वास-वायुको बहुत कालतक लय करके, यही तुरियरूप साक्षीदशासे ऋद्धि-सिद्धि आदि ऐश्वर्य या ब्रह्माण्डकलारूप मायाको प्राप्त करते हैं। ऐसा गुरुवा लोगोंकी मानन्दी है । यह तुरियारूप साक्षीदशासे नरजीवोंकी जीवन्मुक्ति नहीं होती है। क्योंकि, शून्य वृत्तिकी जड़ासक्ति अन्तरमें बनी रहती है । इसीसे तुरिया अवस्थासे जीवन्मुक्ति नहीं होती है, ऐसा जानिये।

महाकारण देहके मुख्य अष्ट भाग ॥ ४ ॥

१ शुद्ध सत्त्वगुण, २ ईकार या अर्धमात्रा, ३ मूर्धनीस्थान, ४ प्रत्यगात्मा अभिमान, ५ ज्ञानशक्ति, ६ आनन्दाभासभोग, ७ परावाचा और ८ साक्षी अवस्था—ये अष्ट-भाग महाकारण देहमें मुख्य माना है।

१. शुद्धसत्त्वगुणः— सद्गुणयुक्त सात्त्विक, शान्त, शुद्ध सरल स्वभावका होना है।

२. ईकार या अर्धमात्रा:— नाभिस्थानमध्यमें मानी है।

३. मूर्धनीस्थान:— तालुस्थान ब्रह्माण्डकलामें और नाभिस्थान पिण्डकलामें माना है।

४. प्रत्यगात्मा अभिमान:— फिर एकोऽहं इच्छासे सर्वपिण्ड-ब्रह्माण्डकला प्रगट होनेका अभिमान। अर्थात् कल्पित ईश्वरीय कला मानी गई है।

५. ज्ञानशक्ति:— कल्पित सर्वज्ञ कला, अर्थात् सर्वको जाननेकी शक्ति माने हैं।

६. आनन्दाभास भोग:—सहस्रदल कमलका अथवा नाभिकमलका गन्ध और स्पर्शका सुखाभास होनेका भोग माने हैं।

७. पारावाचा:— नाभिस्थानमें मानी गई है।

८. साक्षी अवस्था:— तीनों देह तथा तीनों अवस्थाओंको जानना, द्रष्टा स्थितिको साक्षीदशा माने हैं।

तथा ज्योतिप्रकाश देखना, अमृत चाखना, अनहद बाजा सुनना, समाधिके आनन्द लेना, और सहस्रदल कमलके सुगन्ध सूँघना; ऐसे पञ्च सूक्ष्म विषयरूप वासनाको ब्रह्माण्डकला, जाग्रत्स्थिति, साक्षीदशा मानी है। अन्तमें शून्य निर्विकल्परूप महान् आनन्दस्थिति योगमार्गसे भँवरगुफामें होती है। और ब्रह्मज्ञानमार्गसे विज्ञानदशामें होती है, ऐसा गुरुवा लोगोंने माने हैं। यही ब्रह्मदशा व्यापक और न्यारी भ्रमसे ठहराई है। इसीको कल्पनासे 'महाप्रलय' कहते हैं। ऐसी तुरिया अवस्थाको

माननेसे नरजीव गाफिलोरूप भ्रममें पड़े हैं। यहाँ महाकारण देहकी तुरिया साक्षीदशा मानी है, उसीमें जड़, चैतन्य मिश्रित स्थितिका यथार्थसत्य निर्णय पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे पारख-दृष्टि होना चाहिये; तब जिज्ञासुजन जीवन्मुक्त हो जावेंगे। दृढ़ पुरुषार्थ करके सोई बनाना चाहिये।

२१ ब्रह्माण्डोंका वर्णन ॥ ५ ॥

सप्त पाताल प्रथम ही कहे हैं। देहमें सात चक्र माने हैं:- सोई, १ भूर्लोक, २ भुवर्लोक, ३ स्वर्गलोक, ४ महर्लोक, ५ जन-लोक, ६ तपलोक और ७ सत्यलोक, ऐसे सात स्वर्गोंकी कल्पना पिण्डमें और वैसे ही ऊर्ध्वमें या ब्रह्माण्डमें किये हैं। स्वर्गलोकों-को ~~कोई~~ वैकुण्ठलोक, कैलाशलोक, ब्रह्मलोकादि नामोंसे भी कल्पना करते हैं। यहाँ देहमें-१ कपाल, २ नाक, ३ मुख, ४ छाती, ५ पेट, ६ घुटने और ७ पगकी अंगुलियाँ-ये ऊँच-नीच अङ्गोंको ७ मृत्युलोक मानके बाहर पृथ्वी पर भी ७ द्वीप माने हैं। परन्तु ये २१ ब्रह्माण्ड भी महाप्रलयमें नाश होवेंगे ऐसे कल्पनासे गुरुवा लोगोंने ठहराये हैं। ऐसे एकईस ब्रह्माण्डोंको माननेसे मनुष्योंको स्थितिरूप पारखदृष्टि नहीं होती है। अतः परख करके मिथ्या मानन्दीको त्याग देना चाहिये।

कैवल्य देह वर्णन ॥ ६ ॥

तुरिया अवस्थाकी उत्तरकला विज्ञानदशा या 'ज्ञानसुषुप्ति' मानी है। उसीमें बाल, पिशाच, उन्मत्त, मूक और जड़ अज-

गरवत् ऐसी परमहंसदशा ब्रह्मज्ञानी महात्मा धारण करते हैं। हम अक्रिय ब्रह्मस्वरूप हैं। ऐसा कहकर, पाप, पुण्यरूप विधि-निषेधादि सर्व कर्म वे छोड़ देते हैं। फिर पशुवत् धर्म, अर्थात् भक्ष-अभक्ष सेवन, हिंसा, स्त्री-सम्भोगादि निंद्य कर्म भी वे किया करते हैं। महाँगाफिली वा महाँअज्ञानदशा वे धारण किये रहते हैं। और जगत्में तिनको विज्ञानी, ब्रह्मरूप, श्रेष्ठ महात्मा ऐसा कहते हैं। परन्तु सत्यज्ञानकलासे वे नष्ट हुए। श्वासमें लक्ष सदोदित जोड़नेसे जगत्में सिद्धकलाकी महात्म्य कल्पना या विचित्र कार्य भी तिन्होंमें कभी–कभी देख पड़ती है, या कोई युक्ति-प्रयुक्तिसे पाखण्ड कला भी दिखलाते हैं। इसलिये अज्ञानी जन उनको श्रेष्ठ मान रहे हैं। हम कौन हैं ? जगत् क्या है ? यह कुछ समझ रही नहीं। वेदके अद्वैत सिद्धान्तपर खड़े होके, फिर द्वैतरूप दूसरे नरजीवोंको ब्रह्मज्ञानी बोध भी कर रहे हैं। द्वैत भी हैं, अद्वैत भी हैं, न्यारे भी हैं, व्यापक भी हैं, जड़ भी हैं, चैतन्य भी हैं, सर्व हमारा खेल या हमारी लीला है; ऐसे ब्रह्मज्ञानी आवबाव पागलके नाई बकते हैं। वे व्यापकरूप शुद्ध ब्रह्म माननेसे चारों खानियाँ ही रूप बनके सर्व जगत्का अज्ञान, और पाप अपने माथेपर लाद लिये हैं, यह पारख तिनको हुई नहीं। तो ऐसे अन्यायी, अविचारी पारखहीन धोखा टकसारमें नहीं भूलकर, पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे सत्सङ्ग विचार-से जिज्ञासु जनोंको जड़ देहबन्धनसे मुक्त होना चाहिये।

कैवल्य देहमें मुख्य अष्ट भाग ॥ ७ ॥

१. निर्गुण, २. ॐकार मात्रा, ३. ब्रह्मरन्ध्र वा शिखा-स्थान, ४. निरञ्जन अभिमान, ५. ब्रह्मानन्द भोग, ६. परात्पर वाचा, ७. उन्मनी अवस्था और ८. पराशक्ति,— ये मुख्य अष्ट भाग कैवल्य देहमें माने हैं।

१. निर्गुण:—चारों गुणोंमेंसे जिसमें कोई भी गुण न हो, सो निर्गुण कल्पित ब्रह्मको माने हैं।

२. ॐकार मात्रा:— पिण्ड-ब्रह्माण्डरूप सर्व जगत्का अधिष्ठान ब्रह्म, बीज या बिन्दुरूप मात्रा मस्तकमें माने हैं।

३. ब्रह्मरन्ध्र वा शिखा स्थान:— तालूके उपरिभागको ब्रह्म-~~स्थान~~ अमरगुफा या शिखा स्थान कहते हैं।

४. निरञ्जन अभिमान:— सर्व विराट्रूप जगत् अपना ही स्वरूप मानना, वह अभिमान है।

५. ब्रह्मानन्द भोग:— विशेष वृत्तिकी स्थिरतासे होनेवाले निर्विकल्पावस्थाके शून्य आनन्द या सुखको ब्रह्मानन्द भोग माने हैं।

६. परात्पर वाचा:— तुरिया साक्षी अवस्थाके परे महा-जड़दशा अनिर्वाच्य स्थिति है।

७. उन्मनी अवस्था:— मन नष्ट हुआ, ऐसी अवस्था मानी है। परन्तु मैं दशों दिशाओंमें परिपूर्ण भरा हूँ, वह माननारूप मन सूक्ष्म बीजरूपसे बना ही रहा। ऐसी ब्रह्मस्थिति-

को 'एकान्तिक प्रलय' कहा है।

८. पराशक्तिः— सर्वसे परे ब्रह्मकी विज्ञान शक्ति जो है, सोई पराशक्ति है, ऐसा माने हैं।

इसलिये यह कैवल्यदेहकी तुरियातीत महाआनन्दरूप शून्य अन्धाधुन्ध गाफिल दशा है। जगत्का इच्छारूप सूक्ष्म बीज अध्यासरूपसे वहाँ बना ही रहा, सोई जगत् बन्धन जन्म, मृत्युका मूल कारण है। सो पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे जिज्ञासु जनोंको पारख दृष्टिसे समूल नाश करना चाहिये॥

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे-
अष्टम प्रकरणम् समाप्तम् ॥ ८ ॥ ❀ ॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥*॥ अथ नवम प्रकरण प्रारम्भः ॥९॥*॥

नवकोश, चारों देह, वेद, शास्त्रादि वाणीजाल और माया प्रकृतिके अनेक अङ्ग आदि वर्णन ॥ १ ॥

पञ्चकोश विवरण ॥ २ ॥

पाँच जड़ तत्त्वको ही पञ्चकोश माने हैं। १ अन्नमय, २ प्राणमय, ३ मनोमय, ४ ज्ञानमय और ५ विज्ञानमय- ये पञ्चकोशोंके नाम हैं ❀।

❀ छन्दः— अन्नमय अरु प्राणमय। तीजे मनोमय जानिये॥
ज्ञानमय विज्ञानमय सोई। पञ्चकोश बखानिये॥

१. अन्नमय कोशः— स्थूलदेह, पृथ्वीतत्त्वको माना है। उसीसे कर्मकाण्ड प्रगटा है। वर्णाश्रम कर्म, उदर-पोषण कर्म, वाममार्ग दक्षिण मार्गादि सर्व कर्म इसीसे प्रगट हुए हैं।

२. प्राणमय कोशः— सूक्ष्मदेह, जलतत्त्वको माना है। उसीसे उपासना काण्ड, सगुण, निर्गुण उपासना और भक्ति-मार्गादि कर्म प्रगट हुए हैं।

३. मनोमय कोशः— कारणदेह, तेजतत्त्वको माना है। उसीसे योगकाण्ड राजयोग, हठयोगादि सब कर्म प्रगट हुए हैं।

ये तीन कोशोंके भोक्ता त्वंपद, अज्ञानी, जड़ासक्त मनुष्यादि-जीव मायावश पिण्डकलाके अनेक कर्मोंमें बँधे हैं, ऐसा माने हैं।

४. ज्ञानमय कोशः—महाकारण देह, चञ्चल वायुतत्त्वको माना है। उसीसे ज्ञानकाण्ड प्रगटा है। उसीमें परोक्षज्ञान (श्रवण, मनन, विवेकादि), अपरोक्ष ज्ञान (अनुभव ज्ञान), तुरिया साक्षी अवस्था ज्ञानदशाकी पूर्ण स्थिति मानी है। यह कोशका भोक्ता तत्पद ज्ञानी कल्पित ईश्वर मायाधीश माना है। परन्तु ब्रह्माण्डकलाकी उत्पत्ति, पालन और प्रलयमें आप बँधा है, अर्थात् वह मानन्दी तो मिथ्या वाणीमात्र है, यह पारख दृष्टि उन्हें

तत् त्वं असि त्रिविधि वाणी। सबै पहिचानिये ॥
कठिन सो त्रिदोष कारण। परम पद किमि मानिये ? ॥ पञ्चग्रन्थी ॥

अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय- इस प्रकार वेदान्तमें पञ्चकोश माना है ॥

हुई नहीं। इसीसे धोखा, भूल इन ज्ञानियोंकी भी छूटी नहीं। अतः परखके इस भेदको जान लेना चाहिये।

५. विज्ञानमय कोशः— कैवल्यदेह, आकाशतत्त्वरूप समान वायुको माना है। उसीसे विज्ञानमार्ग प्रगटा है। उसीमें कहने-मात्र वाणीका ज्ञान परोक्ष है। और अनिर्वाच्य, अद्वैत ब्रह्म-दशाकी धारणा, वह अपरोक्ष अनुभवरूप ज्ञान जीवन्मुक्त दशा मानी है।

यह कोशका भोक्ता, असिपद विज्ञानरूप शुद्ध ब्रह्म माना है। सो शुद्धब्रह्म सर्वत्र व्यापक मानके पिण्ड—ब्रह्माण्ड ये दोनों कलाओंका सूक्ष्म अहंभाव इच्छारूप अध्यास अपने पास रहकर, ब्रह्मज्ञानी बारम्बार जन्म-मरणरूप झूलेपर झूल रहे हैं। बिना पारख जगत्-ब्रह्मके चक्रसे कभी किसीका छुटकारा होता नहीं।

पञ्च कोशोंमें और दूसरे चार कोश वर्णन ॥ ३॥

१. शब्दमय कोशः— अन्नमय और प्राणमय कोशके सन्धिको माने हैं। सिद्ध योगी दूसरा शरीर बाहर धर लेते हैं, सो "शब्दमय कोश" है, ऐसा कल्पनासे माने हैं ❀।

२. आनन्दमय कोशः— प्राणमय और मनोमय कोशके सन्धिको माने हैं। श्वासमें मनको जोड़नेसे अन्तमें जो मनकी

❀ दोहाः— शब्दमय आनन्दमय। कोशन सन्धि भास॥
प्रकाशमय आकाशमय। गुरुवन कीन्ह प्रकाश॥
सं० 'राम'—

निर्विकल्परूप शून्य आनन्दमय स्थिति होती है, सो "आनन्दमय कोश" मानन्दी किये हैं ।

३. प्रकाशमय कोशः— मनोमय और ज्ञानमय कोशके सन्धिको माने हैं । श्वास स्थिर होनेसे नाभि, हृदय, त्रिकुटी और मस्तकमें अन्य तत्त्वमिश्रित जो श्वास वायुमें प्रकाश दिखाई देता है, सो "प्रकाशमय कोश" है । सो तत्त्वोंके प्रकाश भास मात्रको माने हैं ।

४. आकाशमय कोशः— ज्ञानमय और विज्ञानमय कोशके सन्धिको माने हैं । कल्पित परमात्मा सर्वत्र व्यापक आकाश सरीखा घनवत् भास होता है; ऐसा मिथ्या हठ, पक्ष कल्पनासे माना है । सो महा आनन्दरूप शून्य 'ज्ञानसुषुप्ति' "आकाशमय कोश" है. ऐसा गुरुवा लोगोंने माने हैं ।

ऐसे पञ्चकोश और नवकोशरूप "तत्त्वमसि" के सिद्धान्तमें, खानी– वाणीमें आसक्त सब स्वार्थी संसारी लोग और परमार्थी भक्त, योगी, ब्रह्मज्ञानीजन सब भूले हैं । बिना विचार भ्रम चक्रमें पड़े हैं ।

जब तक जिज्ञासुओंको यथार्थ वक्ता सत्यन्यायी, पारखी, सद्गुरुके दर्शन सत्संग विचारसे सत्य पारखबोधकी प्राप्ति नहीं होती है, तब तक संसारके विषय–खानी–वाणी जालोंमें जीव भटका करते हैं । श्रीसद्गुरुकी दयासे उक्त जालोंको त्यागना चाहिये ।

चारों देहोंके चार-चार भागोंका कोष्ठक–दिग्दर्शन ॥ ४ ॥

विषय नाम	स्थूल देह।	सूक्ष्म देह।	कारणदेह।	महाकारण देह।
गुण ४	रज	सत्त्व	तम	शुद्धसत्त्व
मात्रा ॐ-कार की ४	अकार	उकार	मकार	अर्धमात्रा (श्वासवायु)
स्थान ४	नेत्र वा मुख	कण्ठ	हृदय	नाभि
अभिमान ४	विश्व	तैजस	प्राज्ञ	प्रत्यगात्मा
भोग ४	स्थूल	सूक्ष्म	आनन्द	आनन्दाभास
वाचा ४	वैखरी	मध्यमा	पश्यन्ति	परा
अवस्था ४	जाग्रत्	स्वप्न	सुषुप्ति	तुरिया (साक्षीदशा)
शक्ति ४	क्रिया	द्रव्य	इच्छा	ज्ञान
प्रमाण ४	साढ़ेतीन–हाथ	अङ्गुष्ठ	अर्धअंगुष्ठ	मसुर
साधन ४	श्रवण	मनन	निदिध्यासन	साक्षात्कार
वेद ४	साम	यजुर	अथर्वण	ऋग्
खानी ४	पशु	अण्डज	उष्मज	मनुष्य
काण्ड ४	कर्म	उपासना	योग	ज्ञान
मुक्ति ४	सालोक्य	सामीप्य	सारूप्य	सायुज्य
प्रलय ४	नित्य	नैमित्तिक	एकान्तिक	महा
जाति ४	मनुष्य	देव	राक्षस	सिद्ध
अभाव ४	प्रध्वंस	प्राग्	अन्योऽन्य	अत्यन्ता
पुरुषार्थ ४	काम	धर्म	अर्थ	मोक्ष
मार्ग ४	पपिल	विहङ्गम	कपि	मीन
आश्रम ४	ब्रह्मचर्य	गृहस्थ	वानप्रस्थ	संन्यास
लोक ४	सत्य	वैकुण्ठ	कैलाश	ईश्वर
दशा ४	बाल	पिशाच	उन्मत्त	मूक

ऐसे चारों देहोंके चार-चार अङ्ग बहुत ही भेदसे हुए हैं ॥

एक ही चैतन्य जड़ासक्त अज्ञानी बनके कहीं 'जीव' कहाता है। वही ज्ञानी बनके कल्पनासे कहीं 'ईश्वर' कहाता है। और वही विज्ञानी बनके मानन्दीसे कहीं 'शुद्धब्रह्म' कहाता है। इस प्रकारसे जगत्की पिण्डकला विषयका अध्यास और ब्रह्माण्डकला वाणी कल्पनाकी सबोंका बीज अहंभावरूप ब्रह्मअध्यास टूटके चैतन्य जिज्ञासु नरजीवोंको पारखी सत्यन्यायी श्रीसद्गुरुकी कृपासे पारखदृष्टि प्राप्त कर जड़ नवकोशरूप अध्याससे मुक्त होना चाहिये।

मुसलमानोंमें हिन्दुवत् चार-चार भाग मानना वर्णन ॥ ५ ॥

१. जातिः— १ सैय्यद, २ शेख, ३ मोगल और ४ पठान— ये चार 'जातियाँ वा वर्ण' माने हैं।

२. किताबः— १ तौरेत, २ इञ्जील, ३ जम्बूर और ४ फुर्कान— ये चार किताब मिलकर 'कुरान' माना है।

३. यारः— १ अबूबकर, २ उमर, ३ उसमान और ४ अली,— ये चार यार कहिये मुख्य 'अवलिया' हुये हैं।

४. मुक्ति (जिमी):—१ नासूत, २ मलकूत, ३ जबरूत, और ४ लाहूत,— ये चार 'मुक्तियाँ' मानी हैं।

५. चार मार्गः— (कर्म-उपासनावत्) १ शरीयत्, २ तरीकत, ३ हकीकत और ४ मारफत,— ये चार 'मार्ग' माने हैं।

६. कर्मः— १ सुन्नत करना, २ रोजे (व्रत) ३० दिन-का धरना, ३ शाम-सबेरे बाङ्ग पुकारा करना, और ४ पाँचों वख्त निमाज पढ़ना,- ऐसे चार मुख्य 'कर्म' माने हैं ।

७. पैगम्बरः— १ दाऊद, २ सुलेमान कहिये मोहम्मद, ३ ईसा और ४ मूसा- ये चार 'पैगम्बर' माने गये हैं ।

८. पाँचवीं मुक्ति (जिमी):-हाहूत (हूकामैदान) सर्वत्र व्यापक मानी है । अर्थात् खालीक वा खुदा सब खलकमें वा जगत्में सर्वत्र है, ऐसा ठहराये हैं । 'बाबा आदम' मूल पुरुष, और 'मामाहव्वा' स्त्री वा मूलप्रकृति माने हैं । ऐसा हिन्दु और मुसलमानोंका एक ही सिद्धान्त, कल्पित ईश्वर वा खुदा सबमें व्यापक माना गया है ❊ ।

❊ जिज्ञासुओ ! इस विषयमें सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबने भी कहे हैं, सो सुनिये !—

अर्ध साखीः—"बिन गुरुज्ञान दुन्द भई । खसम कही मिलि बात ॥"
॥ रमैनी ॥ ५ ॥

—अर्थात् संसारमें पारख ज्ञानके बिना मिथ्या नाना प्रकारके मत, पन्थ, ग्रन्थ आदि फैले हुये हैं, सो अनुपयुक्त है । तैसे ही हिन्दु, मुसलमान लोग भी नाहक अविचारसे लड़ते हैं । उन्होंके सिद्धान्त या मानन्दी तो आखिरमें एकसा ही है, सो निम्नलिखित दोनोंके विरुद्ध पक्षके रूपमें दर्शाया है । देखिये !—

हिन्दु और मुसलमान दोनोंके विरुद्ध पक्ष ॥ ६ ॥

हिन्दुके पक्ष ।	मुसलमानके पक्ष ।
१. पूर्वमें ईश्वर ।	१. पश्चिममें खुदा ।
२. चोटी रखना ।	२. डाढ़ी रखना ।
३. जनेऊ पहिरना ।	३. सुन्नत करना ।
४. न्यारी-न्यारी जातियाँ-मानना ।	४. सर्व खाना खानेमें एक ही जात मानना ।
५. सबको भोजन बनाना ।	५. सबको खाना बनाना ।
६. देवता पूजन ।	६. कबर पूजन ।
७. हाथ-पग धोना ।	७. दाढ़ी—मुँह धोना ।
८. ब्रह्मा, केशव, ईश्वर, कहते हैं ।	८. आदम, करीम, खुदा कहते हैं ।
९. पाँडे, पण्डित कहाते हैं ।	९. मौलाना, काजी, कहाते हैं ।
१०. २४ एकादशीके व्रतके दिन हैं ।	१०. ३० दिनोंका व्रत वा रोजा है ।
११. मट्टीके गणपति बनाना ।	११. बाँसके ताजिया बनाना ।

ऐसे हिन्दु और मुसलमानोंके पक्ष न्यारे—न्यारे हुये हैं, परन्तु मानना वा कल्पनाकी मानन्दी दोनोंका एक—सा ही है ।

चार वेदोंका वर्णन ॥ ७ ॥

नादरूप श्वासवायुको भगवान् ठहरायके, ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण

कहानेवाले ऋषियोंने चारों वाचाओंसे बुद्धिविशेषतासे चारों वेद निकाले हैं । इसीमें मुख्य ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण 'निरञ्जन वा ब्रह्म' माना है ।

१. ऋग्वेद*:— परावाचा, नाभिस्थान, तुरिया अवस्था, वायुतत्त्वका अङ्ग माना है । इसीमें समान वायुतत्त्वको ही भगवान् कहते हैं । आपको निराकार, निर्लेप, अगम, अगोचर, वायुवत् माने हैं । पूर्वपक्षमें तुरिया साक्षीरूप और उत्तरपक्षमें व्यापकरूप विज्ञानस्थिति, ऐसा ज्ञानकाण्ड यही वेदसे गुरुवा लोगोंने निकाले हैं । 'सायुज्य मुक्ति' "जलतरङ्गन्याय" माने हैं । धून्यात्मक वायुको साक्षी-ब्रह्म मानके केवल देहभासमें सर्व ब्रह्मज्ञानी बँधे हैं ।

२. अथर्ववेद:– पश्यन्ति वाचा, हृदयस्थान, सुषुप्ति अवस्था, तेजतत्त्वका अङ्ग माना है । इसीमें तेजतत्त्वरूप परमतत्त्व ॐकार-को परमात्मा माने हैं । उस परमात्माको ॐकारकी पाँच मात्रा लेके पञ्चतत्त्वरूप जगत्को ही सत्य सिद्ध किया है । वही कल्पित परमतत्त्व चैतन्यका प्रकाश आकाशतत्त्वरूप समान वायु-सरीखा परिपूर्ण भरा है, ऐसा ठहराये हैं । ऐसा पूर्ण ब्रह्मज्ञान प्रकाश हुये बाद तत्त्वोंकी देह गिरनेसे फिर योगी देह धरते ही नहीं, ऐसा माना है । मुख्य योगकाण्ड यही वेदसे पण्डितों-

---

* ऋग्वेदका प्रादुर्भाव अग्नि ऋषिसे माना गया है ।

ने निकाले हैं । स्वर्गमें 'सारूप्य मुक्ति' "कीटभृङ्ग न्याय *" मानके केवल देहाध्यासमें योगीजन भूले हैं ।

३. यजुर्वेदः— मध्यमा वाचा, कण्ठस्थान, स्वप्नावस्था, जलतत्त्वका अङ्ग माना है । इसीमें जलतत्त्वको ही भगवान् कहे हैं । जलशायी नारायण महाविष्णुको ॐकारअण्ड बिन्दुरूप सर्वत्र व्यापक माने हैं । ऐसी नानाप्रकारकी कल्पना भ्रमिक नर जीवोंने किये हैं ।

उसीके १० या २४ अवतार एकदेशी सगुण परमात्मा मानके, तिन्होंकी ही लीला गाना, जड़ शालिग्राम शिलाकी पूजनादि नवविधा भक्ति फैलाई है । मुख्य उपासनाकाण्ड यही वेदसे भक्तोंने निकाले हैं । स्वर्गमें 'सामीप्यमुक्ति' "हजुरी दासवत्" मानके केवल कल्पनामें भक्तजन भूले हैं ।

४. सामवेदः– वैखरी वाचा, मुखस्थान, जाग्रत् अवस्था, मुख्य पृथ्वीतत्त्वका अङ्ग माना है । इसीमें पृथ्वीतत्त्वको ही कल्पनासे ईश्वर सिद्ध किये हैं । जैसो पृथ्वी गन्धरूपसे सर्वत्र है; तैसे ही जगत्के दृष्टिगोचर, जल, थल, पाषाणादि सर्व पदार्थोंमें ईश्वर व्यापक है, ऐसा सिद्ध किये हैं । मुख्य कर्मकाण्ड यही वेदसे कर्मी लोगोंने निकाले हैं ।

* तहाँ कीट ही भृङ्ग नहीं होता है, बल्कि बिलमें रखा हुआ कीड़े तो मर जाते हैं और भृङ्गके बारीक अण्डोंसे बच्चे निकलके उन कीड़ोंको खाके बढ़ते हैं, फिर समय पायके उड़ जाते हैं, ऐसा परीक्षासे ठहराया गया है ॥

'सालोक्यमुक्ति' "स्वर्गमें वास" माने हैं। ऐसे कल्पित ईश्वर प्राप्तिके लिये जप, तप, तीर्थ, व्रतादि अनेक कर्मसाधनोंको मानके बहुतसे नरजीव कर्म मार्गमें ही भूले हैं।

इसी प्रकारसे चारों वाचासे चारों वेद प्रगटे हैं। सोई बुद्धिरूप ब्रह्माने चारों मुखसे अर्थात् १ परा, २ पश्यन्ति, ३ मध्यमा और ४ वैखरी, ये चारों वाचाओंसे प्रगटे हुये चारों वेद गाये, ऐसा कहे हैं।

५. स्वसंवेदः— यह पाँचवाँ वेद अपने स्वयं प्रकाशका अनुभव है, ऐसा ज्ञानी लोग माने हैं। उसीमें घनवत् समान पाँचों तत्त्वोंमें कल्पित परमात्मा पूर्णरूपसे व्यापक स्थित है। ऐसा थापके, परमहंस विज्ञानी लोग विधि-निषेधरूप सब कर्म छोड़के उन्मत्त गाफिल पड़े हैं। बिना पारख ॥

श्रुति, स्मृति, शास्त्र, पुराणादि वाणी जाल वर्णन ॥ ८ ॥

संस्कृत भाषा बनायके छूटनेको कठिन ऐसा वाणीजाल, भ्रमिक गुरुवालोगोंने रचे हैं। वेदोंके सुलभताके लिये १०८ उपनिषद्रूप श्रुतियाँ * और श्लोकोंमें स्मृतियाँ, †

---

* टिप्पणी:— मुक्तिकोपनिषत्में अध्याय १, श्लोक ३० से ३९ तक १०८ उपनिषदोंका वर्णन हुआ है। उनका नाम निम्न लिखे अनुसार आया है:—

१ ईशावास्योपनिषद्। २ केन। ३ कठ। ४ प्रश्न। ५ मुण्डक। ६ माण्डूक्य। ७ तैत्तिरीय। ८ ऐतरेय। ९ छान्दोग्य। १० बृहदारण्यक। ११ ब्रह्म। १२ कैवल्य। १३ जाबाल। १४ श्वेताश्वतर। १५ हंस। १६

आरुणिक। १७ गर्भ। १८ नारायण। १९ परमहंस। २० अमृतबिन्दु। २१ अमृतनाद। २२ अथर्वशिरस्। २३ अथर्वशिखा। २४ मैत्रायणी। २५ कौषातकीब्राह्मण। २६ बृहज्जाबाल। २७ नृसिंहतापनीय। २८ कालाग्निरुद्र। २९ मैत्रेयी। ३० सुबाल। ३१ क्षुरिका। ३२ मन्त्रिका। ३३ सर्वसार। ३४ निरालम्ब। ३५ शुकरहस्य। ३६ वज्रसूचिका। ३७ तेजोबिन्दु। ३८ नादबिन्दु। ३९ ध्यानबिन्दु। ४० ब्रह्मविद्या। ४१ योगतत्त्व। ४२ आत्मप्रबोध। ४३ नारदपरिव्राजक। ४४ त्रिशिखिब्राह्मण। ४५ सीता। ४६ योगचूड़ामणि। ४७ निर्वाण। ४८ मण्डलब्राह्मण। ४९ दक्षिणामूर्ति। ५० शरभ। ५१ स्कन्द। ५२ त्रिपाद्विभूतिमहानारायण। ५३ अद्वयतारक। ५४ रामरहस्य। ५५ रामतापनीय। ५६ वासुदेव। ५७ मुद्गल। ५८ शाण्डिल्य। ५९ पैङ्गल। ६० भिक्षुक। ६१ महत्। ६२ शारीरक। ६३ योगशिखा। ६४ तुरीयातीत। ६५ संन्यास। ६६ परमहंसपरिव्राजक। ६७ अक्षमाला। ६८ अव्यक्त। ६९ एकाक्षर। ७० अन्नपूर्णा। ७१ सूर्य। ७२ अक्षि। ७३ अध्यात्म। ७४ कुण्डिका। ७५ सावित्री। ७६ आत्मा ७७ पाशुपत। ७८ परब्रह्म। ७९ अवधूत। ८० त्रिपुरातापनीय। ८१ देवी। ८२ त्रिपुरा। ८३ कठरुद्र। ८४ भावना। ८५ रुद्रहृदय। ८६ योगकुण्डली। ८७ भस्मजाबाल। ८८ रुद्राक्षजाबाल। ८९ गणपति। ९० जाबालदर्शन। ९१ तारसार। ९२ महावाक्य। ९३ पञ्चब्रह्म। ९४ प्राणाग्निहोत्र। ९५ गोपालतापनीय। ९६ कृष्ण। ९७ याज्ञवल्क्य। ९८ वराह। ९९ शाट्यायनीय। १०० हयग्रीव। १०१ दत्तात्रेय। १०२ गरुड़। १०३ कलिसंतरण। १०४ जाबालि। १०५ सौभाग्यलक्ष्मी। १०६ सरस्वतीरहस्य। १०७ बह्वृच। और १०८ मुक्तिकोपनिषद् है ॥

कल्याण—उपनिषद् अंक २३ + १ में—"उपलब्ध उपनिषद् ग्रन्थोंकी सूची" नामक लेख छपा है। उसमें लिखा है—"मुक्तिकोपनिषद्‌में एक सौ आठ उपनिषदोंके नाम आते हैं। वे सभी "निर्णयसागर प्रेस" बम्बईसे मूल गुटकाके रूपमें प्रकाशित हैं। इसके सिवा, 'अडियार लाइब्रेरी' मद्रासके भी उपनिषदोंका एक संग्रह प्रकाशित हुआ है, जो अनेक भागों-

में विभक्त है। उस संग्रहमें लगभग १७६ उपनिषदोंका प्रकाशन हो गया है। इसके अतिरिक्त 'गुजराती प्रिंटिंग प्रेस' बम्बईसे मुद्रित उपनिषद्-वाक्य-महाकोषमें २२३ उपनिषदोंकी नामावली दी गई है। इनमें दो उपनिषद् — १ उपनिषत्स्तुति तथा २ देव्युपनिषद् नं० २ की चर्चा शिव-रहस्य नामक ग्रन्थमें की गयी है। ये दोनों अभी तक उपलब्ध न हो सकी हैं। शेष २२१ उपनिषदोंके वाक्यांश इस महा कोषमें संकलित हुए हैं। इनमें भी माण्डूक्यकारिकाके चार प्रकरण चार जगह गिने गये हैं। इन सबकी एक संख्या मानें, तो २१८ ही संख्या होती है। कई उपनिषदें एक ही नामकी दो–तीन जगह आयी हैं; पर वे स्वतन्त्र ग्रन्थ हैं। इस प्रकार सब पर दृष्टिपात करनेसे यह निश्चित होता है कि, अब तक लगभग, २२० उपनिषदें प्रकाशमें आ चुकी हैं।"………

उपर्युक्त २२० उपनिषदोंकी नामावली अकारादि क्रमसे संपूर्ण वहाँ दी हुई है, जिसको विशेष जाननेकी जिज्ञासा हो, वे उपनिषद् अंक देख लेवें ॥

† मुख्य–मुख्य स्मृतियोंके नामः—

१. मनुस्मृतिः (इसमें सब १२ अध्याय हैं)। २. अत्रिस्मृतिः (१ अध्याय)। ३. विष्णुस्मृति (५ अध्याय)। ४. हारीतस्मृति (७ अध्याय)। ५. औशनसीस्मृति (१ अ०)। ६. आङ्गिरसस्मृति (१ अ०)। ७. यमस्मृति (१ अ०)। ८. आपस्तंबस्मृति (१० अध्याय)। ९. संवर्तस्मृति (१ अ०)। १०. कात्यायनस्मृति (२६ खण्ड)। ११. बृहस्पतिस्मृति (१ अ०)। १२. पराशरस्मृति (१२ अ०)। १३. व्यास-स्मृति (४ अ०)। १४. शंखस्मृति (१८ अ०)। १५. लिखितस्मृति (१ अ०)। १६. दक्षस्मृति (७ अ०)। १७. गौतमस्मृति (२९ अ०)। १८. शातातपस्मृति (६ अ०)। १९. वशिष्ठस्मृति (२१ अध्याय)। २०. याज्ञवल्क्यस्मृति; इत्यादि प्रकारसे कहा गया है, सब स्मृतियाँ भी १०८ बने हैं। उसे ही धर्मशास्त्र माने हैं।

ये भी संस्कृत भाषामें बनाय रखे हैं। श्रुतियोंमें थोड़ा ही कहनेमें बहुत-सा अर्थ लगाये हैं, ऐसा चतुराई दिखलाये हैं।

अनन्तर उन सर्व उपनिषदोंमें १ ईश, २ केन, ३ कठ, ४ प्रश्न, ५ मुण्डक, ६ माण्डूक्य, ७ तैत्तिरीय, ८ ऐतरेय, ९ छान्दोग्य और १० बृहदारण्यक— ये दश उपनिषद् श्रेष्ठ गिने हैं *। और अलग ही चार उपवेद भी बनाये हैं †।

१. आयुर्वेदः— रोगनिवृत्तिका प्रकार बताता है।

२. धनुर्वेदः— युद्धक्रियादिकोंका वर्णन करता है।

३. गान्धर्ववेदः— गायनादि कला बताता है।

४. अर्थवेदः— द्रव्यप्राप्ति, पाकविधि आदि प्रकार वर्णन करता है।

---

* श्लोकः— "ईश केन कठ प्रश्न मुण्ड माण्डुक्य तैत्तिरी ॥
ऐतरेयं च छान्दोग्यं, बृहदारण्यकं तथा ॥" मु० उ० ॥

† वेद चार हैं:—१ ऋग्वेद । २ यजुर्वेद । ३ सामवेद, और ४ अथर्वणवेद। इन्हीं वेदोंसे चार उपवेद निकाले गये । जैसेकि— धन्वन्तरीने ऋग्वेदसे आयुर्वेद निकाला। विश्वामित्रने यजुर्वेदसे धनुर्वेद निकाला। भरत मुनिने सामवेदसे गान्धर्ववेद निकाला, और विश्वकर्माने अथर्वणवेदसे स्थापत्यनिकाला ॥

चारों वेदोंकी ११३१ शाखाएँ माने हैं; जिनमें ऋग्वेदकी २१, यजुर्वेदकी १०१, सामवेदकी १००० और अथर्ववेदकी ९ शाखाएँ कहे हैं। इनमेंसे अधिकतर लुप्त हो चुकी हैं। कुछ अभी उपलब्ध हैं ॥

वेदोंमें मुख्य षट् अङ्ग * कहा है; वे १ शिक्षा, २ कल्प, ३ व्याकरण, ४ निरुक्त, ५ ज्योतिष और ६ पिङ्गल (छन्दः शास्त्र) नामसे बने हैं। इन छः को वेदाङ्ग कहते हैं।

१. शिक्षामें:— वेदोंके ऋचाओंकी शुद्धि लिखी है। इसे वेदकी 'घ्राणेन्द्रिय' कहा गया है।

२. कल्पमें:— अनुष्ठान, यज्ञविधि प्रकार कहा है। ये वेदोंके 'हाथ' माने गये हैं।

३. व्याकरणमें:— अक्षरोंकी शुद्धता है। १ सारस्वत, २ चन्द्रिका, ३ कौमुदी, ४ मनोरमा, ५ शब्दरत्न, ६ शेखर, ७ मञ्जूषा, ८ भूषण और ९ भाष्य, ऐसे नव व्याकरण † बनाये हैं। व्याकरण वेदका 'मुख' कहा गया है।

४. निरुक्तमें:— वेदोंके कठिन-कठिन शब्दोंके अर्थ कहा गया है। इसे वेदोंके 'कान' कहते हैं।

५. ज्योतिषमें:— ब्रह्माण्डकला प्रश्न, मुहूर्त, ग्रहण, नवग्रह, तीन समयोंका गणित और फलका वर्णन किया है। इसे वेदका 'नेत्र' माना जाता है।

---

* दोहा:—पिङ्गल शिक्षा कल्प औ। ज्योतिष व्याकरण निरुक्त॥
षट् अंग वेद याको कहैं। विदुष मुनि जन उक्त॥

† दोहा:—सारस्वत कौमुदी चन्द्रीका। मनोरमा औ भाष्य॥
भूषण शेखर मञ्जूषा। शब्दरत्न नवखाष्य॥

संशोधक, 'राम'—

६. (छन्दः) पिङ्गलमें:— काव्य बनानेका विधि कहा है। इसे वेदका 'चरण' कहा जाता है *।

---

* नारदपुराण वेदाङ्ग-शिक्षादि निरूपणका संक्षिप्त सारांश वर्णनः— शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्यौतिष तथा छन्दः शास्त्र—इन छः को विद्वान् पुरुष वेदाङ्ग कहते हैं। धर्मका प्रतिपादन करनेमें ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद—ये चार वेद ही प्रमाण बताये गये हैं। जो श्रेष्ठ द्विज गुरुसे छहों अङ्गों सहित वेदोंका अध्ययन भली भाँति करता है, वह 'अनूचान' होता है; अन्यथा करोड़ों ग्रन्थ बाँच लेनेसे भी कोई 'अनूचान' नहीं कहला सकता।

अधिक आयु हो जानेसे, बाल पक जानेसे, धनसे अथवा बन्धु-बान्धवोंसे कोई बड़ा नहीं होता। ऋषि-मुनियोंने यह धर्मपूर्ण निश्चय किया है कि, हमलोगोंमें जो 'अनूचान' हो, वही महान् है।

(१) वेदोंकी शिक्षामें स्वरको प्रधान कहा है। सात स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छना और उनचास तान—इन सबको स्वर-मण्डल कहा गया है। षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, तथा सातवाँ निषाद—ये सात स्वर हैं। षड्ज, मध्यम, और गान्धार—ये तीन ग्राम कहे गये हैं। सामगान करनेवाले विद्वान् मध्यम ग्राममें बीस, षड्ज ग्राममें चौदह तथा गान्धार ग्राममें पन्द्रह तान स्वीकार करते हैं। नन्दी, विशाला, सुमुखी चित्रा, चित्रवती, सुखा तथा बला—ये देवतोंकी सात मूर्च्छनाएँ जाननी चाहिये। आप्यायिनी, विश्वभृता, चन्द्रा, हेमा, कपर्दिनी, मैत्री तथा बार्हती—ये पितरोंकी सात मूर्च्छनाये हैं। उत्तरमन्द्रा, अभिरूढता, अश्वक्रान्ता, सौवीरा, हृषिका, उत्तरायता, तथा रजनी—ये ऋषियोंकी सात मूर्च्छनाएँ हैं। गानकी गुणवृत्ति दस प्रकारकी है, अर्थात् लौकिक-वैदिक गान दस गुणोंसे युक्त हैं। रक्त, पूर्ण, अलंकृत, प्रसन्न, व्यक्त, विक्रुष्ट, श्लक्ष्ण, सम, सुकुमार तथा मधुर—ये ही वे दसों

गुण हैं । जिसमें पद, पदार्थ, प्रकृति, विकार, आगम, लोप, कृदन्त, तद्धित, समास, धातु, निपात, उपसर्ग, स्वर, लिङ्ग, वृत्ति, वार्तिक, विभक्त्यर्थ तथा एक वचन बहुवचन आदिका भली भाँति-उपपादन हो, उसे 'व्यक्त' कहते हैं ।

शङ्कित, भीषण, भीत, उद्घुष्ट, आनुनासिक, काकस्वर, मूर्द्धगत (अत्यन्त उच्चस्वरसे सिरतक चढ़ाया हुआ अपूर्णगान), स्थान–विवर्जित, विस्वर विरस, विश्लिष्ट, विषमाहत, व्याकुल तथा तालहीन–ये चौदह गीतके दोष हैं ।

संगीतमें किसी सप्तकके बाईस भागोंमेंसे एक भाग अथवा किसी स्वरके एक अंशको श्रुति कहते हैं । स्वरका आरम्भ और अन्त इसीसे होता है । षड्जमें चार, ऋषभमें तीन, गान्धारमें दो, मध्यम और पञ्चम में चार-चार, धैवतमें तीन और निषादमें दो श्रुतियाँ होती हैं ।

संगीतमें एक ग्रामसे दूसरे ग्राम तक जानेमें सातों स्वरोंका जो आरोहावरोह होता है, उसीका नाम मूर्च्छना है । ग्रामके सातवें भागको ही मूर्च्छना कहते हैं । भरतमुनिके मतसे गाते समय गलेकी कँपकँपी से ही मूर्च्छना होती है । किसी-किसीके मतसे स्वरके सूक्ष्म विरामका नाम मूर्च्छना है । तीन ग्राम होनेके कारण इक्कीस मूर्च्छनाएँ होती हैं ।

मूर्च्छना आदि द्वारा राग या स्वरके विस्तारको तान कहते हैं । संगीत दामोदरके मतसे स्वरोंसे उत्पन्न तान ४९ हैं । इन ४९ तानोंसे भी ८३०० कूट तान निकलते हैं । किसी-किसीके मतसे कूट तानोंकी संख्या ५०४० भी मानी गई है ॥

(२) कल्प पाँच प्रकारके माने गये हैं:—नक्षत्रकल्प, वेदकल्प, संहिताकल्प, आङ्गिरसकल्प और शान्तिकल्प–ये उनके नाम हैं ।

(३) व्याकरणमें–सुबन्त और तिङन्त पदको शब्द कहते हैं । सुप्‌की सात विभक्तियाँ हैं । उनमेंसे–सु, औ, जस्—प्रथमा । अम् , औ, शस्–द्वितीया । टा, भ्याम् , भिस्–तृतीया । ङे, भ्याम् , भ्यस्–चतुर्थी । ङसि, भ्याम् , भ्यस्–पञ्चमी । ङस् , ओस् , आम्–षष्ठी । ङि, ओस् ,

सुप्-सप्तमी। तिङन्त प्रकरणमें धातुओंके रूपोंका दिग्दर्शन कराया है। वैयाकरणोंने दस प्रकारके धातुसमुदाय माने हैं। उन्हें 'नवगणी' या 'दसगणी'-के नामसे जाना जाता है। उनके नाम ये हैं:—भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि क्र्यादि तथा चुरादि। कृदन्त प्रकरण और समास प्रकरण अलग-अलग ही कहा है। समास चार प्रकारके माने गये हैं:—अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि और द्वन्द्व। इस प्रकार व्याकरणमें धातु, प्रत्यय, सन्धि, समास, लिंग आदि भेदोंसे शब्दोंका साधन किया गया है।

(४) निरुक्त वैदिक धातुरूप है, इसे पाँच प्रकारका बताया गया है। उसमें कहीं वर्णका आगम होता है, कहीं वर्णका विपर्यय होता है, कहीं वर्णोंका विकार होता है, और कहीं वर्णका नाश माना गया है। जहाँ वर्णोंके विकार अथवा नाशद्वारा जो धातुके साथ विशेष अर्थका प्रकाशक संयोग होता है, वह पाँचवाँ उत्तमयोग कहा गया है। भिन्न-भिन्न दिशा, देश, और कालमें प्रकट हुए शब्द अनेक अर्थोंके बोधक होते हैं। वे देश-कालके भेदसे सभी लिङ्गोंमें प्रयुक्त होते है। यहाँ गण-पाठ, शूत्रपाठ, धातुपाठ तथा अनुनासिकपाठ-पारायण कहा गया है।

(५) ज्यौतिषशास्त्र चार लाख श्लोकोंका बताया गया है। उसके तीन स्कन्ध हैं। जिनके नाम ये हैं:—गणित (सिद्धान्त), जातक (होरा), और संहिता। और किसी-किसीके मतसे ज्यौतिषके पाँच स्कन्ध हैं—सिद्धान्त, होरा, संहिता, स्वर और सामुद्रिक॥ १. गणितमें—परिकर्म (योग, अन्तर, गुणन, भजन, वर्ग, वर्गमूल, घन और घनमूल हैं), ग्रहोंके मध्यम, एवं स्पष्ट करनेकी रीतियाँ बताई गयी हैं। इसके सिवा अनुयोग (देश, दिशा और कालका ज्ञान), चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, उदय, अस्त, छायाधिकार, चन्द्र-शृङ्गोन्नति, ग्रहयुति (ग्रहोंका योग) तथा पात (महापात = सूर्य-चन्द्रमाके क्रान्तिसाम्य) का साधन-प्रकार कहा गया है॥ २. जातकस्कन्धमें—राशिभेद, ग्रहयोनि (ग्रहोंकी जाति, रूप और गुण आदि), वियोनिज (मानवेतर-जन्मफल), गर्भाधान, जन्म,

अरिष्ट, आयुर्दाय, दशाक्रम, कर्माजीव (आजीविका), अष्टकवर्ग, राजयोग, नाभसयोग, चन्द्रयोग, प्रव्रज्यायोग, राशिशील, ग्रहदृष्टिफल, ग्रहोंके भावफल, आश्रययोग, प्रकीर्ण, अनिष्टयोग, स्त्रीजातक-फल, निर्याण (मृत्युविषयक विचार), नष्ट-जन्म-विधान (अज्ञात जन्म-कालको जाननेका प्रकार) तथा द्रेष्काणोंके स्वरूप (राशिके तृतीय भाग (१० अंश) की द्रेष्काण संज्ञा है)—इन सब विषयोंका वर्णन है ॥

३. अब संहितास्कन्धके स्वरूपका परिचय दिया जाता है। उसमें—ग्रहचार (ग्रहोंकी गति), वर्षलक्षण, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त, उपग्रह, सूर्य-संक्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रमा, और ताराका बल सम्पूर्ण लग्नों तथा ऋतुदर्शनका विचार, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्न-प्राशन, चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, मौञ्जीबन्धन (वेदारम्भ), क्षुरिकाबन्धन, समावर्तन, विवाह, प्रतिष्ठा, गृहलक्षण, यात्रा, गृहप्रवेश, तत्काल वृष्टिज्ञान, कर्मवैलक्षण्य तथा उत्पत्तिका लक्षण—इन सब विषयोंका वर्णन है ॥

(६) छन्द दो प्रकारके बताये जाते हैं—१ वैदिक, और लौकिक। (१ वेदमन्त्रोंमें जो गायत्री, अनुष्टुप् , और त्रिष्टुप् आदि छन्द प्रयुक्त हुए हैं, उनको वैदिक छन्द कहते हैं। २ इतिहास, पुराण काव्य आदिके पद्योंमें प्रयुक्त जो छन्द हैं, वे लौकिक कहे गये हैं)। मात्रा और वर्णोंके भेदसे वे लौकिक या वैदिक छन्द भी पुनः दो-दो प्रकारके हो जाते हैं (मात्रिक छन्द और वर्णिक छन्द)। छन्दःशास्त्रके विद्वानोंने मगण, यगण, रगण, सगण, तगण, जगण, भगण और नगण तथा गुरु एवं लघु—इन्हींको छन्दोंकी सिद्धिमें कारण बताया है। जिसमें सभी अर्थात् तीनों अक्षर गुरु हों, उसे मगण (ऽऽऽ) कहा गया है। जिसका आदि अक्षर लघु (और शेष दो अक्षर गुरु) हो, वह यगण (।ऽऽ) माना गया है। जिसका मध्यवर्ती अक्षर लघु हो, वह रगण (ऽ।ऽ) और जिसका अन्तिम अक्षर गुरु हो, वह सगण (।।ऽ) है। जिसमें अन्तिम अक्षर लघु हो, वह तगण (ऽऽ।) कहा गया है। जहाँ मध्य गुरु हो, वह जगण

(ऽ।) और जिसमें आदि गुरु हो, वह भगण ऽ।। है। जिसमें तीनों अक्षर लघु हों, वह नगण (।।।) कहा गया है। तीन अक्षरोंके समुदायका नाम गण है।

गणोंके सम्बन्धमें कुछ ज्ञातव्य बातें निम्नाङ्कित कोष्ठकसे जाननी चाहिये।

गणनाम	मगण	यगण	रगण	सगण	तगण	जगण	भगण	नगण
स्वरूप	ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ।।	।।।
देवता	पृथ्वी	जल	अग्नि	वायु	आकाश	सूर्य	चन्द्रमा	स्वर्ग
फल	लक्ष्मी वृद्धि	वृद्धि या अभ्युदय	विनाश	भ्रमण	धननाश	रोग	सुयश	आयु
मित्रआदि संज्ञाएं	मित्र	भृत्य	शत्रु	शत्रु	उदासीन	उदासीन	भृत्य	मित्र

आर्या आदि छन्दोंमें चार मात्रावाले पाँच गण कहे गये हैं, जो चार लघुवाले गणसे युक्त हैं।

(सर्वगुरु	अन्त्यगुरु	मध्यगुरु	आदिगुरु	चतुर्लघु
ऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ।।	।।।।
१	२	३	४	५

इन भेदोंके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं:— कर्ण, करतल, पयोधर, बसुचरण और विप्र।)

यदि लघु अक्षरसे परे संयोग, विसर्ग और अनुस्वार हो, तो वह लघुकी दीर्घताका बोधक होता है। इस छन्दःशास्त्रमें 'ग' का अर्थ गुरु

इतनी अनेक प्रकारकी वाणी बनी, परन्तु कोई बिरले नर-जीवोंको ब्रह्मबोध हुआ, ऐसा माने हैं । फिर सुलभताके लिये

या दीर्घ माना गया है और 'ल' का अर्थ लघु समझा जाता है। पद्य या श्लोकके एक चौथाई भागको पाद कहते हैं । विच्छेद या विरामका नाम 'यति' है। वृत्त (छन्द) के तीन भेद माने गये हैं— समवृत्त, अर्ध-समवृत्त तथा विषम वृत्त। जिसके चारों चरणोंमें समान लक्षण लक्षित होता हो, वह 'समवृत्त' कहलाता है। जिसके प्रथम और तीसरे चरणोंमें एवं दूसरे तथा चौथे चरणोंमें समान लक्षण हों, वह 'अर्धसमवृत्त' है। जिसके चारों चरणोंमें एक-दूसरेसे भिन्न लक्षण लक्षित होते हों, वह 'विषमवृत्त' है। एक अक्षरके पादसे आरम्भ करके, एक-एक अक्षर बढ़ाते हुए जबतक छब्बीस अक्षरका पाद पूरा हो, तबतक पृथक्-पृथक् छन्द बनते हैं । छब्बीस अक्षरसे अधिकका चरण होनेपर चण्डवृष्टिप्रपात आदि दण्डक बनते हैं। तीन या छः पादोंसे गाथा होती है। अब क्रमशः एकसे छब्बीस अक्षर तकके पादवाले छन्दोंकी संज्ञा सुनोः-१उक्ता, २ अत्युक्ता, ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा. ५ सुप्रतिष्ठा, ६ गायत्री, ७ उष्णिक् , ८ अनुष्टुप्, ९ बृहती, १० पङ्क्ति, ११ त्रिष्टुप् १२ जगती, १३ अतिजगती, १४ शक्वरी, १५ अतिशक्वरी, १६ अष्टि, १७ अत्यष्टि, १८ धृति, १९ विधृति (या अतिधृति), २० कृति, २१ प्रकृति, २२ आकृति, २३ विकृति, २४ संकृति, २५ अतिकृति या अभिकृति, तथा उत्कृति। ये छन्दोंकी संज्ञाएँ हैं, प्रस्तारसे इनके अनेक भेद होते हैं। (छन्दः शास्त्रमें छः प्रत्यय होते हैं:- १ प्रस्तार, २ नष्ट, ३ उद्दिष्ट, ४ एकद्व्यादिलगक्रिया, ५ संख्यान और ६ अध्वयोग। प्रस्तारका अर्थ है फैलाव; अमुक संख्या युक्त अक्षरोंसे बने हुए पादवाले छन्दके कितने और कौन-कौनसे भेद हो सकते हैं ? इस प्रश्नका समाधान करनेके लिये जो क्रिया की जाती है; उसका नाम प्रस्तार है।) यह छन्दोंका किञ्चित् लक्षण बताया गया है॥

त० यु० नि० ९—

छः शास्त्र भी संस्कृत भाषामें ऋषियोंने बनाये हैं ।

१ मीमांसा, २ वैशेषिक, ३ न्याय, ४ पातञ्जल (योग), ५ सांख्य और ६ वेदान्त, ये छः शास्त्रोंके नाम हैं * ।

---

* टिप्पणी:— संक्षिप्त षट्शास्त्र–दर्शनोंके कथन वर्णन ।

(१) पूर्वमीमांसा– दर्शनकी रचयिता आचार्य जैमिनि हुए । ये वेद-व्यास बादरायणके शिष्य थे । मीमांसामें अपूर्व, नियम, परिसंख्या आदि विधि भेद तथा अर्थवादादि भेदसे वेदवाक्योंके अर्थ लगानेकी पद्धति कही गयी है । 'अथातो धर्म जिज्ञासा' आदि सूत्रोंका निर्माण जैमिनिने मीमांसामें किया है । इन सूत्रोंका शबरस्वामीने भाष्य किया है । कुमारिलभट्ट आदि और भी कई इस शास्त्रके आचार्य हुए हैं। पूर्व मीमांसादर्शन कर्म-सिद्धान्तका प्रतिपादन करता है । वेदोंके विधि, अर्थवाद, मन्त्र, स्मृति, और नामधेय—ये पाँच अङ्ग हैं । वेदादि किसी ग्रन्थका तात्पर्य समझनेके लिये ग्रन्थका उपक्रम, उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता, फल, अर्थवाद, और उपपत्ति—इन सात बातोंपर ध्यान देना आवश्यक है । कर्मफलका विधान, कर्मभेद आदिका वर्णन धर्मके विवेचनके साथ किया गया है । इत्यादि कहा है ॥

(२) वैशेषिक– दर्शनमें कणादके मतानुसार, भावरूप पदार्थ छः हैं— १ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य (जाति), ५ विशेष और ६ समवाय । इनके अतिरिक्त अभावरूप एक सातवाँ पदार्थ भी माना जाता है । उक्त पदार्थोंमें पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन—ये नौ 'द्रव्य' कहा है । ये द्रव्य ही क्रिया, गुणके आश्रय तथा समवायी कारण हैं । रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, और संस्कार—ये चौबीस 'गुण' माने जाते हैं । इनमें रूप (रङ्ग) सात

प्रकारका, रस छः प्रकारका, गन्ध दो प्रकारका (सुगन्ध, दुर्गन्ध) तथा बुद्धि दो प्रकारकी—संशयात्मिका तथा निश्चयात्मिकारूप होती है। निश्चयात्मिका बुद्धि प्रमा (विद्या) है। अनिश्चयात्मिका बुद्धि अप्रमा (अविद्या) के तीन रूप हैं—संशय, विपर्यय (उलटा ज्ञान) और स्वप्न। प्रमा–बुद्धि प्रत्यक्ष एवं अनुमानके आधारपर रहती है। संस्कार तीन प्रकारके होते हैं—वेग, भावना और स्थितिस्थापक। 'कर्म' पाँच प्रकारका होता है—उत्क्षेपण (उछालना), अवक्षेपण (फेंकना), आकुञ्चन (सिकोड़ना), प्रसारण (फैलाना), और गति वा गमन (चलना)। पर और अपर—यह दो प्रकारका 'सामान्य' है। सब पदार्थोंमें जो एकता है, वह सामान्य-तत्त्व है। परमाणुओंमें स्थित अतीन्द्रिय तत्त्व, जो उनकी पृथक्ताका कारण है, 'विशेष' है। वह 'विशेष' अनन्त है। 'समवाय' एक है, पदार्थोंका नित्य सम्बन्ध समवाय है। अभाव चार प्रकारका है—प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव, और अत्यन्ताभाव। इत्यादि कहा है॥

(३) न्याय दर्शनमें गौतमने कहा है—न्यायमतके अनुसार प्रमाण, प्रमेय आदि सोलह तत्त्वोंके यथार्थ ज्ञानसे निःश्रेयस (मुक्ति) की प्राप्ति होती है। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द—ये चार प्रमाणको ज्ञानके चार साधन कहा है। गौतमके मतमें प्रमेयादि पच्चीस तत्त्व इस प्रकार हैं— आत्मा, आयतन (शरीर), इन्द्रिय, अर्थ (विषय), बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख, अपवर्ग (ये १२ प्रमेय हैं, इनका ज्ञान ही मोक्षका कारण है), संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त (यह चार प्रकारका है—सर्वतन्त्र, प्रतितन्त्र, अधिकरण और अभ्युपगम), अवयव (प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन), तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास (इसके पाँच भेद हैं—सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम, साध्यसम और कालातीत), छल (यह वाक्छल, सामान्य छल, उपचारछल—इस तरह तीन प्रकारका है), जाति और निग्रह स्थान।

इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख तथा ज्ञान— ये आत्मा (जीव) के चिह्न कहा है। संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, इच्छा, बुद्धि और प्रयत्न—ये आत्मा तथा ईश्वरके गुण माने हैं। शरीर चेष्टा, इन्द्रियों तथा विषयोंका आश्रय है। अर्थ सब परमाणुरूप हैं। पूर्वकृत कर्मसे शरीर बना है। पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ पञ्चभूतोंके सूक्ष्मांशसे बनी हैं। मन अणुरूप अन्तरिन्द्रिय है। बुद्धि केवल ज्ञानोपलब्धिमात्र है, वह अनित्य है। इत्यादि कहा है॥

(४) योगदर्शनमें चित्तकी वृत्तियोंके निरोधका उपाय वर्णित है। योगके आठ अङ्गः— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधिके अभ्याससे अन्तःकरणकी वृत्तियोंका निरोध होता है। समाधि दो प्रकारकी है—सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात। योग मतानुसार समाधिद्वारा प्रकृति और पुरुषका पृथक् विवेचन हो जानेसे प्रकृतिका व्यापार बन्द हो जाता है और इसीसे मुक्ति होती है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—ये पाँच 'यम' हैं। शौच, सन्तोष, तपस्या, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान—ये पाँच 'नियम' हैं। पद्मासन, स्वस्तिकासन आदि ८४ 'आसन' हैं। पूरक, रेचक, कुम्भकके मात्राभेदसे 'प्राणायाम' नौ प्रकारके हैं। योगकी साधनासे अणिमा आदि आठ प्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, ऐसा माने हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश— ये जीवके पाँच क्लेश हैं। इनसे नित्यमुक्त, कर्मविपाक तथा आसय-सम्पर्कसे शून्य, अद्वितीय, ज्ञानरूप ईश्वर माना है। यह संसार दुःखमय एवं हेय है। चित्तकी वृत्तियोंके कारण ही संसारमें कर्मबन्धन है। चित्तवृत्तियोंके निरोधसे क्लेशोंका नाश होकर जीवात्मा-परमात्माका योग होता है। इत्यादि कहा है॥

(५) सांख्यदर्शनमें कपिलने मूलतः दो अनादि तत्त्व माना है। प्रकृति तथा पुरुष। जगत्‌में १ प्रकृति, २ विकृति, ३ प्रकृति-विकृति तथा ४ उभय-भिन्न-चार प्रकारके पदार्थ हैं। प्रकृति किसीका कार्य नहीं है, अतः वह केवल प्रकृति है। प्रकृतिसे महत्तत्त्व, उससे अहंकार और

अहंकारसे पञ्चतन्मात्राएँ उत्पन्न होती हैं । तन्मात्राओंसे पञ्चमहाभूत उत्पन्न होते हैं। महतत्त्व, अहंकार और तन्मात्राएँ प्रकृति-विकृतिस्वरूप हैं। ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रिय, पञ्चमहाभूत और मन-ये केवल विकृति हैं। जीव उभय भिन्न है। वह निर्लिप्त है । पुरुष चेतन है और प्रकृति अचेतन है। पुरुषके सामीप्यसे प्रकृतिमें चेतनाकी प्रतीति होती है। प्रकृति पुरुषके विवेकसे अपने निर्लिप्त स्वरूपका ज्ञान ही मोक्षका हेतु है। सत्त्व, रज, तम-इन तीनों गुणोंकी साम्यावस्था प्रकृति है । सत्त्वगुणका धर्म सुख, रजोगुणका दुःख और तमोगुणका मोह है । यह सम्पूर्ण जगत् प्रकृतिसे होनेके कारण त्रिगुणात्मक है । अहंकार त्रिविध होता है। उसके सात्त्विक अंशसे मनके साथ ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ तथा तामस अंशसे तन्मात्राएँ उत्पन्न होती हैं । राजस अंश दोनों अंशोंका प्रेरक है। १ प्रकृति; १ महत्, १ अहं और ५ तन्मात्राएँ--ये सात (७) प्रकृति—विकृति; और पञ्चमहाभूत, दस इन्द्रियाँ तथा मन— ये १६ विकृति-इस प्रकार सब २४ तत्त्व हैं। पचीसवाँ तत्त्व पुरुष है।

पुरुष अनन्त हैं। वे परस्पर भिन्न हैं । पुरुष चेतन है, भोक्ता है। वह प्रकृतिके कर्तृत्वको अपनेमें मानता है। जब पुण्योदयसे पुरुष त्रिविधि दुःखोंके नाशकी इच्छा करता है, तब प्रकृति उसकी इच्छा सफल करती है। पुरुषकी भोगेच्छा न होनेपर प्रकृति स्वतः शान्त हो जाती है क्योंकि, प्रकृतिकी चेष्टा, पुरुषके उपभोगके लिये ही है, अपने लिये नहीं। अतः वासना नाश होनेपर प्रकृति बन्धन उपस्थित नहीं कर सकती। त्रिविधि-तापोंकी अत्यन्त निवृत्तिको ये पुरुषार्थ मानते हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द—ये तीन प्रमाण सांख्यको मान्य है। इत्यादि कहा है ॥

(६) उत्तर मीमांसा (वेदान्त)— दर्शनके आचार्य व्यास माने गये हैं। ब्रह्मकी जिज्ञासाके लिये वेदान्तकी प्रवृत्ति है, 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' और ब्रह्मका लक्षण है, 'जन्माद्यस्य यतः'-जिससे सृष्टि, स्थिति और प्रलय होते हैं। पूरा दर्शन इसी लक्षणकी व्याख्या है। सजातीय-विजातीय-स्वगत-सर्वविध भेदरहित, अद्वितीय, नित्य, निरतिशय, वृहत्

१. मीमांसा शास्त्रः— *आचार्य जैमिनि ऋषि, कर्म ही ब्रह्म मानते हैं ।

२. वैशेषिक शास्त्रः— आचार्य कणाद ऋषि, समय वा काल ही ब्रह्म ठहराते हैं ।

३. न्याय शास्त्रः— आचार्य गौतम ऋषि, कल्पित सर्वज्ञ ईश्वर जगत्कर्ता माने हैं ।

सच्चिदानन्दरूप ब्रह्म ही एक सद्वस्तु प्रतिपाद्य है । ब्रह्मातिरिक्त सर्व प्रपञ्च रज्जुमें प्रतीत होनेवाले सर्पके समान मिथ्या (असत्य) है । वस्तुतः न होते हुए भी सर्व जगत्‌की प्रतीति अज्ञानरूप मायासे होती है । व्यासके इस उत्तर मीमांसा-दर्शन (ब्रह्मसूत्र) को लेकर आचार्योंने अपने-अपने दृष्टिकोणसे उसका भाष्य किया है । सम्प्रदायोंकी प्रतिष्ठा उन भाष्योंके आधार-पर ही है । ब्रह्मसूत्र (न्याय-प्रस्थान), एकादश उपनिषद् (श्रुतिप्रस्थान), तथा गीता (स्मृति-प्रस्थान)—ये तीन ग्रन्थ प्रस्थान-त्रयीके नामसे विख्यात हैं । इन सबपर भाष्य करके ही सम्प्रदाय पहले चले हैं । (इत्यादि षट् शास्त्रोंके सिद्धान्त वर्णन हुआ है, संक्षेपमें अन्य स्थानोंसे उद्धृत करके यहाँ दर्शा दिया गया है) ॥

इस प्रकार जैमिनि आदि षट् आचार्योंने षट् शास्त्रोंका पृथक्-पृथक् रचना किये । उसीके आधारसे शास्त्रोंके षट्दर्शन विस्तार हुआ । उसीको मतवादी सब पण्डित लोग प्रमाण करके माने और मान रहे हैं । परन्तु पारख दृष्टिके बिना भ्रम, भूल, धोखा छूटती नहीं; अतः सत्संगद्वारा परखके सारासारको यथार्थ जानना चाहिये । पक्षपातको त्यागके विवेक करना चाहिये ॥

* दोहाः— मीमांसा वैशेषिक न्याय रु । पातञ्जल सांख्य वेदान्त ॥
जैमिनि कणाद गौतम कपिल । शेष व्यास प्रगटान्त ॥
सं०— रामस्वरूपदास ॥

४. पातञ्जल (योगशास्त्र):— आचार्य पतञ्जलि ऋषि, शेषका अवतार माना है । आप योगको ही श्रेष्ठ मानके परमतत्त्व (पञ्चतत्त्वोंका बिजलीवत् प्रकाश) ॐकाररूप परमात्मा देहमें ही निर्विकल्प समाधि लगायके कल्पनासे सिद्ध किये हैं । जड़-तत्त्वोंका सूक्ष्म प्रकाश, सूक्ष्म देहसे नाभि और मस्तकमें योगीजन देखके आनन्दमें मग्न रहते, ऐसा योगी लोग मानते हैं ।

५. सांख्यशास्त्र:— आचार्य कपिलमुनि, पञ्च तत्त्वरूप प्रकृति अनित्य वा नाशवान है । और प्रकृतियोंके सर्वकलाओं-को जाननेवाला पुरुष, विभुरूप सत्य माने हैं ।

६. वेदान्तशास्त्र:— आचार्य व्यास ऋषि हुये । देखने-वाला द्रष्टा, दिखाई देनेवाला सर्व जगत्के पदार्थ दृश्य, और पदार्थोंसे होनेवाला ज्ञान, सो दर्शन— ये त्रिपुटी त्रिगुणरूप माया है । ऐसी सर्व त्रिपुटियाँ एक अद्वैत ब्रह्म "सूत्रमणि न्याय" समानरूपसे सर्वत्र-व्यापक परमात्मा आप कल्पनासे ठहराये हैं । प्रकृति, पुरुष, कर्म, उपासना, योग, ज्ञानादि सर्व द्वैत प्रपञ्च भ्रमरूप आपने कहा है ।

ऐसे छः शास्त्रोंके आचार्योंने भी और कल्पित वाणीजाल फैलाय दिया है । चैतन्य नरजीव सर्व अवस्थाओं तथा सर्व पदार्थोंके द्रष्टा प्रत्यक्ष साक्षीरूप हैं । तिनको सत्यज्ञानसे तिन्होंने न्यारे निकाले नहीं । सर्व मान-मानके कल्पनारूप वाणीजालोंमें

ही फँसे रहे । यथार्थ सत्य पारख बोध उन्होंको हुई नहीं । इसीसे उन लोगोंकी कल्पनाएँ नहीं छूटी । सो विवेक करके जानना चाहिये ।

अनन्तर जगत्में अनेक विद्याएँ बनी हैं । उनमें १४ विद्याएँ मुख्य गिने हैं— १ ब्रह्मज्ञान । २ रसक्रिया । ३ काव्य । ४ वेद । ५ ज्यौतिष । ६ व्याकरण । ७ धनुर्विद्या । ८ जलतरण । ९ सङ्गीत । १० वैद्यक । ११ अश्वसँवारन । १२ कोक । १३ नाटक-चाटक । और १४ चातुरी* ऐसे १४ विद्याओंके नाम कहा है । ऐसा वाणीजाल फैल गया । उपरान्त फिर अज्ञानी नरजीवोंके बोधहेतु, १८ पुराण बनाये हैं । उसीमें दश और २४ अवतारोंकी लीलाओंका माहात्म्य आदि वर्णन किये हैं । पुराणोंके नामः—१ ब्रह्म । २ पद्म । ३ विष्णु । ४ शिव । ५ भागवत । ६ नारद । ७ मार्कण्डेय । ८ अग्नि । ९ भविष्य । १० ब्रह्मवैवर्त । ११ लिङ्ग । १२ वराह । १३ स्कन्द । १४ वामन । १५ कूर्म । १६ मत्स्य । १७ गरुड़ । और १८ ब्रह्माण्ड । ऐसे पुराण बनाये हैं । इनके सिवाय और भी—१ श्रीमद्भगवद्गीता । २ श्रीमद्भागवत । ३ महाभारत । ४ वाल्मिकीय रामायण । ५ देवीभागत । इत्यादि अनन्त वाणीजाल हिन्दुओंने बनाये हैं । वैसे

---

* श्लोकः—"ब्रह्मज्ञानरसायनं च कविता, वेदस्तथा ज्योतिषं ॥
व्याकरणं सधनुर्धरं जलतरं, संगीतकं वैद्यकम् ॥
अश्वारोहण कोकशास्त्रनिपुणं नाट्यं तथा चातुरी ॥
विद्या नाम चतुर्दश प्रगदिताः, शेषाः कलाः कीर्तिताः ॥"
सं०—

ही चार किताबरूप कुरान आदि वाणी मुसलमानोंने और बायबिल आदि अंग्रेज लोगोंने वाणीजाल बनाय दिये हैं; उसीका वार-पार लगता ही नहीं । वाणीकी कल्पना बहुत ही बढ़ाके फैला रखे हैं ।

ऐसे वाणीजालके ब्रह्माण्डकलामें ब्रह्मादि गुरुवा लोग और सनकादि शिष्यमण्डल कल्पित अद्वैत परमात्मा व्यापक, देहका भास मानके भूले हैं । ऐसे-ऐसे सर्व वाणीजालके अध्यासोंकी पूर्ण पारख, पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे तथा सत्सङ्ग-विचारसे जिज्ञासु-जनोंको यथार्थ बोध होना चाहिये, तब वाणीजालसे वे धीरे-धीरे छूटके जीवन्मुक्त हो जावेंगे । अब यहाँसे माया प्रकृतिके दो-दो अङ्गसे नाना अङ्ग तक वर्णन किया जाता है । सो सुनिये !—

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके दो-दो अङ्गसे अनेकों अङ्ग वर्णन ॥ ❀ ॥

माया प्रकृतिके दो-दो अङ्ग वर्णन ॥ ६ ॥

१ पाप-पुण्य । २ सुख-दुःख । ३ स्वर्ग-नरक । ४ पिण्ड-ब्रह्माण्ड । ५ पुरुष-स्त्री । ६ रात-दिन । ७ चन्द्र-सूर्य । ८ इङ्गला-पिङ्गला । ९ लीन-अलीन । १० शुभ-अशुभ । ११ राग-द्वेष । १२ शत्रु-मित्र । १३ मान-अपमान । १४ शीत-उष्ण । १५ सम-विषम । १६ बीज-वृक्ष । १७ बायाँ-दहिना । १८ देवता-मनुष्य । १९ ज्ञानी-अज्ञानी । २० साधु-गृहस्थ । २१ जाति-पाँति । २२ माय-बाप । २३ नाम-रूप । २४ जड़-चैतन्य । २५ दृश्य-अदृश्य । २६ द्वैत-अद्वैत । २७ आकार-निराकार । २८ सगुण-निर्गुण । २९ समान-विशेष । ३० परोक्ष-अपरोक्ष । ३१ ब्रह्म-जगत् । ३२ ज्ञान-कर्म । ३३ विधि-

निषेध । ३४ सत्य-असत्य । ३५ नित्य-अनित्य । ३६ अन्धकार-प्रकाश । ३७ भाव-अभाव । ३८ भेद-अभेद । ३९ राग-रागिनी । ४० समष्टि-व्यष्टि । ४१ व्यतिरेक-अन्वय । ४२ जीवन्मुक्त-विदेहमुक्त । ४३ अनादिशान्त-अनन्तनित्य । ❊ इत्यादि दो-दो अङ्गोंकी माया अनेक ही भेदसे हुई हैं । ऐसा जानिये ! ।।

१. समष्टिः— एक अद्वैत भावना, सोई ब्रह्म माना है । सोई नरजीवोंकी मानन्दी या कल्पना है ।

२. व्यष्टिः— फैला हुआ सब सृष्टिका विस्तार है ।

३. व्यतिरेकः— चैतन्य स्वरूपका और सर्व जड़ पदार्थोंके

❊ १ शम, दम । २ विवेक, वैराग्य । ३ लोक, परलोक । ४ श्रेय, प्रेय । ५ भोग, त्याग । ६ राम, रहीम । ७ विद्यामाया, अविद्यामाया । ८ पूजा, नमाज । ९ जन्म, मरण । १० धरती, आकाश । ११ जीव, ईश्वर । १२ बन्ध, मोक्ष । १३ ज्ञानी, अज्ञानी । १४ हिन्दू, मुसलमान । १५ तन, मन । १६ काया, माया । १७ आधिताप, व्याधिताप । १८ अर्थाध्यास, ज्ञानाध्यास । १९ प्रमाणगत असंभावना, प्रमेयगत असंभावना । २० शुद्ध अहंकार, अशुद्ध अहंकार । २१ सामान्य अहंकार, विशेष अहंकार । २२ मुख्य अहंकार, अमुख्य अहंकार । २३ समष्टि अज्ञान, व्यष्टि अज्ञान । २४ मूलाज्ञान, तूलाज्ञान । २५ आवरणशक्ति, विक्षेपशक्ति । २६ सगुण उपासना, निर्गुण उपासना । २७ सुगन्ध, दुर्गन्ध । २८ परजाति, अपरजाति । २९ व्याप्यजाति, व्यापकजाति । ३० क्रमनिग्रह, हठनिग्रह । ३१ अनर्थ निवृत्ति, परमानन्द प्राप्ति । ३२ विविदिषासंन्यास, विद्वत् संन्यास । ३३ बाह्यप्रपंच, आन्तरप्रपंच । ३४ स्थितप्रज्ञा, अस्थितप्रज्ञा ३५ स्वरूपलक्षण, तटस्थलक्षण । ३६ अवान्तरवाक्य, महावाक्य । ३७ प्रतिबिम्बवाद, अवच्छेदवाद । ३८ प्रमाणगत विपरीतभावना, प्रमेयगत विपरीतभावना ।

न्यारे-न्यारे गुण-दोष वर्णन करना।

४. अन्वयः— जड़-चैतन्यका एकत्र मिलाप, अर्थात् सर्व अणु-रेणुमें शुद्ध चेतनको कल्पनासे व्यापक मानना।

५. जीवन्मुक्तः—विज्ञानदशाकी धारणा मानी है। पूर्वपक्षमें तुरियासाक्षी अवस्थावाले ज्ञानी, और उत्तरपक्षमें तुरियातीत दशावाले परमहंस माने हैं।

६. विदेहमुक्तः— देह छूटेबाद मुक्ति मानी है। परन्तु विराट्रूप परमात्मा मानके चौरासी योनियोंमें ज्ञानीजन भ्रमते ही रहते हैं।

७. अनन्त नित्यः— स्वयं शुद्ध ब्रह्मको माने हैं।

८. अनादि शान्तः—कल्पित शुद्धब्रह्म छोड़के कल्पित ईश्वर, जीव, प्रकृति, सबोंका सबन्ध और सबोंका भेद, ये पञ्च पदार्थ प्रवाहरूप अनादि मानके, महाप्रलयमें तिनका लयरूप नाश माने हैं। जीव, ईश्वर और ब्रह्म—ये तीन चैतन्योंकी एकता माने हैं। और सर्व कार्यरूप जगत् कारणरूप प्रकृतिमें लीन रहकर, शुद्ध ब्रह्मके पास प्रकृतिरूप माया सदैव रहती है, ऐसा माने हैं। इसलिये शुद्ध ब्रह्ममें जड़-चैतन्यकी ग्रन्थी सूक्ष्म अहंभावसे बनी ही रही। इसीसे जन्म, मृत्युकी बन्धन नहीं छूटती है॥

माया प्रकृतिके तीन-तीन अङ्ग वर्णन ॥ १० ॥

---

३९ वर्णरूपशब्द, ध्वनिरूपशब्द। ४० शक्तिवृत्ति, लक्षणावृत्ति। ४१ दैवी-सम्पत्ति, आसुरीसम्पत्ति। ४२ प्रमाणगत संशय, प्रमेयगत संशय। ४३ सविकल्पसमाधि, निर्विकल्पसमाधि॥ इत्यादि बहुत-सा भेद कहा है॥

१ इङ्गला, पिङ्गला, सुषुम्ना । २ वात, पित्त, कफ * । ३ सत्त्व, रज, तम । ४ नाम, रूप, गुण । ५ क्षर (देह वा वाणी), अक्षर (श्वासवायु), निःअक्षर (श्वास लयकरके वायु आदि तत्त्वोंका प्रकाश देखना) । ६ देव, मनुष्य, राक्षस । ७ साधु, सती, शूर । ८ नाद, बिन्दु, कला (चैतन्य) । ९ स्त्री, पुरुष, नपुंसक । १० जन्म, मरण, गर्भवास । ११ दैहिक ताप (नाना रोग), दैविक ताप (तत्त्वोंसे होनेवाले दुःख), भौतिक ताप (किसी जीवसे दुःख होना) । १२ गङ्गा, यमुना, सरस्वती । १३ ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान । १४ ध्याता, ध्येय, ध्यान । १५ द्रष्टा, दृश्य, दर्शन । १६ कर्ता, कारण, क्रिया । १७ सत्, चित् (चैतन्य), आनन्द । १८ रोचक, भयानक, यथार्थ, (ये तीन प्रकारकी वाणी हैं) । १९ स्वर्ग, मृत्यु, पाताल । २० ब्रह्मा, विष्णु, महेश । २१ ॐ, सोऽहं, राम । २२ वर्षा, शिशिर (ठण्डीके दिन), धूप । २३ भूत, भविष्य, ‡

---

* वातः— प्राण, उदान, समान, अपान और व्यान—ये पाँच प्रकार के शरीरस्थ वायु हैं। पित्तः— पाचक, रंजक, साधक, आलोचक, और भ्राजक—ये पाँच प्रकारके पित्त हैं। कफः— क्लेदन, अवलम्बन, रसन, स्नेहन और श्लेष्मण— ये पाँच प्रकारके कफ हैं ॥ वात, पित्त, और कफ इन तीनोंकी त्रिदोष संज्ञा है ॥

‡ प्रति तीसरे वर्ष एक अधिक मास होता है, जिसे मलमास, लौंदका महीना, पुरुषोत्तम मास भी कहते हैं। जो शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर अमावस्या पर्यन्त रहता है, और इसमें संक्रान्ति नहीं होती है। यह चान्द्र और सौर वर्षोंको एक करनेके लिये चन्द्र वर्षमें जोड़ लिया जाता है ॥

वर्तमान । २४ काम, क्रोध, लोभ । २५ प्रिय (वस्तु देखनेसे आनन्द), मोद (वस्तु मिलनेसे आनन्द), प्रमोद (अनुभव वा स्वादसे होनेवाला आनन्द)। २६ मूलबन्ध, (गुदाद्वार बन्द करना), उडियान बन्ध (नाभिमें वायु रोकना), जालन्धर बन्ध (हृदयमें वायु रोकना)। २७ कर्म, धर्म, सिद्धान्त । २८ मल, विक्षेप, आवरण । २९ काल, सन्धि, झाँई । ३० अद्वैत, द्वैत, विशिष्टाद्वैत । ३१ मायासुख, जीवसुख, ब्रह्मसुख । ३२ प्रातिभासिक सत्ता, व्यावहारिक सत्ता, और पारमार्थिक सत्ता है । त्रिगुणोंका विस्तार प्रथम ही (पृष्ठ ४१ से ४४ तक) कहा है * । इत्यादि तीन-तीन अङ्गोंकी माया अनेक ही भेदसे हुई हैं । ऐसा जानिये ! ॥

---

* (१) वैद्यकमतसे अग्नि ३ प्रकारकी मानी गई है, यथाः— १. भौमाग्नि—जो पदार्थोंके जलनेसे उत्पन्न होती है । २. दिव्याग्नि—जो आकाशमें बिजलीसे उत्पन्न होती है । ३. जठराग्नि— जो पित्तरूपसे हृदय और नाभिके बीचमें रहती है । (२) कायदण्ड, मनोदण्ड, वाक्दण्ड । (३) वेदविधि, लोकविधि, कुलविधि । (४) लोकतृष्णा, वित्ततृष्णा, शास्त्रतृष्णा । (५) प्रातः, मध्याह्न, सायं । (६) पिण्डज, अण्डज, उष्मज । (७) इन्द्रिय (अध्यात्म), देवता (अधिदैव), विषय (अधिभूत) । (८) अर्थवाद ३— अनुवाद, गुणवाद, भूतार्थवाद । (९) अवधि ३— बोधकी अवधि, वैराग्यकी अवधि, उपरामकी अवधि । (१०) अवस्था ३— जाग्रत् , स्वप्न, सुषुप्ति । (११) आत्मा ३— ज्ञानात्मा, महानात्मा, शान्तात्मा । (१२) आत्माके भेद ३— मिथ्यात्मा, गौणात्मा, मुख्यात्मा, । (१३) आनन्द ३—ब्रह्मानन्द, विषयानन्द, वासनानन्द । (१४) आन्ध्य, मान्द्य, पटुत्व । (१५) उद्देश, लक्षण, परीक्षा । (१६) पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा । (१७) मन, वाणी,

१. मलः— अन्तःकरणकी मलीनता विषयासक्ति है । यह

काय । (१८) कर्तव्य, ज्ञातव्य, प्राप्तव्य । (१९) पुण्यकर्म, पापकर्म, मिश्रकर्म । (२०) संचित, आगामि, प्रारब्ध । (२१) कर्म, विकर्म, अकर्म । (२२) कारणवाद ३— आरम्भवाद, परिणामवाद, विवर्तवाद । (२३) जाग्रत् ३ — जाग्रत्-जाग्रत् , जाग्रत्स्वप्न, जाग्रत्सुषुप्ति । (२४) जीव ३— पारमार्थिकजीव, व्यावहारिकजीव, प्रातिभासिकजीव । (२५) विश्व, तैजस, प्राज्ञ । (२६) निवृत्ति ३— भ्रमजकी निवृत्ति, सहजकी निवृत्ति, कर्मजकी निवृत्ति । (२७) पापकर्म ३— उत्कृष्टपापकर्म, मध्यम-पापकर्म, सामान्य पापकर्म । (२८) पुण्यकर्म ३— उत्कृष्ट पुण्यकर्म, मध्यम पुण्यकर्म, सामान्यपुण्यकर्म । (२९) प्रपंच ३— स्थूलप्रपंच, सूक्ष्म-प्रपंच, कारणप्रपंच । (३०) प्राणायाम ३— पूरक, कुम्भक, रेचक । (३१) प्रारब्ध ३ -- इच्छाप्रारब्ध, अनिच्छाप्रारब्ध, परेच्छाप्रारब्ध । (३२) ब्रह्म ३— विराट्, हिरण्यगर्भ, ईश्वर । (३३) मिश्रकर्म ३— उत्कृष्टमिश्रकर्म, मध्यममिश्रकर्म सामान्य मिश्रकर्म । (३४) लक्षणदोष ३— अव्याप्तिदोष, अतिव्याप्तिदोष, असम्भवदोष । (३५) वादादि ३— वादः, जल्प, वितण्डा । (३६) विधिवाक्य ३ — अपूर्वविधिवाक्य, नियमविधिवाक्य, परिसंख्या-विधिवाक्य । (३७) वेदके काण्ड ३— कर्मकाण्ड उपासनाकाण्ड, ज्ञानकाण्ड । (३८) शरीर ३— स्थूल, सूक्ष्म, कारण । (३९) श्रवणादि ३— श्रवण, मनन, निदिध्यासन । (४०) श्रवणादिफल ३— प्रमाण-संशयनाश (श्रवणफल), प्रमेयसंशयनाश (मननफल), विपर्ययनाश (निदिध्यासनफल) । (४१) सम्बन्ध ३— संयोगसम्बन्ध, समवायसम्बन्ध, तादात्म्यसम्बन्ध । (४२) स्वप्न ३— स्वप्नजाग्रत् , स्वप्न-स्वप्न स्वप्नसुषुप्ति । (४३) सुषुप्ति, ३— सुषुप्तिजाग्रत् , सुषुप्तिस्वप्न, सुषुप्तिसुषुप्ति । (४४) सुषु-प्त्यादि ३— सुषुप्ति, मूर्छा, समाधि । (४५) हेत्वादि ३— हेतु, स्वरूप, फल । (४६) ज्ञानप्रतिबन्धक ३— संशय, असम्भावना, विपरीतभावना । (४७) ज्ञानादि ३— ज्ञान, वैराग्य, उपशम ॥ इत्यादि बहुत-सी भेद कहा है ॥

शुभ कर्मोंसे दूर होता है।

२. विक्षेपः— बुद्धिमें होनेवाली चञ्चलता है। यह चैतन्य साधु-गुरुकी उपासना, भक्ति और ध्यानादि कर्मोंसे, यानी सत्य, असत्यके विचारसे दूर होता है।

३. आवरणः— चैतन्यपर माया-मोहका पर्दा वा जड़ासक्ति है। यह चैतन्य पारख स्वरूप ज्ञानके दृढ़ निश्चयसे दूर होता है।

४. कालः— कर्म, उपासना, योगादि सर्व काल कर्म हैं। सोई गुरुवालोगोंने कल्पित ईश्वरादि प्राप्ति निमित्त अज्ञानी नरजीवोंको बन्धन दिये हैं। ब्रह्माण्डकलामें मुख्य 'गुरुवालोग' और पिण्डकलामें 'स्त्री' ये बन्धन देनेवाले 'काल' बने हैं। और अबोध जीवोंके 'मन' भी कालरूप है।

५. सन्धिः— ईश्वर जगत्कर्ता कल्पनासे मानना। तथा उसके प्राप्तिके लिये ज्ञानकाण्डके परोक्ष–अपरोक्षादि सर्व कर्म हो रहे हैं। सोई मानन्दी है। यानी सन्धि सोई मानन्दी है।

६. झाँईः— विशेष अज्ञान दशा गाफिली है। कल्पित अद्वैत परमात्मा मानके परमहंस दशा धारण करके विज्ञानीरूप ब्रह्मज्ञानी विदेहानन्दमें उन्मत्त गाफिल होते हैं। सो गाफिली ही झाँई है।

७. द्वैतः— जीव और कल्पित ईश्वर दोनों अनादि माननेवाले सर्व भक्तजन द्वैतवादी बने हैं।

८. अद्वैतः— एक ब्रह्म अद्वैतरूप सबमें व्यापक सत्य और

जगत् त्रिकालमें असत्य माननेवाले विज्ञानी परमहंस तथा कल्पनामें पड़े हुए सिद्ध या योगी आदि हैं । वेदान्ति लोग अद्वैतवादी बने हैं ।

९. विशिष्टाद्वैतः— जीव, ईश्वर और प्रकृति या पञ्च महातत्त्व अनादि माननेवाले रामानुज, आर्यसमाजी, वाममार्गी आदि विशिष्टाद्वैतवादी बने हैं ।

१०. मायामुखः— कर्म, उपासना, योग, ब्रह्मज्ञानादि ईश्वर, परमात्मा, खुदादि जगत्कर्ता प्राप्तिके लिये सर्व वेद, शास्त्र, पुराण, कुरान, बायबिल आदिकोंमें कहे हुए साधनोंकी वाणी है । उसीमें चैतन्य नर जीवोंकी देहग्रन्थि या अध्यासग्रन्थि नहीं छूटती है। मायामुख वाणीको गुरुवा लोग पण्डितोंके वाक्य जानिये।

११. जीवमुखः— जगत्कर्त्ता कल्पित ईश्वरादिको मानके उसकी प्राप्तिके लिये कोई साधु, ब्राह्मण, उपदेशक गुरुवा या जड़ प्रतिमादि देवताओंकी नरजीव दीनतासे स्तुति करते हैं, वह 'जीवमुख वाणी' है । इसे अज्ञानी लोगोंकी वाक्य जानिये ।

१२. ब्रह्ममुखः— शुद्धब्रह्म चैतन्य अद्वैतरूप है । आपको मन, बुद्धि, वाचा, लक्ष, ज्ञान इत्यादि कोई भी जान नहीं सकते । वेद भी 'नेति नेति' अर्थात् वाणी और जगत् त्रिकालमें ही नहीं, ऐसा कह रहे हैं। ऐसे-ऐसे सिद्धान्तोंकी वाणी 'ब्रह्ममुख वाणी' है । सोई महाभ्रम धोखारूप है । इसे ब्रह्मज्ञानियोंके वाक्य जानिये ।

१३. प्रातिभासिक सत्ताः—विपरीत भास हो जाना। जैसे सीपीमें—रूपा; रस्सीमें—सर्प; सूर्यकी किरणोंमें—मृगजल। यह अज्ञान जड़ासक्त नरजीवोंकी सत्ता स्वप्नवत् मिथ्या मानी गई है। जगत्‌की प्रतीति प्रातिभासिक सत्तामें माने हैं।

१४. व्यावहारिक सत्ताः— सर्व जगत्‌के पदार्थ कल्पित ईश्वर निर्मित है, यह सर्वज्ञ ईश्वरकी व्यावहारिक सत्ता जाग्रत् अवस्थामें मानी गई है। जगत्‌के समस्त व्यवहारोंको इसी सत्तामें माने हैं। परन्तु सो भ्रममात्र है।

१५. पारमार्थिक सत्ताः— (समान सत्ता) कल्पनासे सर्वमें परमात्मा परिपूर्ण व्यापक माने हैं। जैसा काष्ठमें समान अग्नि, यह सत्ता विज्ञानी ब्रह्मरूप निरञ्जनकी ब्रह्माण्डकला मानी गई है। एक ब्रह्म ही सत्य है, ऐसा मानना पारमार्थिक सत्ता कहा है॥

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके चार-चार अङ्ग वर्णन ॥ ११ ॥ ❀ ॥

१. ईश्वरके देहः— १ विराट (स्थूल)। २ हिरण्यगर्भ (सूक्ष्म)। ३ अव्याकृति (कारण)। ४ मूलप्रकृति (महाकारण)।

२. ज्ञान-पुष्टिके साधनः— १ विवेक। २ वैराग्य। ३ शमादि षट् सम्पत्ति। और ४ मुमुक्षुता। १ शम—मनको जीतना। २ दम—इन्द्रियोंको पञ्च विषयोंसे जीतना। ३ श्रद्धा। ४ समाधान। ५ उपराम। और ६ तितिक्षा—भूख, प्यास, सुख-दुःखादि सहनशक्ति, यही षट् सम्पत्ति माने हैं।

३. पण:— १ बाल। २ कुमार। ३ जवानी। ४ वृद्ध।

४. अनुबन्धः— १ अधिकारी। २ सम्बन्ध। ३ विषय। और ४ प्रयोजन।

५. मनुष्योंके प्रकारः— १ आर्त—रोग छूटनेकी इच्छा करनेवाला। २ जिज्ञासु। ३ अर्थी—द्रव्येच्छु। और ४ ज्ञानी।

६. वैष्णवी सम्प्रदायः— * १ रामानन्द। २ नीमानन्द। ३ माधवाचार्य। ४ विष्णुस्वामी। इन्होंने चलाई हुई चार सम्प्रदाय है।

७. राजनीतिः— १ साम। २ दाम। ३ भेद। ४ दण्ड—युद्ध करना।

८. अंग्रेजी मतः— १ रोमन क्याथोलिक—मूर्तिपूजक, अर्थात् गिरजाघर बनाय, वहाँ ही ईश्वरकी प्रार्थना करना। २ प्राँटेस्टन्टः—कहीं भी ईश्वरकी प्रार्थना करना। ३ युनानीः—ईसापैगम्बरका मत ग्रहण और काशी, मक्कावत् पोप स्थानको पवित्र मानके ग्रहण। ४ मुक्तिफौजः—गोसाँई समान भगवा वेष धारण करके कहीं धर्मका व्याख्यान करना।

९. समाधिमें विघ्नः— १ लय। २ विक्षेप। ३ कषाय। और ४ रसास्वाद है।

चारों देहोंके चार-चार अङ्गोंका वर्णन, (पृष्ठ ११३ से

* १. यामुनाचार्य (जन्म वि० सं० १०१०) [द्वैतमत]। २. रामानुजाचार्य [विसिष्टा द्वैतमत]। ३. निम्बार्काचार्य (जन्म १०३६ शाके [द्वैताद्वैत])। ४. मध्वाचार्य (१२९५ वि० सं० जन्म. [द्वैतमत])॥ इन्होंके द्वारा वैष्णव धर्मके चार पन्थ चला है॥

११५ तक), और चार-चार प्रकारसे मुसलमानोंका मानना, प्रथम ही कहा है। * इत्यादि चार-चार अङ्गोंकी माया अनेक ही भेदसे हुई है, ऐसा जानिये! ॥

---

* (१) यज्ञके चार ऋत्विज् होते हैं:—१ होता। २ अध्वर्यु। ३ उद्गाता, और ४ ब्रह्मा ॥

(२) चारधामः— जगन्नाथपुरी। द्वारिकापुरी। बदरिकाश्रम। और रामेश्वरम्— ये चारों धाम, तीर्थ-यात्राकी दृष्टिसे मुख्य माने हैं ॥

(३) चार प्रकारके वैद्य माने गये हैं, यथाः—१ रोगचिकित्सक, २ विषचिकित्सक, ३ शल्यचिकित्सक (सर्जन), ४ कृत्याहार ॥

(४) सेना चार प्रकारकी होती हैं:—१ पैदल, २ घोड़सवार, ३ हाथी-सवार, ४ रथी। चारों प्रकारकी संयुक्त सेनाका नाम "चतुरङ्गिनी" सेना कहा है ॥

(५) बाजोंके चार भेद माने गये हैं:—१ तत, २ आनद्ध, ३ सुषिर, और ४ घन।

१. ततः— वीणा, सितार आदि तारवाले बाजे हैं। २. आनद्धः— मृदङ्ग, ढोल, तबला आदि ताल देनेवाले बाजे हैं। ३. सुषिरः—वंशी, तुरही, शंख आदि मुँहसे बजानेवाले बाजे हैं। ४. घनः– घंटा, मजीरा, झाँझ, भेरी आदि धातुके बने हुए घनघनानेवाले बाजे हैं; और बाजोंके दो भेद कहा है:—१ जो स्वर निकालते हैं, और २ जो ताल देते हैं, ऐसे दो तरहके बाजे होते हैं ॥

(१) तन्त्रीगत वाद्ययन्त्रमें २६ प्रकारकी वीणाओंका नामः— १ अलावणी, २ ब्रह्मवीणा, ३ किन्नरी, ४ लघुकिन्नरी, ५ विपञ्ची, ६ वल्लकी, ७ ज्येष्ठा, ८ चित्रा, ९ घोषवती, १० जया, ११ हस्तिका, १२ कुनजिका, १३ कूर्मी, १४ सारंगी, १५ परिवादिनी, १६ त्रिशवी, १७ शतचन्त्री, १८ नकुलौष्ठी, १९ ढंसवी, २० ऊडंबरी, २१ पिनाकी, २२ निःशंक,

२३ शुष्कल, २४ गदावारणहस्त, २५ रुद्र, २६ स्वरमण्मल, २७ कपिलास, २८ मधुस्यन्दी और २९ वोण ॥

(२) आनद्ध वाद्ययन्त्रोंके ३० नामः—१ मुरज, पटह, ढक्का, विश्वक, ५ दर्पवाद्य, घन, पणव, सरुहा, लाव, १० जावह, त्रिवली, करट, कमठ, भेरी, १५ कुडुक्का, हुडुक्का, झनसमुरली, झल्ली, ढुक्कली, २० दौंडी, शान, डमरू, ढमुकि, मड्डु, २५ कुण्डली, स्तुङ्ग, दुन्दुभी, अङ्क, मर्छल, और ३० अणीकस्थ ॥

(३) शुषिर अर्थात् रन्ध्रयुक्त वाद्य वंशीके १२ नामः— १ वंशी, प्यारी, मुरली, माधुरी, तित्तिरी, ६ भृङ्गकाहल, तोरही, कक्का, भृङ्गीका, स्वरनाभि, भृङ्ग और १२ कृपालिका ॥

(४) घनवाद्य अर्थात् करताल आदि धातुमय बाजोंके १२ नामः— १ करताल, कांस्यवन, जयघंटा, शुक्तिका, कंठिका, ६ पटबाद्य, पट्टाघोष, घर्घर, झंझताल, मञ्जीर, कर्तरी, १२ और उष्कूक ॥

वाद्यके २० प्रकारके प्रबन्धोंका नामः—१ यति, उभ, ऊण्ठवली, अवच्छेद, ५ जोड़नी, चण्डनी, पद, समहंस, झंकार, १० पैसार, तुटकु, ऊस्वर, देङ्कार, मलप, १५ मलपांक, प्रहरण, अन्तरा, दुरकरी, यवनिका और २० पुष्पाञ्जली ॥

प्रबन्ध भेदसे ही बाजोंके विविध स्वरोंकी उत्पत्ति हुई है ॥

(६) गन्धक चार प्रकारका होता हैः—१ सफेद, २ लाल, ३ पीला और ४ नीला । सफेद गंधक व्रण आदिके काममें, लाल गंधक सुवर्ण शुद्ध करनेमें, पीला पारदादि रसायन कर्ममें तथा नीला गन्धक सर्वश्रेष्ठ और दुर्लभ है। यह सब प्रकारके रसायन कर्ममें प्रयुक्त होता है ॥

(७) अभ्रक चार प्रकारका होता हैः—१ पिनाक, २ दर्दुर, ३ नाग और ४ वज्र। पिनाकाभ्रक खानेसे महाकुष्ट रोग, दर्दुर अभ्रक खानेसे मृत्यु, नाग अभ्रक खानेसे भगन्दर रोग होता है, तथा वज्राभ्रकके सेवन-से सर्वरोग नाश होता है, ऐसा वैद्यक ग्रन्थमें लिखा है ॥

(८) शिलाजीत धातुभेदसे चार प्रकारका होता हैः—१ सौवर्ण,

२ रजत, ३ ताम्र, और ४ आयस। सौवर्ण शिलाजीत सुवर्णकी खानका सार है, यह लाल रङ्गका होता है । रजत—चाँदीकी खानका सार है, यह पीले रङ्गका होता है । ताम्र—ताँबेकी खानका सार है, यह मोरकी गर्दनके रङ्गका होता है । आयस—लोहेकी खानका सार है, यह काले रङ्गका होता है, यही सर्वश्रेष्ठ माना जाता है । यह मत, भाव-प्रकाशका है। और शुद्ध शिलाजीतकी यही उत्तम पहचान है कि, वह अग्निमें डालनेसे लिङ्गाकार खड़ा हो जाता है और उसमेंसे धुँआ नहीं निकलता है ॥—निघण्टुरत्नाकर ॥

(९) अफीम चार प्रकारकी होती है:—१ जारण, सफेद रङ्गकी होती है । यह शरीरको जीर्ण करती है। २ मारण, यह काले रङ्गकी होती है। यह मृत्युकारक है। ३ धारण, यह पीले रङ्गकी होती है। यह जरानाशक है। ४ सारण, यह चित्रवर्ण होती है। यह मलको सारण करती है। अफीमकी अधिक मात्रा खा लेनेसे मृत्यु हो जाती है॥

(१०) चित्त चतुष्टयः –१ चित्त, २ बुद्धि, ३ मन, ४ अहंकार है॥

(११) चार अवस्था:–१ जाग्रत्, २ स्वप्न, ३ सुषुप्ति, ४ तुरिया है॥

(१२) चारयुगः—१ सतयुग, २ त्रेता, ३ द्वापर, ४ कलियुग है॥

(१३) चार दिशा:—१ पूरब, २ पश्चिम, ३ उत्तर, ४ दक्षिण है॥

(१४) देहमें चार स्थानः-१ नाभि, २ हृदय, ३ कण्ठ, ४ त्रिकुटी है॥

(१५) चार फलः—१ अर्थ, २ धर्म, ३ काम, ४ मोक्ष है॥

(१६) चार मुक्तिः–१ सालोक्य, २ सामीप्य, ३ सारूप्य, ४ सायुज्य है॥

(१७) चार वर्ण:--१ ब्राह्मण, २ क्षत्रिय, ३ वैश्य, ४ शूद्र है ॥

(१८) चार रङ्ग:—१ श्वेत, २ लाल, ३ पीला, ४ काला है॥

(१९) ज्योतिः शास्त्रमें विद्युत् चार प्रकारकी कही हैं:—१ कपिल (भूरी), वर्णकी बिजली वायु लानेवाली, २ अत्यन्त लोहित, धूप निकालनेवाली, ३ पीतवर्णा, वृष्टि लानेवाली और ४ सिता (श्वेत), दुर्भिक्षकी सूचना देनेवाली होती है॥

(२०) आश्रम चार–१ ब्रह्मचर्य, २ गृहस्थ, ३ वानप्रस्थ, ४ संन्यास है॥

१. लयः—- आलस्य और निद्रासे वृत्ति शून्य हो जाना, सो लय है ।

२. विक्षेपः—- अन्तरमें अद्वैत आनन्दका स्थान न मिलनेसे फिर वृत्ति बाहर आना, उसीको विक्षेप माने हैं । यह चित्तकी चञ्चलता है ।

---

(२१) उत्पत्त्यादिक्रिया ४—१ उत्पत्ति, २ प्राप्ति, ३ विकार, ४ संस्कार है ॥

(२२) चित्तनिरोधयुक्ति ४—१ अध्यात्मविद्या, २ साधुसङ्ग, ३ वासना त्याग, ४ प्राणायाम है ॥

(२३) पूजापात्र ४—१ ब्रह्मनिष्ठ, २ मुमुक्षु, ३ हरिदास, ४ स्वधर्मनिष्ठ ॥

(२४) प्रमाण ४— १ प्रत्यक्ष, २ अनुमान, ३ उपमान, ४ शब्दप्रमाण ॥

(२५) ब्रह्मविदादि ४—१ ब्रह्मवित्, २ ब्रह्मविद्वर, ३ ब्रह्मविद्वरीयान्, ४ ब्रह्मविद्वरिष्ठ है ॥

(२६) भूतग्राम ४—१ जरायुज, २ अण्डज, ३ स्वेदज, ४ उद्भिज्ज है ॥

(२७) मैत्र्यादि ४—१ मैत्री, २ करुणा, ३ मुदिता, ४ उपेक्षा है ॥

(२८) मोक्षद्वारपाल ४—१ शम, २ सन्तोष, ३ विचार, ४ सत्सङ्ग ॥

(२९) योगभूमिका ४—१ वाणीलय, २ मनोलय, ३ बुद्धिलय, ४ अहंकारलय है ॥

(३०) वर्तमानज्ञानप्रतिबन्धनिवृत्तिहेतु ४ —१ शमादि, २ श्रवण, ३ मनन, ४ निदिध्यासन है ॥

(३१) वर्तमानज्ञानप्रतिबन्ध ४—१ विषयासक्ति, २ बुद्धिमांद्य, ३ कुतर्क, ४ विषयासक्तिदुराग्रह है ॥

(३२) शब्दप्रवृत्तिनिमित्त ४—१ जाति, २ गुण, ३ क्रिया, ४ सम्बन्ध ॥

(३३) संन्यास ४—१ कुटीचक, २ बहूदक, ३ हंस, ४ परमहंस संन्यास है ॥

(३४) स्पर्श ४—१ शीत, २ उष्ण, ३ कोमल, ४ कठिन है ॥ इत्यादि बहुत-सी भेदसे चार-चार अङ्ग कहा है ॥

३. कषायः— अन्तरमें भूत और भविष्यका चिन्तन तथा बाहर स्त्री, पुत्र, धनादिमें प्रीति उत्पन्न हो जाना, सो कषाय है।

४. रसास्वादः— वृत्तिके स्थिरताका आनन्द होवे, कुछ निज स्वरूपका नहीं। ऐसा वेदान्तमतमें समाधिके चार विघ्न माना है ॥

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके पाँच-पाँच अङ्ग वर्णन ॥ १२ ॥ ❀ ॥

१. पाण्डवः— १ धर्म (युधिष्ठिर)। २ भीम। ३ अर्जुन। ४ नकुल और ५ सहदेव ॥

२. पतिव्रता स्त्रियाँः—१ अहिल्या। २ द्रौपदी। ३ कुन्ती। ४ तारा। ५ मन्दोदरी ॥

३. कर्मः— १ नित्य। २ नैमित्तिक। ३ काम्य। ४ प्रायश्चित्त और ५ निषिद्ध ॥

४. मनुष्यके प्रकारः— १ पामर। २ विषयी। ३ साधक। ४ मुमुक्षु और ५ सिद्ध ॥

५. बाममार्गमें पञ्च मकारः— १ मदिरा। २ मांस। ३ मन्त्र। ४ मुद्रा (मांसके पदार्थ) और ५ मैथुन ॥

६. जीवहिंसाके स्थानः— १ कूटना। २ झाड़ना। ३ लीपना। ४ पीसना, और ५ अन्न पकाना ॥

७. मुक्त पुरुषः—१ कृष्ण। २ शुक। ३ वशिष्ठ। ४ राम। और ५ जनक। ८. योगक्रियाः—१ नेती। २ धोती। ३ बस्ती। ४ कपाली और ५ कुञ्जल। ९. परमात्मामें दोष नहींः—

१ आत्माश्रय । २ अन्योऽन्याश्रय । ३ अतिव्याप्ति ४ चक्रिका । ५ अनवस्था । ऐसा गुरुवा लोगोंने माने हैं ॥

पञ्चतत्त्वोंकी पाँच-पाँच प्रकृति, पञ्चकोशादि सब विस्तार (पृष्ठ ६२ से ६८ व ८४ से ८८ व १०६ से ११० में) प्रथम ही कहा है । * इत्यादि पाँच-पाँच अङ्गोंकी माया अनेक ही भेदसे हुई हैं, ऐसा जानिये ! ॥ मुक्त पुरुष पाँच कहाये, उसीमें:—

---

* (१) पञ्चदेवी:— दुर्गा । लक्ष्मी । राधा । वाणी । और शाकम्भरी है ॥

(२) कामदेवके पञ्च बाण कहा है:—

१ सम्मोहन, २ उन्मादन, ३ शोषण, ४ तापन, ५ स्तम्भन । कामदेवका धनुष पाँच प्रकारके पुष्पोंसे बना हुआ माना है— अरविन्द, अशोक, आम्र, नवमल्लिका और नीलकमल । इसे पुष्पधनु भी कहते हैं । इन पुष्पोंमें कामको चैतन्य करनेकी शक्ति है । और कामदेवकी स्त्रीका नाम 'रति' है ॥

(३) पञ्चमहायज्ञ:—१ स्वाध्याय । २ अग्निहोत्र । ३ आतिथ्य । ४ पितृतर्पण । और ५ बलिवैश्वदेव है ॥ देव, ऋषि, पितर, मनुष्य और भूतयज्ञ, इसे भी पञ्चमहायज्ञ माना है ॥

(४) तालके मुख्य प्रकार:—१ अष्ट, २ रुद्र, ३ ब्रह्म, ४ इन्द्र और ५ चतुर्दश—ये पाँच हैं ॥

१. अष्टतालके भेद:—१ आड़ । २ दोज । ३ ज्योति । ४ चन्द्रशेषर । ५ गञ्जन । ६ पञ्चताल । ७ रूपक । ८ समताल है ॥

२. रुद्रतालके भेद:—१ वीर विक्रम । २ विषम समुद्र । ३ घरण । ४ बीरदशक । ५ मण्डूक । ६ कन्दर्प । ७ ढ़ाँशपाहिड़ । ८ ध्रुव चरण । ९ दशकोषी । १० गजेन्द्रगुरु । ११ छटका है ॥

३. ब्रह्मतालके भेदः—१ ब्रह्म। २ विरामब्रह्म। ३ षटकला। ४ सप्तमात्रा है॥

४. इन्द्रतालके भेदः—१ देवसार। २ देवचाली, ३ मदनदोला। ४ गुरुगन्धर्व। ५ पञ्चाली। ६ इन्द्रभाष है॥

५. चतुर्दशतालके भेदः—१ चिन्हताल। २ चन्द्रमात्रा। ३ देवमात्रा। ४ अर्द्धज्योतिका। ५ स्वर्गसार। ६ क्षमाष्ट। ७ धराधरा। ८ वसन्तवाक्। ९ काककला। १० वीरशब्दा। ११ ताण्डवी। १२ हर्ष धारिका। १३ भाषा। १४ अर्द्धमात्रा है॥ —सङ्गीत दामोदर॥

(५) पुष्पभेदसे कनेर पाँच प्रकारकी होती है:—१ सफेद, २ लाल, ३ गुलाबी, ४ पीली और ५ काली। इसको खानेसे घोड़े मर जाते हैं॥

(६) पाँच प्रकारके पाशः—१ मलज, २ कर्मज, ३ मायेय (मायाजन्य), ४ तिरोधान—शक्तिज और ५ विन्दुज है॥

(७) पुराणके पाँच लक्षण:—१ सर्ग (सृष्टि), २ प्रतिसर्ग (लय और पुनः सृष्टि), ३ वंश (देवताओंकी वंशावलि), ४ मन्वन्तर (मनुके कालविभाग), और ५ वंशानुचरित (राजाओंके वंशवृत्त) है॥

(८) भ्रान्ति ५:–१ भेद भ्रान्ति (जीव-ईश्वरका भेद। जीव-जीव। जड़-जड़। जीव-जड़। जड़-ईश्वरका भेद)। २ कर्ता-भोक्तापनकी भ्रान्ति। ३ सङ्गकी भ्रान्ति। ४ विकारकी भ्रान्ति। ५ जगत् सत्यकी भ्रान्ति॥

(९) अभाव ५—१ प्राग, २ प्रध्वंसा, ३ अन्योन्य, ४ अत्यन्त, ५ सामयिकाभाव है॥

(१०) अज्ञानके भेद ५—१ माया अविद्यारूप अज्ञान, २ ज्ञान-क्रियाशक्तिरूप अज्ञान, ३ विक्षेप आवरणरूप अज्ञान, ४ समष्टि-व्यष्टिरूप अज्ञान, ५ कारणरूप अज्ञान है॥

(११) क्लेश ५—अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश है॥

(१२) ख्याति ५–१ असतख्याति, २ आत्मख्याति, ३ अन्यथा ख्याति,

१.कृष्णः— कामी और युद्धकर्ममें जीवहिंसक रहे।

२. शुकदेवः—- त्यागी, परन्तु सर्व स्थानोंपर परमात्माका ग्रहण था। बिना पारख कल्पनामें ही पड़े रहे।

३. वशिष्ठः—- ब्रह्मकर्ममें और गृहस्थाश्रम कर्ममें निपुण, सौ पुत्र उत्पन्न किये, ऐसे विषयी रहे।

४. रामः— मोही और युद्धकर्ममें जीवहिंसक रहे।

५. जनकः— विषयी और राज्यव्यवहारमें लोभी, मोही,

---

४ अख्यातिख्याति, ५ अनिर्वचनीय ख्याति है॥

(१३) जीवन्मुक्तिके प्रयोजन ५—१ ज्ञानरक्षा, २ तप, ३ विसम्वादाभाव, ४ दुःखनिवृत्ति, ५ सुखप्राप्ति है॥

(१४) दृष्टान्त ५— शुक्ति-रजतका दृष्टान्त, रज्जुसर्पवत्, स्थाणुपुरुषवत्, गगननीलतावत्। मरीचिकाजल (मृगजल) वत्। (१५) भ्रमनिवर्तक दृष्टान्त ५— बिम्बप्रतिबिम्ब, लोहितस्फटिक, घटाकाश, रज्जुसर्प, कनककुण्डल॥ (१६) योगभूमिका ५— क्षेप, विक्षेप, मूढ़, एकाग्र, निरोध॥ (१७) हेत्वाभास ५ — सव्यभिचार, विरुद्ध, सत्प्रतिपक्ष, असिद्ध, बाधित॥ (१८) प्रलय ५— नित्यप्रलय, नैमित्तिकप्रलय, दिनप्रलय, महाप्रलय, आत्यन्तिकप्रलय॥ (१९) यम ५— अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अस्तेय॥ (२०) नियम ५— शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान॥ (२१) पाँच तत्त्व। (२२) पाँचप्राण॥ (२३) पाँच उपप्राण॥ (२४) ५ ज्ञानेन्द्रियाँ॥ (२५) ५ कर्मेन्द्रियाँ॥ (२६) ५ विषय॥ (२७) कर्मेन्द्रियोंके ५ विषय॥ (२८) ५ भूमिका॥ (२९) ५ जल॥ (३०) ५ अग्नि॥ (३१) ५ वायु॥ (३२) ५ आकाश॥ (३३) ५ कोश॥ (३४) और पञ्चदेहोंका समस्त विस्तार, इत्यादि बहुत प्रकारके भेदसे कहा है॥

अनीति-नीति आदि कर्मोंमें प्रवीण रहे। ऐसे काम, क्रोध, लोभ, मोहकी चाल-चलन रही, और अन्तमें कल्पित ब्रह्मके अभिमानी जड़-चैतन्य मिश्रित पद्में वे स्थिति किये थे। जगत्में कल्पनाके सिद्धि चतुराई आदि नाना कलाएँ बताये, अज्ञनरजीवों-को भ्रमाये, इसलिये श्रेष्ठ माने गये। परन्तु जड़ाध्यास न छूटने-से सत्यन्यायसे फिर गर्भबास दुःखभोगी ही वे हुये। इस हेतु वे अमुक्त ही रहे। ऐसा निष्पक्षसे जानिये ! ॥

योगक्रियामें नेती आदि जो कहा है, सो उसका अर्थ ऐसा है कि:— ६. नेती:— सूतकी पतली रस्सीसे नाक साफ करना। ७. धोती:— पतली दो अंगुलकी चौड़ी धोतीकी किनारी कोर लीलके बाहर निकाल, मलको धो डारना। ८. बस्ती:— जलमें पैठके गुदाद्वारसे जल पेटमें खैंचकर फिर बाहर छोड़ना है। ९. कपाली:— लोहेकागज लिङ्गद्वारमें चलाय, उसे साफ करना। १०. कुञ्जल:— बहुत जल पी-पीके बाहर तीन बेर तक उलटी करना है ॥

परमात्मामें दोष नहीं मानते:—११. आत्माश्रय:— परमात्माकी सहायता वा आधार माने हैं। १२. अन्योऽन्याश्रय:— जड़-चैतन्यकी सामिलता है। १३. अतिव्याप्ति:— सर्वत्र व्यापकता माने हैं। १४. चक्रिका:— एकको-एक त्रिबार उत्पन्न-कर्ता मानना है। १५. अनवस्था:— प्रवाहरूपसे उत्पन्नकर्त्ता मानना। परन्तु सबोंका मूलबीज या अधिष्ठान कल्पित परमात्मा

या अध्यास ही है, यह ब्रह्मज्ञानियोंको पारख हुई नहीं। इसीसे धोखेमें ही पड़े रहे ॥

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके षट्-षट् अङ्ग वर्णन ॥ १३ ॥ ❀ ॥

१. षट् दर्शन * :— १ योगी। २ जङ्गम। ३ जैन। ४ संन्यासी। ५ दर्वेश (फकीर), और ६ ब्रह्मचारी ब्राह्मण। २. षट् दर्शनोंके जाप † :—१ "सोऽहं जाप" योगियोंका है। २ "निरञ्जनाय" यह जङ्गमोंका जाप है। ३ "तत्त्वनाम अरिहन्" या "अरिहन्तारम्" जैनियोंका जाप है। ४ "सोऽहं ब्रह्मास्मि" संन्यासियोंका जाप है। ५ "सोऽहं-हंऽसो" हिन्दु साधुओंका जाप है। और ६ "हूँ अल्लाह हूँ" मुसलमान फकीरोंका जाप है। और ७ "ॐकार" ब्रह्मचारी ब्राह्मणोंका जाप है ॥

३. षट् दर्शनोंके सिद्धान्त ‡ :—१ "पृथ्वीमें पृथ्वी" योगियोंका सिद्धान्त है। अर्थात् पिण्डकी वायु ब्रह्माण्डमें लेजाय, वहाँ तत्त्वोंका प्रकाश देखकर आनन्दमें मग्न रहना,

---

*. दोहाः— योगी जङ्गम सेवड़ा। संन्यासी दरवेश ॥
छटवाँ कहिये ब्राह्मण। छौ-घर छौ-उपदेश ॥ पं० ग्र० ॥

†. दोहाः— ओहं सोहं हूँ अल्ला हूँ। महीनाद विस्तार ॥
तत्त्वनाम निरञ्जना। ये षट रसहिं विचार ॥

‡. दोहाः— अदेव मूल श्रवण कहै। अहंब्रह्म संन्यासी ॥
वायु कहत दरवेश सो। योगी धरणि उपासी ॥
शशी अमीरस जैनि कहै। जङ्गम महदाकाश ॥
षट दर्शन सिद्धान्त यह। करें जगत विश्वास ॥

॥ बीजक, २२ रमैनीकी, टीका ॥

यह सिद्धान्त माना है। २ "महदाकाशवत् शिवस्वरूप" यह जङ्गमोंका सिद्धान्त है। ३ "चन्द्रमुक्त शीलाके ऊपर अधरमें मुक्त-जीवोंकी सदैव स्थिति" यह जैनियोंका सिद्धान्त है। ४ "अहं ब्रह्मास्मि" यह संन्यासियोंका सिद्धान्त है। ५ "पवनमें पवन" फकीरोंका सिद्धान्त है। और ६ "अद्वैत परमात्मा" ब्रह्मचारी ब्राह्मणोंका सिद्धान्त है ॥

४. षट् (अरिवर्ग) विकारः—१ काम। २ क्रोध। ३ लोभ। ४ मोह। ५ मद। ६ मत्सर (ईर्षा) ॥

५. षट् ऋतुः— १ वसन्त। २ ग्रीष्म। ३ वर्षा। ४ शरद। ५ हेमन्त। और ६ शिशिर है ॥

६. षट्वादी*:— १ प्रकृति। २ तत्त्व। ३ देह। ४ स्वभाव। ५ वीर्य। और ६ शून्यवादी हैं ॥

७. 'ब्राह्मणोंके' षट्कर्मः— १ यजन। २ याजन। ३ अध्ययन। ४ अध्यापन। ५ दान। और ६ प्रतिग्रह है ॥

८. नित्य षट्कर्मः— १ स्नान। २ सन्ध्या। ३ पूजा। ४ तर्पण। ५ जप। और ६ होम है ॥

९. षट् प्रमाणः— १ प्रत्यक्ष। २ अनुमान। ३ उपमान। ४ शब्द। ५ अर्थापत्ति। और ६ अनुपलब्धि वा अभाव है ॥

---

* दोहाः— प्रकृति तत्त्व स्वभाव तन। वीर्य शून्य षट्वाद ॥
सो जड़वादी नास्तिक। भूले विषयन स्वाद ॥
सं०—रामस्वरूपदास ॥

१०. षट् ऐश्वर्यः— १ यश । २ लक्ष्मी । ३ कीर्ति । ४ शूरता। ५ उदारता, और ६ कोईका मन अपने ओर उलटानेका सामर्थ्य माने हैं ॥

वेदके षट् अङ्ग, षट् शास्त्रः, षट् शास्त्रोंके आचार्य, (पृष्ठ १२३ से १३५ तक), स्त्री-पुरुषोंके षट् धातु (पृष्ठ ७८), शमादि षट् सम्पत्ति (पृष्ठ १४५) षट् उर्मियाँ, षट् पशुधर्म, (पृष्ठ ८१) ऐसा सब विस्तार प्रथम ही कहा है । * इत्यादि षट् प्रकारकी माया षट्-षट् अङ्गोंसे 'प्रकृति' और 'पुरुष' दोनोंकी तीन-तीन कलाएँ मिलके अनेक ही भेदसे हुई, ऐसा माने हैं ॥

---

* (१) षट्रागोंके नामः—१ भैरव, २ मालकोष, ३ हिंडोल, ४ दीपक, ५ मेघराज, और ६ श्रीराग, ऐसे माने हैं ॥

(२) कर्मकाण्डमें अग्नि छः प्रकारकी मानी गई है; यथाः— गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि, सभ्याग्नि, आवसस्थ्य, और औपासनाग्नि । इनमें आरम्भकी तीन प्रधान माने हैं ॥

ऋग्वेदका प्रादुर्भाव अग्नि नामक ऋषिसे ही माना जाता है ॥

(३) अवस्था भेदसे पुरुष ६ प्रकारके माने गये हैं; यथाः—५ वर्ष तक कुमार, तदुपरान्त १० वर्ष तक पौगंड, पश्चात् १५ वर्ष तक किशोर, इससे ऊपर ३० वर्ष तक युवा ३० वर्षसे ५० वर्ष तक प्रौढ़, तत्पश्चात् वृद्ध कहा जाता है ॥

(४) इसी प्रकार स्त्रियोंके भी भेद ६ प्रकारके कहा हैः— जन्मसे ५ वर्ष तक कुमारी, १२ वर्ष तक कन्या, १५ वर्ष तक मुग्धा वा किशोरी २५ वर्ष तक युवती वा मध्या, ४० वर्ष तक प्रौढ़ा, तत्पश्चात् वृद्धा कही जाती हैं ॥

(५) पुरुषोंके षट् भेदः— शशक, मृग, वृषभ, अश्व, महिष, और गर्दभ स्वभाववाले माने हैं ॥

(६) स्त्रियोंके षट् भेद:—पद्मिनी, चित्रिणी, हस्तिनी, शंखिनी, नागिनी और डंकिनी—ऐसे स्वभाव भेद करके माना गया है ॥

(७) हँसीके ६ भेदः— १ स्मित = मुसुकुराना । २ हसित = दाँत दिखलाते हुए हँसना । ३ विहसित = कुछ बोलते हुए हँसना । ४ उपहसित = नाक फुलाकर हँसना । ५ अपहसित = सिर हिलाते तथा आँसू निकालते हुए उद्धत हास । ६ अति हसित = शरीर कम्पाते हुए, ठठाकर ताली देकर अट्टहास हँसना ॥

(८) रस-भेदसे भोजन छः प्रकारका होता हैः— १ मधुर (मीठा), २ लवण (नमकीन), ३ तिक्त (तीता), ४ कषाय (कसैला जैसे आँवला आदि), ५ कटु (कडुवा जैसे नीम, कड़वी लौकी आदि) ६ अम्ल (खट्टा) ॥

(९) प्रकार-भेदसे- भोजन छः प्रकारका होता है । यथाः—१ भक्ष्य (जो निगलकर खाया जाय, जैसे हलुवा खीर, मलाई आदि), २ भोज्य (जो दाँतोंसे कुचलकर खाया जाय, जैसे—दाल, रोटी, पूरी आदि), ३ चर्व्य (जो चबाकर खाया जाय, अर्थात् खानेकी सूखी वस्तु, जैसे-चबैना, दालमोठ, माठ, मठरी आदि), ४ चोष्य (जो चूसकर खाया जाय, जैसे-आम, सँहिजनकी फली, ईख आदि), ५ लेह्य (जो चाटकर खाया जाय. जैसे—सिरका, चाशनी, शहद, चटनी आदि), और ६ पेय (जो पिया जाय, जैसे—दूध, शर्बत, आदि) ॥

(१०) हरिणके षट् भेदः— १ गन्धर्व । २ शरभ । ३ राम । ४ सृमर = साँभर, चीतल । ५ गवय = नीलगाय । और ६ शश = खरहा । ये सब मृगके ही भेद हैं । और 'बारहसिंगा' नामक हरिणकी एक जाति विशेष है. इसकी सींगके बीचसे शाखारूपमें कई सींगें निकलती रहती हैं ॥

(११) कुत्तेके ६ गुण कहा हैः—१ बहु भोजी, २ स्वल्प सन्तोषी,

३ खूब सोनेवाला, ४ शीघ्र चैतन्य हो जानेवाला, ५ प्रभुभक्त, और ६ शूर, ये छः गुण कुत्तेमें होते हैं ॥

(१२) षट् आश्रमः—१ ब्रह्मचर्य, २ गृहस्थ, ३ वानप्रस्थ, ४ संन्यास, ५ हंस, और ६ परमहंस है ॥

(१३) योगियोंके षट् कर्मः—१ नेती, २ धोती, ३ बस्ती, ४ न्योली, ५ त्राटक, ६ और कपालभाती है ॥

(१४) स्मृतिके अनुसार छः कर्म, जिनके द्वारा आपत्कालमें ब्राह्मण अपनी जीविका प्राप्त कर सकता है। १ उन्छवृत्ति (कटे हुए खेतमें बालें बीनना), २ दान लेना, ३ याचना करना, ४ कृषि, ५ वाणिज्य, ६ गोरक्षा है ॥

(१५) प्राचीन छः चक्रवर्ती राजाः—१ मान्धाता, २ पृथु, ३ सुहोत्र, ४ शिवि, ५ नहुष, ६ मरुत हैं ॥ अथवाः—

१ पृथु, २ बेनु, ३ बलि, ४ कंस, ५ दुर्योधन, ६ विक्रम, इन्हें भी छः चक्रवर्ती माने हैं ॥

(१६) षट् चक्रः— १ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपूर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र है ॥

(१७) देहके षट् विकारः— १ जन्म २ प्रगटता, ३ वृद्धि, ४ विपरिणाम, ५ अपक्षय, और ६ मरण है ॥

(१८) षट् प्रकारकी अर्थाध्यासः— १ केवलसम्बन्धाध्यास। २ सम्बन्धसहित सम्बन्धीका अध्यास। ३ केवल धर्माध्यास। ४ धर्मसहित धर्मीका अध्यास। ५ अन्योन्याध्यास। ६ अन्यतराध्यास ॥

(१९) तात्पर्यनिर्णयके लिये षट्लिंगः— १ उपक्रम और उपसंहार। २ अभ्यास। ३ अपूर्वता। ४ फल। ५ अर्थवाद, और ६ उपपत्ति है ॥

(२०) यतिके धर्म विशेष ६— अजिह्वत्व, नपुंसकत्व, पंगुत्व अन्धत्व, बधिरत्व, मुग्धत्व है ॥

(२१) अनादि पदार्थ ६:— जीव, ईश, शुद्धचेतन, अविद्या,

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके सात-सात अङ्ग वर्णन ॥ १४ ॥ ❀ ॥

१. सात समुद्र ❀ ब्रह्माण्डमें:— १ मीठा । २ लोण । ३ दधि ।

चेतन-अविद्यासम्बन्ध, और तिन्होंका भेद, कहा है ॥

(२२) ईश्वरके भग ६— समग्र ऐश्वर्य, समग्र धर्म, समग्र यश, समग्र श्री, समग्र ज्ञान, समग्र वैराग्य, कहा है ॥

(२३) ईश्वरके ज्ञान ६—उत्पत्ति, प्रलय, गति, आगति, विद्या, अविद्या, कहा है ॥

(२४) ऊर्मि ६— जन्म, मरण, क्षुधा, तृषा, हर्ष, शोक है ॥

(२५) कौशिक ६— त्वक् , मांस, रुधिर, मेद, मज्जा, अस्थि है ॥

(२६) भ्रम ६— कुल, गोत्र, जाति, वर्ण, आश्रम, नाम है ॥

(२७) वेद अङ्ग ६— शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्यौतिष है ॥

(२८) शमादि ६— शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान है ॥

(२९) शास्त्र ६— सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा (वेदान्त) शास्त्र है ॥

(३०) समाधि ६— बाह्यदृश्यानुविद्धसमाधि, आन्तरदृश्यानुविद्धसमाधि, बाह्यशब्दानुविद्धसमाधि, आन्तरशब्दानुविद्धसमाधि, बाह्यनिर्विकल्पसमाधि, आन्तरनिर्विकल्पसमाधि है ॥

(३१) सूत्र ६— जैमिनीयसूत्र, आश्वलायनसूत्र, आपस्तम्बसूत्र, बौधायनसूत्र, कात्यायनसूत्र, वैखानसीयसूत्र ॥ इत्यादि बहुत प्रकारसे छः-छः अङ्ग कहा है ॥

❀ दोहाः—‘‘मीठा लोण दधि घृत । मदिरा अमृत दूध ॥
सात समुद्रका नाम यह । गुरुवन कल्पित बूध ॥’

सप्तसिन्धुः—१ क्षीरोद । २ लवणोद । ३ दध्युद । ४ घृतोद । ५ सुरोद । ६ ईक्षूद । ७ स्वादूद । (ये पौराणिक नाम हैं) । और १ अन्धमहासागर । २ प्रशान्तमहासागर । ३ हिन्दमहासागर । ४ उत्तरीय-

४ घृत। ५ मदिरा। ६ अमृत। और ७ दूध, ऐसा माने हैं। परन्तु लोण समुद्र ही सबको प्रत्यक्ष दीख रहा है॥॥

२. सात समुद्र पिण्डमें मानना:— १ मीठा:—स्त्री—सम्भोगका आनन्द या मल सफा गिरनेसे देह सुखी रहती है सो है। २ लोण:—मूत्रस्थानमें है। ३ दधि:—खकारके स्थानमें है। ४ घृत:—नाकसे बहता हुआ गाढ़ा जलके स्थानमें है। ५ मदिरा:— पित्तकी घड़ियोंके स्थानमें है। ६ अमृत:— योगीजन अमीरूप मानके लार चाखते हैं, सो है। और ७ दूध:— अर्थात् स्त्रीके कण्ठकी नाड़ियाँ नाभि तक बढ़के सन्तति उत्पन्न हुए बाद स्तन या कुचोंमें दूध उत्पन्न होता है, सो है। 'लोण' और 'मदिरा' ये दोनों छोड़के, यही पञ्चामृतका स्नान समुद्र जानकर, जड़ मूर्तियोंको गुरुवा लोग कर्मीजनोंसे करवाते हैं॥

३. सप्त ऋषि:— १ कश्यप। २ अत्रि। ३ जमदग्नि। ४ वशिष्ठ। ५ भरद्वाज। ६ विश्वामित्र, और ७ गौतम ऋषि माना है॥

४. सात वार:— १ रवि। २ सोम। ३ मङ्गल। ४ बुध। ५ बृहस्पति (गुरु)। ६ शुक्र, और ७ शनि माना है॥

५. सात वर्ग:— पाँच-पाँच अक्षरोंका वर्ग मिलायके १ 'क' २ 'च' ३ 'ट' ४ 'त' ५ 'प' ६ 'य' और ७ 'श' माना है॥

६. सात स्थानोंसे अक्षरोंका उच्चारण:— १ ऊर्ध्व। २ तालु। ३ दाँत। ४ कण्ठ। ५ ओंठ। ६ नाक, और ७ सहज उच्चारण है॥

ध्रुवमहासागर। ५ दक्षिणीय ध्रुवमहासागर। ६ हिममहासागर। ७ भूमध्य सागर। (ये भौगोलिक नाम हैं)॥

७. सप्त स्वर गायनके:— १ सा । २ री । ३ ग । ४ म । ५ प । ६ ध, और ७ नी माना है ॥

८. सात द्वीप:— ❀ १ जम्बू:—हाड़के जगहमें, २ शङ्ख:—मज्जाके जगहमें, ३ कुश:—मांसके जगहमें, ४ श्वेत:—बालके जगहमें, ५ पुष्कर:—नाभिके जगहमें, ६ शाल्मल:—त्वचाके जगहमें, और ७ क्रौञ्च:—शिरके जगहमें, ऐसे सप्त द्वीप पिण्ड-ब्रह्माण्डमें माने हैं । और सात-सात भाग नीचे टिप्पणीमें देखिये × ।

❀ दोहा:— जम्बू शंख शाल्मल कुश । क्रौञ्च पुष्कर श्वेत ॥
अस्थि मज्जा त्वचा मांस । शिर नाभि बाल द्विपेत् ॥

सात पहाड़:— देव, पारचक्र, वैकुण्ठ, कैलाश, हेमवान, हेमवन्त, और सुमेरु—ये ७ पर्वत देहके भीतर और बाहर माने हैं ॥

× (१) सप्तपर्वत:— १ हिमालय । २ निषध । ३ विन्ध्य । ४ माल्यवान् । ५ पारियात्रक । ६ गन्धमादन । और ७ हेमकूट ॥

(२) सप्तमाता:— १ ब्राह्मी । २ माहेश्वरी । ३ कौमारी । ४ वैष्णवी । ५ वाराही । ६ इन्द्राणी । ७ चामुण्डा ॥

(३) अग्निकी सात जिह्वाएँ मानी गई हैं:— काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, उग्रा, और प्रदीप्ता, कहा है ॥

(४) सप्तपुरी (तीर्थ) प्रधान मानके महिमा बढ़ाये हैं:— १ अयोध्या । २ मथुरा । ३ हरिद्वार । ४ काशी । ५ काञ्ची (काञ्जीवरम्) । ६ अवन्तिका (उज्जैन) । और ७ द्वारकापुरी, माना है ॥

(५) सप्तधातु:— रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, और शुक्र (वीर्य)— ये सातों मिलकर सप्त धातु कहे जाते हैं ॥

(६) सात प्रकारकी माताएँ — १ जन्मदात्री माता, २ कुलगुरुकी पत्नि, ३ ब्राह्मणी, ४ राजपत्नि, ५ गौ, ६ दूध पिलानेवाली वा सेवा करनेवाली धाय, और ७ मातृभूमि ॥

(७) सात प्रकारके पिता:— १ जन्म देनेवाला, २ अन्न देनेवाला (पालनकर्ता), ३ श्वसुर, ४ बड़ा भाई, ५ मन्त्रदीक्षा देनेवाला, ६ अभय देनेवाला, और ७ ज्ञान देनेवाला-गुरु है ॥

(८) सङ्गीत शास्त्रानुसार स्वरके सात भेद हैं। यथा:— १ षड्ज २ ऋषभ। ३ गान्धार। ४ मध्यम। ५ पञ्चम। ६ धैवत। और ७ निषाद वा सप्तम। इन्हीं सातों स्वरोंको 'सरगम' कहते हैं। स्वरोंके चढ़ावको आरोहण और स्वरोंके उतारको अवरोहण कहते हैं ॥

(९) सात सुरति:— १ स्मृति, २ इच्छा, ३ चित्त, ४ मन, ५ बुद्धि, ६ अहंकार, और ७ अनुभव है ॥

(१०) सात वायु— पृथ्वी और अन्तरिक्षमें जो वायु चलती है, उसके सात मार्ग हैं:— प्रवह, २ आवह, ३ उद्वह, ४ सम्वह, ५ विवह, ६ परिवह, और ७ परावह ॥ (ना० पु० पू० द्वि०) ॥

(११) भोगके सप्तग्रन्थि:— १ कला, २ काल, ३ नियति, ४ विद्या, ५ राग, ६ प्रकृति, और ७ गुण— ये सात ग्रन्थियाँ हैं. यही आन्तरिक भोग-साधन कहे गये हैं ॥

(१२) जम्बूद्वीप भारतवर्षके ७ कुल पर्वत:— महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र है ॥

(१३) उक्त ७ पर्वतोंसे निकली हुई क्रमशः ७ नदियाँ:— आर्यकुल्या, कृतमाला, भीमरथी, ऋषिकुल्या, पयोष्णी, नर्मदा तथा वेद नदी है ॥

(१४) प्लक्षद्वीपके ७ पर्वत और ७ नदियाँ:— गोमेद, चन्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक, सुमना, और वैभ्राज ॥ अनुतप्ता, शिखी, विपाशा त्रिदिवा, अक्लमा, अमृता और सुकृता ।

(१५) शाल्मल द्वीपके ७ पर्वत तथा ७ नदियाँ:— कुमुद, उन्नत, बलाहक, द्रोणाचल, कङ्क, महिष, और ककुद्मान् ॥ योनि, तोया, वितृष्णा, चन्द्रा, मुक्ता, विमोचनी और निवृत्ति ॥

(१६) कुश द्वीपके ७ पर्वत तथा ७ नदियाँ:— विद्रुम, हेमशैल, द्युतिमान्, पुष्पवान् , कुशेशय, हरी, तथा मन्दराचल ॥ धूतपापा, शिवा,

पवित्रा, सम्मति, विद्युत, अम्भा और मही ॥

(१७) क्रौञ्चद्वीपके ७ पर्वत तथा ७ नदियाँ:— क्रौञ्च, वामन, अन्धकारक, स्वाहिनी, दिवावृत्, पुण्डरीकवान् और दुन्दुभि ॥ गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा, क्षान्ति और पुण्डरीका ॥

(१८) शाक द्वीपके ७ पर्वत तथा ७ नदियाँ:— उदयाचल, जलाधार, रैवतक, श्याम, अस्ताचल, आम्बिकेय, और केशरी ॥ सुकुमारी, कुमारी, नलिनी, धेनुका, इक्षु, वेणुका और गभस्ती ॥

(१९) सात आकाशः— १ अपोदकः, २ ऋतधामा, ३ अपराजितः, ४ ब्रध्नस्य विष्टपम्, ५ अधिद्यौः, ६ प्रद्यौः, और ७ रोचनः ॥

(२०) तामसी सात विद्याएँ:— १ जारण, २ मारण, ३ मोहन, ४ उच्चाटन, ५ आकर्षण, ६ वशीकरण, और ७ स्तम्भन ॥

(२१) स्थूल देहके ७ प्रकार:— १ नाम। २ जात। ३ आश्रम। ४ वर्ण। ५ सम्बन्ध। ६ परिमाण। और ७ जन्म-मरण ॥

(२२) चिदाभासकी अवस्था ७— अज्ञान, आवरण, विक्षेप, शोकनाश, तृप्ति, परोक्ष ज्ञान, और अपरोक्ष ज्ञान ॥

(२३) वेदान्त मतानुसार चेतन ७— ईश्वर चेतन, जीव चेतन, शुद्धचेतन, प्रमाताचेतन, प्रमाणचेतन, प्रमेयचेतन, और प्रमाचेतन ॥

(२४) नैयायिक मतमें द्रव्यादि पदार्थ ७— १ द्रव्य (नौ), २ गुण (चौबीस), ३ कर्म (पाँच), ४ सामान्य (दो), ५ समवाय (एक), ६ अभाव (पाँच), और ७ विशेष (अनन्त) ॥

(२५) मौनादि ७— मौन, योगासन, योग, तितिक्षा, एकान्तशीलता, निःस्पृहता, और समता ॥

(२६) रूप ७— शुक्ल, कृष्ण, पीत, रक्त, हरित, कपीश, चित्र ॥

(२७) व्यसन ७— तन, मन, क्रोध, विषय, धन, राज्य, और सेवक व्यसन ॥

(२८) ज्ञान भूमिका ७— शुभेच्छा, सुविचारणा, तनुमानसा, सत्त्वापत्ति, असंसक्ति पदार्थाभाविनी, और तुरीयगा ॥

(२६) अज्ञानकी ७ भूमिका—१ बीज जाग्रत्, २ जाग्रत्, ३ महाजाग्रत्, ४ जाग्रत्-स्वप्न, ५ पञ्चम स्वप्न, ६ स्वप्न जाग्रत् और ७ सुषुप्ति ॥

(३०) ७ स्वर्ग । (३१) ७ मृत्युलोक । (३२) ७ पाताल। इत्यादि सात-सात अङ्गकी कई भेद माने हैं ॥

विष्णुपुराणके अनुसार— चौदह मन्वरोंके देवताओं, इन्द्रों और सप्त ऋषियोंका क्रमशः नाम वर्णन किया जाता है, सो सुनिये !:—

(१) स्वायम्भुव मनु, याम देवता, शचीपती इन्द्र, तथा भृगु, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, अङ्गिरा, मरीचि और वशिष्ठ—ये सात ब्रह्माके मानसपुत्र सप्तऋषि हुए । प्रियव्रत और उत्तानपाद स्वायम्भुव मनुके दो पुत्र थे ॥

(२) स्वारोचिष मनु, पारावत और तुषितगण देवता, विपश्चित् इन्द्र, तथा ऊर्ज्ज, स्तम्भ, प्राण, वात, ऋषभ, निरय, और परीवान्—ये सप्तर्षि थे तथा चैत्र और किम्पुरुष आदि मनुके पुत्र थे ॥

(३) उत्तम मनु, सुशान्ति इन्द्र, सुधाम, सत्य, जप, प्रतर्दन और वशावर्ती—ये पाँच बारह-बारह देवताओंके गण थे तथा वशिष्ठ-जीके सात पुत्र सप्तर्षिगण और अज, परशु एवं दीप्त आदि मनुके पुत्र थे ॥

(४) तामस मनु, सुपार, हरि, सत्य और सुधी—ये ४ देवताओंके वर्ग, राजा शिवि इन्द्र, तथा ज्योतिर्धामा, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, वनक और पीवर—ये सप्तर्षि थे तथा नर, ख्याति, केतुरूप और जानुजंघ आदि मनुके पुत्र थे ॥

(५) रैवत मनु, अमिताभ आदि देवगण, विभु इन्द्र, तथा हिरण्यरोमा, वेद श्री, ऊर्ध्वबाहु, वेदबाहु, सुधामा, पर्जन्य और महा-मुनि— ये सप्तर्षि थे तथा बलबन्धु, सम्भाव्य और सत्यक आदि मनुके पुत्र थे ॥

(६) चाक्षुष मनु, आप्य, प्रसूत आदि देवगण, मनोजव इन्द्र तथा सुमेधा, विरजा, हविष्मान् , उत्तम, मधु, अतिनामा और सहिष्णु

ये सप्तर्षि थे तथा रुरु, पुरु, और सतद्युम्न आदि मनुके पुत्र थे ॥

(७) सूर्यपुत्र— श्राद्धदेव (वैवस्वत) मनु, आदित्य, वसु और रुद्र आदि देवगण, पुरन्दर इन्द्र, तथा इस समय वशिष्ट, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र, और भरद्वाज— ये सप्तर्षि हैं। मनुके पुत्र इक्ष्वाकु, नृग, धृष्ट, शर्याति, नरिष्यन्त, नाभाग, अरिष्ट, करूष और पृषध्र— ये नव प्रसिद्ध हुए हैं ॥

(८) सूर्यसावर्णि मनु, सुतप, अमिताभ (अप्रमेय) आदि मुख्य गण देवता, राजा बलि इन्द्र तथा दीप्तिमान्, गालव, राम, कृप, अश्वत्थामा, व्यास और ऋष्य शृङ्ग— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र विरजा, ऊर्वरीवान् एवं निर्मोक आदि होंगे ॥

(९) दक्षसावर्णि मनु, पार, मरीचि गर्भ आदि ३ देव वर्ग, अद्भुत इन्द्र तथा सवन, द्युतिमान, भव्य, वसु, मेधातिथि, ज्योतिष्मान् और सत्य— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र धृतकेतु, दीप्तिकेतु आदि होंगे ॥

(१०) ब्रह्मसावर्णि मनु, सुधामा और विशुद्ध देवगण, शान्ति इन्द्र तथा हविष्मान् , सुकृत, सत्य, तपोमूर्ति, नाभाग, अप्रतिमौजा और सत्यकेतु— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र सुक्षेत्र, उत्तमौजा आदि १० होंगे ॥

(११) धर्मसावर्णि मनु, विहंगम, कामगम और निर्वाणरति देवगण, वृष इन्द्र तथा निःस्वर, अग्नितेजा, वपुष्मान, घृणि, आरुणि, हविष्मान् और अनघ— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र सर्वत्रग, सुधर्मा आदि होंगे ॥

(१२) रुद्रसावर्णि मनु, हरित, रोहित आदि ५ देवगण, ऋतु-धामा इन्द्र तथा तपस्वी, सुतपा, तपोमूर्ति, तपोरति, तपोधृति, तपोद्युति और तपोधन— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र देववान्, उपदेव आदि होंगे ॥

(१३) रोचमान् (रुचि) मनु, सुत्रामा, सुकर्मा आदि देवगण,

सात शुभेच्छादि ज्ञानभूमिका (पृष्ठ ७६में)। सात जारणादि विद्याएँ (पृष्ठ १६५ (२०) में), सात स्वर्ग, सात मृत्युलोक (पृष्ठ ७१ में तथा १०६ में), और पाताल (पृष्ठ ७० में), सात महामन्त्रोंके जाप (पृष्ठ ७३ से ७८ तक में), सात प्रकारके कर्म (पृष्ठ ७४ में), उपासना (पृष्ठ ७४ में), योग (पृष्ठ ७५ में), ज्ञान, उत्पत्ति, पालन और प्रलय, (पृष्ठ ७६ से ७८ तक में), ऐसी सात-सात अङ्गोंके मायाका विस्तार प्रथम ही कहा है। इत्यादि सात-सात अङ्गोंकी माया अनेक ही भेदसे हुई है। ऐसा जान लीजिये ! ॥

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके अष्ट-अष्ट अङ्ग वर्णन ॥ १५ ॥ ❀ ॥

१. अष्ट गुरुः—— १ माता-पिता। २ दाई। ३ नाम धरानेवाला ब्राह्मण। ४ विद्या पढ़ानेवाला। ५ मन्त्र-दीक्षा देनेवाला। ६ सर्व कर्मभ्रम तोड़के कल्पित ईश्वरकी भक्तिमें लगानेवाला। ७ एक अद्वैत आत्मा जड़-चैतन्य मिश्रित ठहरानेवाला, और ८ पारखदृष्टि देकर नर-जीवोंको सर्व पिण्ड-ब्रह्माण्डके जड़ कलाओंसे छुड़ायके जड़ देह-बन्धनसे जीवन्मुक्त करानेवाले

दिवस्पति इन्द्र तथा निर्मोह, तत्त्वदर्शी, निष्प्रकम्प्य, निरुत्सुक, धृतिमान्, अव्यय और सुतपा— ये सप्तर्षि होंगे। मनुके पुत्र चित्रसेन, विचित्र आदि होंगे ॥

(१४) भौत्य मनु, चाक्षुष, पवित्र आदि ५ देवगण, शुचि इन्द्र तथा अग्निबाहु, शुचि, शुक्र, मागध, अग्निध्र, युक्त और जित— ये सप्तर्षि होंगे। उस मनुके पुत्र ऊरु और गम्भीर बुद्धि आदि राजा होंगे, इत्यादि ॥

(विष्णुपुराण, तृतीय अंशमें इसका विस्तारसे वर्णन किया है)॥

है। इसीमें आठवाँ श्रीसद्गुरु बन्दीछोर सर्वोमें श्रेष्ठ हैं ॥

२. अष्टमद *:— १ धन, २ राज्य, ३ देह, और ४ स्त्री मद, ये पिण्डकलाके मद हैं। ५ विद्या, ६ ज्ञान, ७ तप, और ८ सिद्धिमद, ये ब्रह्माण्डकलाके मद हैं ॥

३. अष्ट मैथुन ×:— १ स्त्रीका स्मरण, २ शृङ्गारादि वाणी-का श्रवण, ३ दर्शन, ४ भाषण, ५ विषय कथा, ६ हँसना, ७ विषयका ध्यान और ८ स्त्रीसङ्ग है ॥

४. योगके अष्ट अङ्गः— १ यम, २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार, ६ धारणा, ७ ध्यान और ८ समाधि है ॥

५. अष्टङ्गी माया प्रथमः— १ नाग, २ कूर्म, ३ कृकल, ४ देवदत्त, ५ धनञ्जय, ६ इङ्गला, ७ पिङ्गला, और ८ सुषुम्ना, यह ब्रह्माण्डकला अष्ट वायुरूप अष्टङ्गी है ॥

६. अष्टङ्गी माया दूसरीः— १ प्राण, २ अपान, ३ उदान, ४ व्यान, ५ समान, ६ वात, ७ पित्त और ८ कफ, यह पिण्डकला अष्ट वायुरूप अष्टङ्गी है ॥

७. अष्टङ्गी माया तीसरीः— १ चिन्तन, २ अनुसन्धान, ३ संकल्प, ४ विकल्प, ५ निश्चय, ६ निश्चयात्मक, ७ अहङ्कार और ८ अहङ्कारका कर्तव्य, ऐसे अन्तःकरण चतुष्टय-

---

* दोहा:— नारि देह अरु राज्य धन। विद्या सिद्धि तप ज्ञान ॥
अष्ट महा मद माहि सब। भूले जीव अज्ञान ॥

× श्लोकः - स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्य भाषणं ॥
सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेव च ॥ सं०—

रूप अष्टङ्गी माया ब्रह्माण्ड कला है ।।

८. अष्टङ्गी माया चौथीः--१ पृथ्वी, २ आपः (जल), ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश, ६ सत्त्व, ७ रज, और ८ तमोगुणरूप तत्त्वोंकी क्रिया, ये अष्टधा प्रकृति पिण्डकी कला है। इसीसे मायाको अष्टभुजी भी कहते हैं। और तमोगुणी हिंसक राक्षसी लोग जड़-देवीकी मूर्ति अष्टभुजी बनाय, पूजन करके उसके सामने बकराआदि बलिदान जीवहिंसा करते-करवाते हैं ।।

९. अष्टदलका मन चक्रः— स्थान हृदयमें, जो-जो दलपर मन बैठता है, तैसी बुद्धि भी फिरती है, ऐसा कहते हैं। १ पहिले दलपरः— मन बैठनेसे हास्य, विनोद, आनन्द। २ दूसरे परः— पुत्र, स्त्री आदि मोहजाल । ३ तीसरे परः-- क्रोध, द्वेष, दुष्ट वासना । ४ चौथे परः--आलस, उद्वेग, चिन्ता । ५ पाँचवें परः--उदार, वीर, शुद्ध वासना । ६ छठयें परः—श्रवण, कीर्तन, धर्म, शान्ति । ७ सतयें परः--अष्ट-भोग, और मन ८ आठवें दलपरः--बैठनेसे तीर्थयात्रा माने हैं ।।

१०. अष्ट सिद्धियाँ *:— १ अणिमाः--लघुरूप बनना । २ महिमाः— बड़ारूप धारण करना, ३ लघिमाः— कपासवत् हल्कारूप बनना, ४ गिरिमाः—विश्वरूप या पर्वताकार स्वरूप धारण करना, ५ प्राप्तिः— जहाँ चाहे तहाँ चला जाय, ६ प्राकाम्यः— कोई मनोरथ सिद्ध करना, ७ ईशित्वः—सर्वमें श्रेष्ठता पाना,

* श्लोकः— अणिमा महिमा चैव, गरिमा लघिमा तथा ।। सं०—
प्राप्तिप्राकाम्यमिशित्त्वं, वशित्वं चाष्ट सिद्धयः ।। अमर कोश ।।

और ८ वशित्वः— कोईको अमाय देना या अपने स्वाधीन रखना माने हैं ॥

११. पूर्यष्टक देह❀:— १ सूक्ष्म चार तत्त्व, २ इन्द्रियाँ, ३ प्राण, ४ मन, ५ बुद्धि, ६ वासना, ७ शुभाऽशुभ कर्म, और ८ अविद्या कहिये जड़ाशक्ति इसे मिलायके देह छूटे बाद अष्ट अङ्गोंका बीजरूप सूक्ष्म देह रहता है, सो पूर्यष्टक कहलाता है ॥

अष्ट प्रतिमा (पृष्ठ ३८ में), अष्ट योग (पृष्ठ ७५ में), प्रथम ही कहा है।× इत्यादि अष्ट-अष्ट अङ्गोंकी माया बहुत ही भेदसे हुई हैं ॥

❀ श्लोकः - वागादि पञ्च श्रवणादि पञ्च, प्राणादि पञ्च भ्रमुखानि पञ्च ॥
बुद्ध्याद्यविद्याऽपि च कामकर्मणी, पूर्य्यष्टकं सूक्ष्म शरीर माहुः ॥
॥ विवेक चूड़ामणि ॥

×(१) अष्ट वसुओंके नामः—१ धर। २ ध्रुव। ३ सोम। ४ विष्णु (सावित्र)। ५ अनिल। ६ अनल। ७ प्रत्यूष। ८ प्रभास है ॥

(२) शिवकी अष्टमूर्ति मानी गई हैः—१ क्षितिमूर्ति = सर्व। २ जलमूर्ति = भव। ३ अग्निमूर्ति = रुद्र। ४ वायुमूर्ति = उग्र। ५ आकाश-मूर्ति = भीम। ६ यजमानमूर्ति = पशुपति। ७ चन्द्रमूर्ति = महादेव। ८ सूर्यमूर्ति = ईशान, माना है ॥

(३) अष्ट दिग्गजः—१ ऐरावत (पूर्व)। २ पुण्डरीक (आ०)। ३ वामन (द०)। ४ कुमुद (नै०)। ५ अञ्जन (प०)। ६ पुष्पदन्त (वा०)। ७ सार्वभौम (उ०) ७ सुप्रतीक (उ० पू० ईशान) ॥

(४) अष्ट भैरवोंके नामः—१ महाभैरव। २ संहार भैरव। ३ असिताङ्ग भैरव। ४ रुरुभैरव। ५ काल भैरव। ६ क्रोध भैरव। ७ ताम्रचूड़ भैरव। ८ चन्द्रचूड़ भैरव, कहा है ॥

(५) आठ प्रहर एक दिन-रात मिलायके होते हैं। यथा—दिनमें—१ पूर्वाह्न वा प्रातः, २ मध्याह्न, ३ अपराह्न, ४ सायं । रात्रिमें—१ प्रदोष वा रजनी मुख, २ निशीथ, ३ त्रियामा, ४ उषा, भोर वा ब्राह्म मुहूर्त, कहा गया है ॥

(६) शहदके आठ भेदः—माक्षिक, भ्रामर, क्षौद्र, पौत्तिक, छात्रक, आर्घ्य, औद्दालक, तथा दाल नामसे मधु आठ प्रकारका होता है, माना है॥

(७) मनुके अनुसार विवाह आठ प्रकारके माने गये हैं। यथाः—१ ब्राह्म। २ दैव । ३ आर्ष । ४ प्राजापत्य । ५ आसुर । गान्धर्व। ७ राक्षस और ८ पैशाच ॥—मनुस्मृतिः अध्याय ३—२१ ॥

प्रत्येक विवाहका विस्तृतरूप मनुस्मृतिः अ० ३. श्लोक २३ से ३४ तकमें वर्णित है ॥

(८) राज्यके आठ अङ्ग माने गये हैं, जिन्हें राज्याङ्ग वा प्रकृति कहते हैं। यथाः—१ राजा, २ अमात्य (मन्त्री), ३ सुहृत्, ४ कोष (खजाना), ५ राष्ट्र (प्रजा), ६ दुर्ग (किला), ७ बल (शक्ति, सेनादि), और ८ पौरश्रेणी (पुरवासियोंका समूह), माना है ॥

(९) पुराणोंकी आठ सिद्धियाँः—१ अञ्जन, २ गुटका, ३ पादुका, ४ धातुभेद, ५ बोताल, ६ वज्र, ७ रसायन, ८ योगिनी, कहा है ॥

(१०) सांख्यमें आठ सिद्धियाँः—१ तार, २ सुतार, ३ तारतार, ४ रम्यक, ५ अधिभौतिक, ६ अधिदैविक, ७ आध्यात्मिक, ८ प्रत्यक्ष ॥

(११) आठ कष्टः— १ अविद्या, २ अस्मिता, ३ राग, ४ द्वेष, ५ अभिनिवेश, ६ दैहिक, ७ दैविक, और ८ भौतिक, कहा है ॥

(१२) आठ प्रकारके विद्येश्वर पदः— १ अनन्त, २ सूक्ष्म, ३ शिवोत्तम, ४ एक नेत्र, ५ एक रुद्र, ६ त्रिमूर्ति, ७ श्रीकण्ठ और शिखण्डी कहा है ॥

(१३) चिकित्साके आठ अङ्गः— १ शल्यतन्त्र (सामान्य शस्त्र-क्रिया), २ शालाक्यतन्त्र (कन्धेके ऊपरके आँख, कान, नाक, दाँत, होठ आदिके रोगोंमें विशेष शस्त्रक्रिया), ३ कायचिकित्सातन्त्र,

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके नव-नव अङ्ग वर्णन ॥ ❀ ॥ १६ ॥

१. नवरस गायनकेः—— *१ शृङ्गार, २ वीर, ३ करुणा, ४ अद्भूत, ५ हास्य, ६ भयानक, ७ बीभत्स कहिये गालियाँदि भाषण, ८ रौद्रः-(यमदण्ड वर्णन), और ९ शान्त है ॥

२. नवखण्ड पृथ्वीः——१ इन्द्रखण्ड हाथमें । २ नागखण्ड नाकमें । ३ वरुणखण्ड जीभमें । ४ गभस्तिखण्ड नेत्रमें । ५ ताम्रखण्ड गुदामें । ६ ब्रह्मखण्ड कानमें । ७ भरतखण्ड लिङ्ग

---

४ भूतविद्यातन्त्र, ५ कौमारभृत्यतन्त्र, (बच्चोंके रोगोंकी चिकित्सा), ६ अगदतन्त्र (साँप, बिच्छू आदिके काटनेपर इलाज), ७ रसायन-तन्त्र और ८ वाजीकरण तन्त्र, कहा गया है ॥

(१४) ईश्वरके ८ धर्मः— १ सर्वशक्तिपना । सर्वज्ञपना । व्यापक-पना । एकपना । स्वाधीनपना । समर्थपना । परोक्षपना । और ८ माया-उपाधिवान्पना, कहा है ॥

(१५) जीवके ८ धर्म माना हैः— १ अल्पशक्तिपना । अल्पज्ञ-पना । परिछिन्नपना । नानापना । पराधीनपना । असमर्थपना । अपरो-क्षपना । और ८ अविद्याउपाधिवान्पना, कहा है ॥

(१६) पाश ८— दया, शङ्का, भय, लज्जा, निन्दा, कुल, शील और धन ॥

(१७) प्रकृति ८—पाँच तत्त्व, मन, बुद्धि, और हङ्कार मिलके है ॥

(१८) मूर्तिमद ८—पृथ्वीमद, जलमद, तेजमद, पवनमद, आकाशमद, चन्द्रमद, सूर्यमद, और आत्ममद, कहा है ॥

(१९) शब्दशक्तिग्रहणहेतु ८—व्याकरण, उपमान, कोश, आप्त-वाक्य, वृद्ध व्यवहार, वाक्यशेष, विवरण और सिद्धपदकी सन्निधि ॥ इत्यादि कई प्रकारसे आठ-आठ अङ्ग माने हैं ॥

* श्लोकः—शृङ्गार वीर करुणाद्भुत हास्य भयानकाः ॥ सं०—
विभत्सरौद्रो च रसा शृङ्गार सुचिरुज्ज्वल ॥ अमर कोश ॥

स्थानमें। ८ सौम्यखण्ड त्वचामें । और ९ कशेरुखण्ड पग स्थानमें, माने हैं। ऐसी नवखण्ड❀ पृथ्वी पिण्ड-ब्रह्माण्डमें ठहराये हैं ॥

३. नव नाड़ियाँ:—× १ पुहूखाकास्थान बाएँ कानमें, २ पयस्विनी:— दाहिने कानमें, ३ गन्धारी:— बाएँ नेत्रमें, ४ हस्तिनी:— दाहिने नेत्रमें, ५ कुहू:— लिङ्गस्थानमें, ६ शङ्खिनी:— गुदा स्थानमें, ७ अलम्बुषा:—मुखस्थानमें, ८ गणेशनी:—बाएँ हाथमें, और ९ वारुणी:—दाहिने हाथमें कहा है ॥

४. नवविधा भक्ति:— ‡ १ श्रवण, २ कीर्तन , ३ नामस्मरण, ४ पादसेवन, ५ अर्चन, ६ वन्दन, ७ दासभाव, ८ सखापन और ९ आत्मनिवेदन कहिये आत्म-समर्पण करना और निजस्वरूप-

---

❀ नौखण्ड वर्णन:—

दोहा:—ब्रह्म सौम्य गभस्ति अरु। नाग खण्ड ये चार ॥
वरुण इन्द्र कस्येरु युत। भरत ताम्र नव धार ॥
कर्ण त्वचा औ नेत्रमें। घ्राण रु रसना स्थान ॥
हस्त पाद औ लिङ्ग गुदा। पिण्ड नौखण्ड बखान ॥

× नवनाड़ी वर्णन:—

दोहा:— पुहू पयस्विनी दोउ कर्णमें। गन्धारी हस्तिनी दो नेत्र ॥
कुहू शङ्खिनी अलम्बुषा। लिङ्ग गुदा मुख क्षेत्र ॥
गणेशनी औ वारुणी। बाम रु दहिना हाथ ॥
नवनाड़ी यह जानिये। तन धारिनके साथ ॥

‡ नवधा भक्ति वर्णन:—　　ले० — रामस्वरूपदास ॥

श्लोक:—"स्मरणं किर्तन विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ॥
अर्चनं वन्दनं दास्यम् सख्यमात्मनिवेदनम् ॥"

को जानना है ॥

५. नवग्रहः— *१ रवि (सूर्य), २ शशि (चन्द्र), ३ शनि, ४ मङ्गल, ५ बुध, ६ बृहस्पति, ७ शुक्र, ८ राहु, और ९ केतु हैं ॥

६. नव निद्धिः— × १ महापद्म, २ पद्म, ३ शङ्ख, ४ मकर, ५ कच्छप, ६ मुकुन्द, ७ कुन्द, ८ नील और ९ खर्व, ये सब संख्याओंके प्रमाण माने हुए हैं ॥

७. नवनाथः— आदिनाथ महादेव, आपसे सब नाथ हुए हैं । १ मत्स्येन्द्रनाथ, २ गोरखनाथ, ३ जालन्धरनाथ, ४ चर्पटनाथ, ५ मङ्गलनाथ, ६ चम्बानाथ, ७ प्राणनाथ, ८ घघ्यूनाथ, और ९ गोपीनाथ, ये नव नाथ सिद्ध योगी हुए, ऐसा मानते हैं ॥ नव द्वार (पृष्ठ ६९ में), नव कोश (पृष्ठ १०९ से ११२ तकमें), नव व्याकरण (पृष्ठ १२३ में तथा १७६ (७) में), प्रथम ही कहा है । ‡ इत्यादि नव-नव अङ्गोंकी माया बहुत ही भेदसे हुई हैं ॥

---

* नवग्रह वर्णनः—

दोहाः— रवि शशि शनि शुक्र बुध । मङ्गल गुरु हैं सात ॥
केतु औ राहु मिलायके । नवग्रह याहिं दिखात ॥

×. नवनिद्धि वर्णनः—   ले०—रामस्वरूपदास ॥

श्लोकः— महापद्मश्च पद्मश्च, शंखोमकर कच्छपौ ॥
मुकुन्द कुन्द नीलाश्च, खर्वश्च निधयो नवः ॥ अमरकोश ॥

—१ पद्म । २ महापद्म । ३ कच्छप । ४ नील । ५ मकर । ६ मुकुन्द । ७ शंख । ८ खर्व और ९ नन्द, कहा गया है ॥

‡ (१) नौगणदेवताः—१ आदित्य । २ विश्वेदेव । ३ वसु । ४ तुषित । ५ आभास्वर । ६ अनिल । ७ महाराजिक । ८ साध्य और

६ रुद्र। ये नव गण देवता वा संहत देवता कहे जाते हैं, प्रत्येकके अनेक भेद माने गये हैं ॥

(२) नवदुर्गाः— १ शैलपुत्री। २ ब्रह्मचारिणी। ३ चन्द्रघण्टा। ४ कूष्माण्डा। ५ स्कन्दमाता। ६ कात्यायनी। ७ कालरात्रि। ८ महागौरी। ९ सिद्धिदात्री, कहा है ॥

(३) नवकन्यकाः— १ कुमारी। २ त्रिमूर्ति। ३ कल्याणी। ४ रोहिणी। ५ कालिका। ६ शाम्भवी। ७ दुर्गा। ८ चण्डिका। ९ सुभद्रा, कहा है॥

(४) नव शक्तिः— १ वैष्णवी। २ ब्रह्माणी। ३ रौद्री। ४ माहेश्वरी। ५ नारसिंही। ६ वाराही। ७ इन्द्राणी। ८ कार्तिकी। ९ शर्वमङ्गला, कहा है ॥

(५) नवरत्नः— १ हीरा, २ मूँगा, ३ मोती, ४ मरकत (पन्ना), ५ वैदूर्य, (लहसुनियाँ), ६ गोमेद, ७ माणिक, ८ नीलम और ९ पुष्पराज (पोखराज), कहा है ॥

(६) नवधातुः— ७ मुख्य धातु और २ उपधातु मिलायके होते हैं:— १ लोहा। २ ताँबा। ३ चाँदी। ४ सोना। ५ जस्ता। ६ राँगा। ७ शीशा तथा ८ पीतल (यह उपधातु है, ताँबा और जस्तेके योगसे बनता है), और ९ काँसा (यह उपधातु है, ताँबा और राँगाके योगसे बनता है ॥

(७) नौ व्याकरण दूसरीः— १ इन्द्र, २ चन्द्र, ३ शाक कृत्स्न, ४ शकटायन, ५ पिशालि, ६ पाणिनि, ७ अमर, ८ जैनेन्द्र, ९ सरस्वती॥

(८) नव खण्डः— १ भारत, २ इलावर्त, ३ रम्यक, ४ कुरु, हरिवर्ष, ६ किम्पुरुष, ७ केतुमाल, ८ भद्राश्व, ९ हिरण्य, कहा है॥

(९) नौ गुणः— १ शम, २ दम, ३ तप, ४ शौच, ५ क्षमा, ६ आर्जव, ७ ज्ञान, ८ विज्ञान, ९ आस्तिक्य, कहा है ॥

(१०) पञ्चविषय, और चित्त चतुष्टय संयुक्त नौ तत्त्वके सूक्ष्म देह कहा है ॥

॥ ❀ ॥ माया प्रकृतिके दश-दश अङ्ग वर्णन ॥ १७ ॥ ❀ ॥

१. दशमुद्राः— * १ खेचरी, २ भूचरी, ३ चाचरी, ४ अगोचरी, और ५ सर्वसाक्षिणी, ये पाँच पिण्डकलाकी बहिर-मुद्रा हैं । ६ सन्मुखी, ७ उन्मीलनी, ८ शाम्भवी, ९ आत्मबोधिनी, और १० पूर्णबोधिनी, ये पाँच ब्रह्माण्डकलाकी गुप्त मुद्रा हैं ॥

२. दश अवतारः—१ मच्छ, २ कच्छ, ३ वराह, ४ नरसिंह, ५ वामन, ६ परशुराम, ७ राम, ८ कृष्ण, ९ बौद्ध, और १० कलङ्की, कहा है ॥

३. दश नाद अनहदः— १ दुन्दुभी । २ भेरी । ३ घण्टा । ४ मृदङ्ग । ५ शङ्ख । ६ झाँझ । ७ वीणा । ८ सितार । ९ बाँसुरी । और १० सहनाई है ॥

४. स्त्रीसम्भोगमें दश गुणोंका नाशः— × १ ज्ञान ।

---

(११) नौ प्रकारके प्राणायामः— १ अनुलोम-विलोम, २ सूर्यभेदी, ३ उज्जायी, ४ सीत्कारी, ५ शीतली, ६ भस्त्रा, ७ भ्रामरी, ८ मूर्च्छा और ९ प्लाविनी, कहा है ॥

(१२) नौ प्रकारके संसारः— ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, भोक्ता, भोग्य, भोग, कर्त्ता, कारण, क्रिया, ऐसा माना है ॥

* श्लोकः— खेचरी भूचरी चैव, चाचरी च अगोचरी ॥
उन्मनी चेतिविख्याताः पञ्च मुद्राः प्रकीर्तिताः ॥
परमुखी चोन्मीलिनी च, शाम्भवी चात्मभाषिणी ॥
पूर्णबोध प्रबोधी च, पञ्च गोप्याहि मुद्रिकाः ॥ सं०—

× दोहाः— ज्ञान हरै क्रिया हरै, बल वीर्य हरै लाज ॥
यश लक्ष्मी किरती हरै, हरै तप मुक्ति समाज ॥ वैराग्यशतक ॥

२ क्रिया। ३ बल। ४ वीर्य। ५ लाज। ६ यश। ७ लक्ष्मी। ८ कीर्ति। ९ तप। और १० मुक्तिका समाज। ये सब नाश हो जाते हैं॥

दश इन्द्रियाँ (पृष्ठ ५६ में), दश द्वार (पृष्ठ ६९ में), प्रथम ही कही हैं। इत्यादि दश-दश मायाके बहुत ही अङ्ग प्रगट हुए हैं॥बाकी भाग टिप्पणीमें देखिये ! ❀ ॥

❀ (१) दश प्रकारके देव योनियोंके नामः— १ विद्याधर। २ अप्सरा। ३ यक्ष। ४ रक्ष। ५ गन्धर्व। ६ किन्नर। ७ पिशाच। ८ गुह्यक। ९ सिद्ध। १० भूत, कहा है॥

(२) दश विश्वेदेवः— १ क्रतु। २ दक्ष। ३ वसु। ४ सत्य। ५ काम। ६ काल। ७ ध्वनि। ८ रोचक। ९ आद्रव। १० पुरुरवा, कहा है॥

(३) दश महाविद्याः—१ काली। २ तारा। ३ षोड़शी। ४ भुवनेश्वरी। ५ भैरवी। ६ छिन्नमस्ता। ७ धूमावती। ८ बगला। ९ मातङ्गी। १० कमला॥

(४) दशों दिग्पालः— १ पूर्व = इन्द्र। २ पश्चिम = वरुण। ३ उत्तर = कुबेर। ४ दक्षिण = यम। ५ ईशान (पू० उ०) = ईश। ६ नैर्ऋत्य (प० द०) = नैर्ऋती। ७ वायव्य (वायुकोण पू० द०) = वायु। ८ आग्नेय (अग्निकोण प० उ०) = अग्नि। ऊर्ध्व = ब्रह्मा। अधः = शेष, कहा है॥

(५) धर्मके दश लक्षण कहा हैः— १ धृति। २ क्षमा। ३ दम। ४ अस्तेय (चोरी न करना)। ५ शुची। ६ इन्द्रिय निग्रह। ७ बुद्धि। ८ विद्या। ९ सत्य। १० अक्रोध (क्रोध न करना वा क्रोधको रोकना)॥

(६) नाटक १० प्रकारका होता है। यथाः—१ नाटक, २ प्रकरण, ३ भाण, ४ व्यायोग, ५ समवकार, ६ डिम, ७ इहामृग, ८ अङ्क, ९ वीथी, १० प्रहसन, कहा है॥

(७) अग्निकी दश कलाएँ कही गयी हैं:—१ धूम्रा, २ अर्चि, ३ ऊष्मा, ४ ज्वलिनी, ५ ज्वालिनी, ६ विस्फुलिङ्गिनी, ७ सुश्री, ८ सुरूपा, ९ कपिला तथा

"माया प्रकृतिके ११ । १२ । १३ । १४ । १५, इत्यादि अनेक अङ्ग माने हैं, सो विवरण ॥ १८ ॥"

१. एकादश रुद्रः—१ वासुकी । २ कपाली । ३ त्र्यम्बक । ४ महावीर । ५ कपर्द्दी । ६ मृग । ७ व्याध । ८ बहुरूप । ९ हरिरैवत् । १० वीरभद्र । और ११ वृषशम्भु, कहा है * ॥

१. श्रीमद्भागवतके द्वादश स्कन्ध वा प्रकरण कायम किये हैं ॥

---

१० हव्य-कव्यवाहा है ॥

(८) इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु,सोम, ईशान, ब्रह्मा, नागराज, ये १० देवताएँ माने गये हैं ॥

(९) ऐरावत, भेड़, भैंसा, प्रेत, तिमि (मगर), मृग, अश्व, वृषभ, हंस, और कच्छप— ये १० दिग्पालोंके वाहन माने गये हैं ॥

(१०) वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा, त्रिशूल, कमल, और चक्र— ये १० क्रमशः इन्द्रादिके आयुध माने गये हैं ॥

(११) आत्माके विधेय विशेषण दशः—१ सत् । चित् । आनन्द । ब्रह्म । स्वयं प्रकाश । कूटस्थ । साक्षी । द्रष्टा । उपद्रष्टा, और १० एक, कहा है॥

(१२) आत्माके निषेध्य विशेषण दशः—१ अनन्त । अखण्ड । असङ्ग । अद्वितीय । अजन्मा । निर्विकार । निराकार । अव्यय । अव्यक्त और १० अक्षर ॥

* (१) दूसरी प्रकारसे एकादश रुद्रोंके नामः— १ हर । २ बहुरूप । ३ त्र्यम्बक । ४ अपराजित । ५ कपर्दी । ६ रैवत । ७ मृगव्याध । ८ वृषाकपि । ९ शम्भु । १० शर्व । और ११ कपाली, कहा है ॥

(२) अग्निपुराणमें गन्धर्वोंके ११ गण माने गये हैं, उनके नामः— १ आश्राज्य । २ अन्धारि । ३ वम्भारि । ४ सूर्यवर्चा । ५ कृधु । ६ हस्त । ७ सुहस्त । ८ स्वन् । ९ मूर्धन्या । १० विश्वावसु । और ११ कृशानु, कहा है ॥

२. द्वादश तिलकः—१ नाक। २ कपाल। ३ मस्तक। ४ गला। ५-६ दोनों कान। ७-८ दोनों भुजा। ९-१० छातीपर दोनों तरफ़। ११ नाभि, और १२ पीठपर, ऐसे तिलक देहोंके १२ स्थानोंपर लगाते हैं॥

३. द्वादश ज्योतिर्लिङ्गः—१ रामेश्वर। २ काशी विश्वेश्वर। ॐकारेश्वर। ४ महाकालेश्वर। ५ हरिहरेश्वर। ६ सोमेश्वर। ७ केदारेश्वर। ८ गोकर्ण-महाबलेश्वर। ९ कपालेश्वर। १० त्र्यम्बकेश्वर। ११ कपर्दिनेश्वर। और १२ घृष्णेश्वर माने हैं॥

४. बारह इमामः—१ शाहमर्दान। २ हसन। ३ हुसेन। ४ जैनूल। ५ अबदीन। ६ महम्मदबाकर। ७ जाफर। ८ मूसाकाजीम। ९ अली। १० मूसारजा। ११ नकी-हसन-

इनमें ये प्रधान गन्धर्व माने गये हैं—हाहा। हूहू। हंस। चित्ररथ। विश्वावसु। गोमायु। तुम्बुरू। नन्दि॥

(३) ज्ञानसाधन ११ हैं—१ विवेक। २ वैराग्य। ३ षट् सम्पत्ति। ४ मुमुक्षुता। ५ गुरुपसत्ति। ६ श्रवण। ७ तत्त्वज्ञानाभ्यास। ८ मनन। ९ निदिध्यासन। १० मनोनाश और ११ वासनाक्षय, कहा है॥

(४) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और एक मन मिलके ११ कलाएँ हैं॥

(५) पश्चिम देशके मुसल्मानोंके ११ पैगम्बरोंके नामः—१ हजरत आदम। २ नूह। ३ इबराहीम। ४ इसहाक। ५ याकूब या इसराइल। ६ मूसा। ७ दाऊद नबी। ८ सुलेमान। ९ योहन्ना नबी। १० ईसा, और ११ मुहम्मद-मुस्तफ़ा। ये सब 'हजरत' कहलाते हैं॥

अजगरी, और १२ मेंहदी माने हैं, और टिप्पणीमें देखिये ❀ ॥

❀ (१) प्रसिद्ध राशियाँ १२ माने हैं:— १ मेष। २ वृष। ३ मिथुन। ४ कर्क। ५ सिंह। ६ कन्या। ७ तुला। ८ वृश्चिक। ९ धनु। १० मकर। ११ कुम्भ। १२ मीन। ये क्रमशः चैत्रसे लेकर फाल्गुन तककी १२ संक्रान्तियाँ भी मानी जाती हैं॥

(२) सूर्यकी १२ कलाओंके नामः—१ तपिनी। २ तापिनी। ३ धूम्रा। ४ मरीची। ५ ज्वालिनी। ६ रुची। ७ सुषुम्णा। ८ भोगदा। ९ बिश्वा। १० बोधिनी। ११ धारिणी। १२ क्षमा, कहा है॥

(३) द्वादश आदित्योंके नामः— १ विवस्वान्। २ अर्यमा। ३ पूषा। ४ त्वष्टा। ५ सविता। ६ भग। ७ धाता। ८ विधाता। ९ वरुण। १० मित्र। ११ शक्र। १२ उरुक्रम, कहा है॥

(४) संयोग समयमें स्त्रियोंकी स्वाभाविक अङ्गादि चेष्टाओंको 'हाव' कहते हैं। काव्यशास्त्रमें हाव १२ प्रकारके माने गये हैं। यथा:—१ लीला। २ हेला। ३ ललित। ४ विभ्रम। ५ विहृत। ६ विलास। ७ विच्छिति। ८ विव्वोक। ९ किलकिञ्चित। १० मोट्टाइत। ११ कुट्टमित। १२ बोधक, कहा है॥

(५) मृगके १२ भेदः—१ कृष्णसार। २ रुरु। ३ न्यंकु। ४ रंकु। ५ शम्बर। ६ रौहिष। ७ गोकर्ण। ८ पृषत। ९ ऐण। १० ऋश्य। ११ रोहित। १२ चमर, कहा है॥

(६) क्षार १२ प्रकारके कहा है:—१ जवाखार। २ सज्जीखार। ३ सुहागा। ४ सेंधा नोंन। ५ साँभर नोंन। ६ समुद्री नोंन। ७ सञ्चर नोंन (कटीला नोंन)। ८ काला नोंन। ९ कँचिया नोंन। १० खारी नोंन। ११ नौसादर। और १२ सोरा, ऐसे माना है॥

(७) कबीरपन्थी १२ शाखाओंके नामः— १ नारायणदास। २ यागौदास। ३ सूरतगोपाल। ४ मूल निरञ्जन। ५ टकसारी। ६ भगवानदास।

१. त्रयोदश गुणका बीड़ाः— १ पान, २ सुपारी, ३ कत्था, ४ चूना, ५ लवङ्ग, ६ इलायची, ७ जायफल, ८ जायपत्री, ९ केशर, १० बदाम, ११ खजूरी, १२ गरी, और १३ कपूर है ❀॥

---

७ सत्यनामी। ८ कमाली। ९ रामकबीर। १० प्रेमधामकी वाणी। ११ जीवा-पन्थ। १२ गरीबदास॥

(८) शरीरके १२ प्रमुख अङ्गः— १ शिर, २ नेत्र, ३ कर्ण, ४ प्राण, ५ मुख, ६ हाथ, ७ पैर, ८ नाक, ९ कण्ठ, १० त्वचा, ११ गुदा, १२ शिश्न है॥

(९) अनाहत चक्रके, द्वादश दलः— क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ऐसा माना है॥

(१०) मुद्रा १२ प्रकारके कहा हैः— १ धेनु मुद्रा, २ अमृतीकरण, ३ मत्स्य-मुद्रा, ४ अवगुण्ठनी मुद्रा, ५ शंख मुद्रा, ६ मुसल मुद्रा, ७ चक्रमुद्रा, ८ परमी-करणमुद्रा, ९ महामुद्रा, १० योनिमुद्रा, ११ गरुड मुद्रा, और १२ गालिनी मुद्रा, कहा है॥

(११) अनात्माके धर्म १२:— १ अनित्य, विनाशी, ३ अशुद्ध, ४ नाना, ५ क्षेत्र, ६ आश्रित, ७ विकारी, ८ परप्रकाश्य, ९ हेतुमान्, १० व्याप्य, ११ संगी, १२ आवृत, कहा है॥

(१२) आत्माके धर्म १२:— १ नित्य, २ अव्यय, ३ शुद्ध, ४ एक, ५ क्षेत्रज्ञ, ६ आश्रय, ७ अविक्रिय, ८ स्वप्रकाश, ९ हेतु, १० व्यापक, ११ असङ्गी, १२ अनावृत, कहा है॥

(१३) ब्राह्मणके व्रत १२:—ज्ञान। सत्य। शम। दम। श्रुत। अमात्सर्य। लज्जा। तितिक्षा। अनसूया। यज्ञ। दान। धैर्य, कहा है॥

(१४) महत्ताहेतु धर्म १२:— धनाढ्यता। अभिजन। रूप। तप। श्रुत। ओज। तेज। प्रभाव। बल। पौरुष। बुद्धि। योग, कहा है॥

❀ कपूरके १३ प्रकार कहा है; यथा:— पोत्तास (बरास), भीमसेनी, सितकर,

सूर्यकी बारह महीनोंमें १२ नाम तथा उनके पार्षदोंमें ऋषि, अप्सराएँ, गन्धर्व, राक्षस, भल्ल और नाग, उन्होंके १२ महीनोंमें भिन्न-भिन्न नाम वर्णन। सूर्यव्यूह निम्न तरहसे कहा है:—

महीना (१२)	सूर्य (१२)	ऋषि (१२)	अप्सरा (१२)	गन्धर्व (१२)	राक्षस (१२)	भल्ल (१२)	नाग (१२)
१ मधु (चैत्र)	धाता	पुलस्त्य	कृतस्थली	तुम्बुरु	हेति	रथकृत्	वासुकी
२ माधव (वैशाख)	अर्यमा	पुलह	पुञ्जिकस्थली	नारद	प्रहेति	ओजः	कच्छनीर
३ शुक्र (जेष्ठ)	मित्र	अत्रि	मेनका	हहा	पौरुषेय	रथस्वन	तक्षक
४ शुचि (आषाढ़)	वरुण	वशिष्ठ	रम्भा	हूहू	शुक्र	चित्रस्वन	सहजन्य
५ नभ (श्रावण)	इन्द्र	अङ्गिरा	प्रम्लोचा	विश्वावसु	वर्य	श्रोता	एलापत्र
६ नभस्य (भाद्रपद)	विवस्वान्	भृगु	अनुम्लोचा	उग्रसेन	व्याघ्र	आसारण	शंखपाल
७ तप (आश्विन)	पूषा	गौतम	घृताची	धनञ्जय	वात	सुरुचि	सुषेण
८ तपस्य (कार्तिक)	क्रतु	भरद्वाज	वर्चा	पर्जन्य	सेनजित्	विश्व	ऐरावत
९ सह (मार्गशीर्ष)	अंशु	कश्यप	उर्वशी	ऋतसेन	विद्युच्छत्रु	तार्क्ष्य	महाशंख
१० पुष्य (पौष)	भग	आयु	पूर्वचित्ति	स्फूर्ज	अरिष्टनेमि	ऊर्ण	कर्कोटक
११ इष (माघ)	त्वष्टा	ऋचीकतनय (जमदग्नि)	तिलोत्तमा	शतजित्	ब्रह्मापेत	धृतराष्ट्र	कम्बल
१२ ऊर्ज (फाल्गुन)	विष्णु	विश्वामित्र	रम्भा	सूर्यवर्चा	मखापेत	सत्यजित्	अश्वतर

यह सब भी बारह-बारह अङ्गोंके माया-प्रकृतिमें ही गिना जाता है, ऐसा जानिये ! ॥

१. चौदह मनु:— १ स्वायम्भुव, २ स्वारोचिष, ३ उत्तम, ४ तामस, ५ रैवत, ६ चाक्षुष, श्राद्धदेव (वैवस्वत), ८ सावर्णि, ९ दक्षसावर्णि, १० ब्रह्मसावर्णि, ११ धर्मसावर्णि, १२ रुद्र-सावर्णि, १३ देवसावर्णि, और १४ इन्द्रसावर्णि, कहा है ॥

२. समुद्रसे निकले हुए चौदह रत्न:— * १ महादेवका वा इन्द्रका धनुष । २ धन्वन्तरि वैद्य । ३ कामधेनु गौ। ४ सप्तमुखोंका उच्चैश्रवा घोड़ा । ५ इन्द्रका ऐरावत हाथी। ६ लक्ष्मी । ७ पाञ्चजन्य शङ्ख । ८ हलाहल (कालकूट) विष। ९ मदिरा । १० अमृत । ११ कल्पतरु । १२ रम्भा अप्सरा। १३ चन्द्रमा, और १४ कामदेव कहिये मदन है । अथवा कौस्तुभ-मणि लेके चौदह रत्न गिनाये हैं, और टिप्पणीमें देखिये ×॥

शंकरावास, पांशु, पिञ्ज, अब्दसार, हिमबालुक, जूतिका, तुषार, हिम, शीतल, पत्रिकाख्य, कहा है ॥

* दोहा:— श्री मणि रम्भा वारुणी । धेनु धनुष गजराज ॥
हय धन्वन्तरी शंख विष । चन्द्र मदन तरुराज ॥
श्री मणि रम्भा वारुणी । अमी शंख गजराज ॥
कल्पद्रुम शशि धेनु धनु। धन्वन्तरी विष बाजि ॥

×(१) चतुर्दश इन्द्र:— १ इन्द्र । २ विश्वभुक् । ३ विपश्चित । ४ विभु । ५ प्रभु । ६ शिखी । ७ मनोजव । ८ तेजस्वी । ९ बलिर्भाव्य । १० त्रिदिव । ११ सुशान्ति । १२ सुकीर्ति । १३ ऋतधाता । १४ दिवस्पति ॥ —देवीपुराणे ॥

(२) चतुर्दश यमोंके नाम:— १ यम । २ धर्मराज । ३ मृत्यु । ४ अन्तक । ५ वैवस्वत । ६ नील । ७ दध्न । ८ काल । ९ सर्वभूतक्षय । १० परमेष्ठी । ११ वृकोदर । १२ औडम्बर । १३ चित्र । १४ चित्रगुप्त, कहा है॥

१. पन्द्रह द्रव्यमें दोषः---- * १ चोरी । २ हिंसा । ३ झूठभाषण । ४ डिम्भ । ५ काम । ६ क्रोध । ७ बड़ेपनका अहङ्कार । ८ धनमद । ९ भेद । १० वैर । ११ अविश्वास । १२ ईर्षा । १३ रण्डीबाजी । १४ जुवा खेलना । नाना प्रकारके नाच, गायन, बैठक, तमाशादि ख्याल, और १५ चौसर, बुद्धि-बल, गन्जीफा, पत्तादि खेलना, इत्यादि १५ मुख्य दोष द्रव्यमें कहा है ॥

---

(३) चौदह लोक ७ ऊपर और ७ नीचे मिलायके माने हैं। उनमें— भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक— ये सात ऊपरके लोक कहा है। तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल और पाताल— ये सात नीचेके लोक कहा है ॥

(४) चौदह विद्याएँ— ब्रह्मज्ञानादि-अलग ही माने हैं (पृष्ठ १३६ में है) ॥

(५) विष्णु पुराण, तृतीय अंशमें— चौदह भूत समुदायोंका वर्णन इस प्रकार किया गया हैः—सिद्ध, गुह्यक, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, सर्प, विद्याधर और पिशाच— ये आठ देवयोनियाँ मानी गयी हैं; तथा सरीसृप, वानर, पशु, मृग (जङ्गली प्राणी), और पक्षी—ये पाँच तिर्यग्— योनियाँ कही गयी हैं और एक प्रकारका मनुष्य योनि सम्बन्धी–यह भौतिक सर्ग कहलाता है ॥

(६) धर्म संहितामें चौदह महारत्नोंका उल्लेख इस प्रकार किया हैः— चक्र, रथ, मणि, खड्ग, चर्म (ढाल), ध्वजा और निधि (खजाना)— ये सात प्राणहीन तथा स्त्री, पुरोहित, सेनापति, रथी, पदाति, अश्वारोही और गजारोही— ये सात प्राणयुक्त, इस प्रकार कुल चौदह रत्न सब चक्रवर्तियोंके यहाँ रहते हैं ॥

* श्लोकः—स्तेयं हिंसाऽनृतं दम्भः, कामः क्रोधः स्मदोमदः ॥
भेदो वैरमविश्वासः संस्पर्धा व्यसनानि च ॥ सं०—

२. पन्द्रह तत्त्वोंकी स्थूलदेहः—पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ। पञ्च कर्मेन्द्रियाँ। और पञ्च विषय। ऐसे मुख्य १५ अङ्ग हुए हैं *॥

१. सोलह स्वर। २. सोलह आने। ३. सोलह स्त्रीके शृङ्गार, और ४. सोलह चन्द्रकी कलाएँ मानी हैं ×॥

---

* (१) मायाके १५ नामः— १ माया। २ अविद्या। ३ प्रकृति। ४ शक्ति। ५ सत्या। ६ मूला। ७ तूला। ८ योनि। ९ अव्यक्त। १० अव्याकृत। ११ अजा। १२ अज्ञान। १३ तमः। १४ तुच्छा और १५ अनीर्वचनीया कहा है॥

×(१) सोलह स्वरः—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः॥

(२) एक रुपयामें सोलह आने होते हैं, तैसे ही किसी कार्यकी पूर्णताको भी सोलह आना हुआ, ऐसा संकेत किया जाता है॥

(३) स्त्रीके सोलह शृङ्गारोंके नामः—१ शौच, २ उबटन, ३ स्नान, ४ केशबन्धन, ५ अङ्गराग, ६ अञ्जन, ७ जावक (महावर), ८ दन्तरञ्जन, ९ ताम्बूल, १० वसन्त, ११ भूषण, १२ सुगन्ध, १३ पुष्पहार, १४ कुंकुम, १५ भाल-तिलक. और १६ चिबुक-बिन्दू, कहा है॥

(४) चन्द्रमाकी १६ कलाएँः—१ अमृता। २ मानदा। ३ पूषा। ४ पुष्टि। ५ तुष्टि। ६ रति। ७ धृति। ८ शशिनी। ९ चन्द्रिका। १० कान्ति। ११ ज्योत्स्ना। १२ श्री। १३ प्रीति। १४ अंगदा। १५ पूर्णा। १६ पूर्णामृत॥

(५) हिन्दू धर्मशास्त्रके अनुसार द्विजातियोंके कुल १६ संस्कार माने गये हैं। यथाः—१ गर्भाधान्। २ पुंसवन। ३ सीमन्त। ४ जातकर्म। ५ नामकरण। ६ निष्क्रमण। ७ अन्नप्रासन। ८ चूड़ाकरण (मुण्डन)। ९ कर्णवेध। १० उपनयन। ११ वेदारम्भ। १२ समावर्तन। १३ विवाह। १४ गृहस्थाश्रम। १५ वानप्रस्थाश्रम। और १६ संन्यासाश्रम, कहा है॥

(६) १६ कलाः—१ हिरण्यगर्भ। २ श्रद्धा। ३ आकाश। ४ वायु। ५ तेज। ६ जल। ७ पृथ्वी। ८ दशेन्द्रिय। ९ मन। १० अन्न। ११ बल।

१. सत्रह तत्त्वोंका सूक्ष्मदेहः— पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ। पञ्च कर्मेन्द्रियाँ। पञ्च प्राण। मन और बुद्धि मिलायके, ऐसा वासनामात्र वायुकलाका व्यवहार होता है ॥

१. अठारह पुराणः—१ ब्रह्म। २ पद्म। ३ विष्णु। ४ शिव। ५ भागवत। ६ नारद। ७ मार्कण्डेय। ८ अग्नि। ९ भविष्य। १० ब्रह्मवैवर्त। ११ लिङ्ग। १२ वराह। १३ स्कन्द। १४ वामन। १५ कूर्म। १६ मत्स्य। १७ गरुड़, और १८ ब्रह्माण्ड पुराण, कहा है ॥

२. अठारह वर्णोंके गुरु ब्राह्मणः— ४ वेद। षट् नित्यकर्म। चार वर्ण और चार आश्रम मिलायके माने हैं ॥

३. अठारह भार वनस्पति ठहराये हैं *॥ इक्कीस ब्रह्माण्डः—

---

१२ तप। १३ मन्त्र। १४ कर्म। १५ लोक और १६ नाम, कहा है ॥

* (१) कश्यप ऋषिके वीर्यसे दक्ष कन्या दनुके गर्भसे उत्पन्न प्रधान १८ दानवोंके नामः—द्विमूर्द्धा। तापन। शम्बर। अरिष्ट। हयग्रीव। विभावसु। अयोमुख। शंकुशिरा। स्वर्भानु। कपिल। अरुण। पुलोमा। वृषपर्व्वा। एकचक्र। विरूपाक्ष। धूम्रकेश। विप्रचित्ति। दुर्जय, कहा है ॥

(२) निम्न प्रकारसे शास्त्र १८ माने हैं:—४ वेद, ६ वेदाङ्ग तथा ११ मीमांसा, १२ न्याय, १३ धर्मशास्त्र, १४ पुराण, १५ आयुर्वेद, १६ धनुर्वेद, १७ गान्धर्ववेद तथा १८ अर्थशास्त्र, कहा है ॥

(३) व्यसन १८ प्रकारके होते हैं। यथाः—१ मृगया, २ जुआ खेलना, ३ दिनमें सोना, ४ दूसरेका दोष कहना, ५ स्त्रियोंमें आसक्ति, ६ नशेबाजी, ७ बाजा बजाना, ८ नाचना, ९ गाना, और १० व्यर्थ घूमना— ये दस कामज व्यसन हैं। तथा ११ चुगली करना, १२ दुस्साहस, १३ द्रोह, १४ ईर्ष्या,

७ स्वर्ग । ७ मृत्युलोक । और ७ पाताल मिलके माने हैं* ॥ और शरीरके पीठके मध्य मेरु डण्डकी हाड़की नलीमें २१ मणका (हाड़की चौखुटी गुरियाँ), सोई २१ स्वर्गका स्थान माने हैं ॥

२४ अवतारः—दश मुख्य अवतार । और १ दत्तात्रेय । २ व्यास । ३ कपिल । ४ हयग्रीव । ५ पृथु । ६ जड़भरत । ७ ऋषभदेव । ८ सनकादि । ९ मनु । १० बद्रि । ११ धन्वन्तरि । १२ हंस । १३ नारद । और १४ मोहिनी । ऐसे १०, और १४ मिलायके सब २४ गिने हैं ॥

२४ जैनियोंके तीर्थङ्करः— १ ऋषभदेव । २ अजितनाथ । ३ शम्भवनाथ । ४ अभिनन्दननाथ । ५ सुमतिनाथ । ६ पद्मप्रभुनाथ । ७ पारसनाथ । ८ चन्द्रप्रभुनाथ । ९ पुष्पदन्तनाथ ।

---

१५ असूया (द्वेष), १६ दूसरेकी वस्तु हरण, १७ कटु भाषण, और १८ अत्यन्त ताड़ना देना, ये आठ क्रोधज व्यसन हैं ॥

(४) उपरूपकके १८ भेद होते हैं । यथाः—१ नाटिका, २ त्रोटक, ३ गोष्ठी, ४ सट्टक, ५ नाट्यरासक, ६ प्रस्थानक, ७ उल्लाप्य, ८ काव्य, ९ रासक, १० प्रेंखण, ११ संलापक, १२ श्रीगदित, १३ शिल्पक, १४ विलासिका, १५ दुर्मल्लिका, १६ प्रकरणिका, १७ हल्लीश, और १८ भाणिका, कहा है ॥

(५) अष्टादश स्मृतियाँ मुख्य प्रमाण माने हैं (पृष्ठ १२१ में नाम कहा है) ॥

(१) दश इन्द्रियाँ, पञ्च प्राण, और चार अन्तःकरण मिलायके १९ भाग माना है ॥

(१) दस इन्द्रियाँ, पञ्चप्राण तथा पञ्च विषय मिलाके २० भाग होता है ॥

* (१) एकईस ब्रह्माण्डः—भू, भुवः, स्वः, जनः, महः, तपः, सत्य, ये सात स्वर्ग, एवं–अतल, वितल, तल, सुतल, महातल, रसातल, पाताल, ये

१० शीतलनाथ । ११ श्रेयांसनाथ । १२ पुञ्जनाथ । १३ विमलनाथ । १४ अनन्तनाथ । १५ धर्मनाथ । १६ शान्तिनाथ । १७ कुन्थुनाथ । १८ अरिहन्तनाथ । १९ मल्लजीमुनि । २० सुव्रतनाथ । २१ नीमनाथ । २२ नेमनाथ । २३ पार्श्वनाथ । और २४ महावीर स्वामी, माना है, और टिप्पणीमें कहा है ❊ ॥

२६ अक्षर अंग्रेजीमें, २७ नक्षत्र ब्रह्माण्डमें ×, ३० अक्षर

---

७ पाताल और सात द्वीप— जम्बू, कुश, प्लक्ष, क्रौञ्च, शाक, पुष्कर, शाल्मलय, इसे मिलाके माना है ॥

❊ (१) एक वर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्ष होते हैं ॥

(२) चौबीस तत्त्वः— पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ, पञ्च कर्मेन्द्रियाँ, पञ्च विषय, पृथ्वी आदि मुख्य पञ्च तत्त्व, तथा बुद्धि, अहङ्कार, मन और प्रकृति मिलायके २४ भाग माना है ॥

(३) शरीरके २४ अङ्ग-मेरुदण्डकी २४ कसेरुकाएँ कहा है ॥

(४) वर्षकी २४ एकादशी तिथियाँ माना है । तैसे ही पूर्णिमा, अमावास्याको छोड़के और हरेक तिथियाँ २४ × २४ ही गणना करके माने हैं ॥

(१) निम्न प्रकारसे २५ नरकके भेद माने हैं:—१ पापवास, २ तामिस्र, ३ अन्धतामिस्र, ४ महारौरव, ५ कुम्भीपाक, ६ असिपत्रवन, ७ शूकरमुख, ८ अन्धकूप, ९ कृमि भोजन, १० सन्दंस, ११ तप्तसूर्मि, १२ वज्रकण्टक, १३ शाल्मली, १४ पूयोद, १५ प्राणरोध, १६ लालाभक्ष, १७ सारमेयादन, १८ अवीचिरयपान, १९ क्षारकर्दम, २० रक्षोगण भोजन, २१ शूलप्रोत, २२ दन्तशूक, २३ अवट निरोधन, २४ पर्यावर्तन, २५ सूचीमुख, कहा है ॥

(२) स्थूल देहकी २५ प्रकृतियाँ कहा गया है ॥

(३) सूक्ष्मदेहकी भी २५ प्रकृतियाँ कही गयी हैं ॥

× (१) २७ नक्षत्रोंके नामः—१ अश्विनी । २ भरणी । ३ कृत्तिका । ४ रोहिणी । ५ मृगशिरा । ६ आर्द्रा । ७ पुनर्वसु । ८ पुष्य । ९ अश्लेषा ।

१० मघा । ११ पूर्वाफाल्गुनी । १२ उत्तराफाल्गुनी । १३ हस्ता । १४ चित्रा । १५ स्वाती । १६ विशाखा । १७ अनुराधा । १८ ज्येष्ठा । १९ मूल । २० पूर्वाषाढ़ा । २१ उत्तराषाढ़ा । २२ श्रवण । २३ धनिष्ठा । २४ शतभिषा । २५ पूर्वाभाद्रपदा । २६ उत्तराभाद्रपदा । २७ रेवती । (नोटः—ज्यौतिषके अनुसार 'अभिजित्' नामक एक और नक्षत्र उत्तराषाढ़ाके बाद माना जाता है । इस प्रकार कुल २८ नक्षत्र होते हैं) ॥

(२) २८ नक्षत्राधिपति कथनः—१ दस्र (अश्विनीकुमार), २ यम, ३ अग्नि, ४ ब्रह्मा, ५ चन्द्र, ६ शिव, ७ अदिति, ८ गुरु, ९ सर्प, १० पितर, ११ भग, १२ अर्यमा, १३ सूर्य, १४ विश्वकर्मा, १५ वायु, १६ इन्द्र और अग्नि, १७ मित्र, १८ इन्द्र, १९ राक्षस (निर्ऋति), २० जल, २१ विश्वेदेव, २२ ब्रह्मा, २३ विष्णु, २४ वसु, २५ वरुण, २६ अजैकपाद, २७ अहिर्बुध्न्य, और २८ पूषा— ये क्रमशः (अभिजित् सहित) अश्विनी आदि २८ नक्षत्रोंके स्वामी कहे गये हैं ॥

(३) विष्णु पुराण अंश २ में २८ प्रकारसे नरकोंका वर्णन किया है । उनका नामः—रौरव, सूकर, रोध, ताल, विशसन, महाज्वाल, तप्त कुम्भ, लवण, विलोहित, रुधिराम्भ, वैतरणि, कृमीश, कृमिभोजन, असिपत्रवन, कृष्ण, लालाभक्ष, दारुण, पूयवह, पाप, वह्निज्वाल, अधःशिरा, सन्दंश, कालसूत्र, तमस, अवीचि, श्वभोजन, अप्रतिष्ठ और अप्रची, कहा है ॥

(४) उपपुराण २८ कहा गया है । यथाः—१ सनत्कुमार, २ नरसिंह, ३ बृहन्नारदीय, ४ शिव धर्मोत्तर, ५ दुर्वासस, ६ कापिल, ७ मानव, ८ उसनस, ९ वारुण, १० आदित्य, ११ कालिका, १२ साम्ब, १३ नन्दिकेस्वर, १४ सौर, १५ पाराशर, १६ माहेश्वर, १७ वाशिष्ठ, १८ भार्गव, १९ आदि, २० मुद्गल, २१ कल्की, २२ देवी, २३ महाभागवत, २४ बृहद्धर्मोत्तर, २५ परानन्द, २६ पशुपति, २७ हरिवंश और २८ वायुपुराण । (ब्रह्माण्ड, भागवत तथा कौर्म और भी माने हैं) ॥

(१) बत्तीस विद्याएँः—४ वेद, ४ उपवेद, ६ वेदाङ्ग, ६ शास्त्र-दर्शन, २१ इतिहास, २२ पुराण, २३ स्मृति, २४ नास्तिकमत, २५ अर्थशास्त्र,

सिफारे मुसलमनोंमें, और ३४ अक्षर तथा ५२ वर्ण हिन्दुओंमें माने हैं *। उसीमें सन्धि, मात्राएँ लगायके सर्व वाणी बनी है ॥
३६ रागिनियाँ सङ्गीतमें माने हैं ‡ ॥

२६ कामशास्त्र, २७ शिल्पशास्त्र, २८ काव्य, २९ देशभाषा, ३० अवसरोक्ति, ३१ यवनमत और ३२ देशादि-धर्म माने हैं ॥

(२) अस्त्र-शस्त्रोंके ३२ नामः—१ आग्नेय, २ पर्जन्य, ३ वायव्य, ४ पन्नग, ५ गरुड़, ६ ब्रह्मास्त्र, ७ पाशुपत, ८ वैष्णव (नारायणास्त्र), ९ शक्ति, १० तोमर, ११ पाश, १२ ऋष्टि, १३ गदा, १४ मुद्गर, १५ चक्र १६ वज्र, १७ त्रिशूल, १८ शूल, १९ असि, २० खड्ग, २१ चन्द्रहास, २२ फरसा, २३ मुशल, २४ धनुष, २५ बाण, २६ परिघ, २७ भिन्दिपाल, २८ नाराच, २९ परशु, ३० कुन्ता, ३१ शंकु बर्छी, ३२ पट्टिश, कहा है ॥

* (१) चौंतीस अक्षर वा ५२ वर्णः—हिन्दी वर्णमालाके सम्पूर्ण अक्षर—क वर्ग ५, च वर्ग ५, ट वर्ग ५, त वर्ग ५, प वर्ग ५, पाँचों वर्गोंके २५ अक्षर और य से ह तकके ८ अक्षर तथा ॐ मिलाके ३४ हुआ; त्र, ज्ञ, और अ से अः तक १६ स्वर सहित १८ अक्षर जोड़के सब ५२ अक्षर होते हैं ॥

‡ (१) संगीतमें छः रागोंकी छत्तीस रागिनियाँ इस प्रकार कहा है:—

१. श्रीरागः—१ मालश्री, २ त्रिवेणी, ३ गौरी, ४ केदारी, ५ मधुमाधवी, ६ पहाड़ी है ॥
२. वसन्त रागः— ७ देशी, ८ देवगिरि, ९ वैराटी, १० टौरिका, ११ ललित, १२ हिंडोल है ॥
३. पञ्चमरागः—१३ विभास, १४ भूपाली, १५ कर्णाटी, १६ पटहंसिका, १७ मालवी, १८ पटमञ्जरी है ॥
४. भैरवरागः— १९ भैरवी, २० बङ्गाली, २१ सैंधवी, २२ रामकेली, २३ गुर्ज्जरी, २४ गुणकरी है ॥
५. मेघरागः—२५ मल्लारी, २६ सैरिटी, २७ सावेरी, २८ कैसिकी, २९ गान्धारी, ३० हरशृङ्गार है ॥

३६ देहके नाता जगत्में माने हुए हैं * ॥

४० तत्त्वका स्थूलदेह, सोई मनका रूप है । २५ प्रकृतियाँ पञ्च तत्त्वोंकी, पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ सत्त्वगुणकी, पञ्चकर्मेन्द्रियाँ रजोगुणकी, और पञ्च विषय तमोगुणकी, ऐसे चालीस भाग मिलायके मानी है । इसीमें सर्व कल्पना पिण्ड-ब्रह्माण्डकी उत्पन्न हुई हैं । वही माननारूप 'सूक्ष्म मन' है । तथा उनञ्चास पवन अलग ही गिने हैं उनका नाम टिप्पणीमें देखिये × ॥

---

६. नट नारायणः—३१ कामोदी, ३२ कल्याणी, ३३ आभीरी, ३४ नाटिका, ३५ सारङ्गी, और ३६ हम्मीरी, कहा है ॥

* (१) निकट सम्बन्धियोंके प्रचलित मुख्य-मुख्य ३६ नाताएँ:—

१ पिता, २ माता, ३ काका, ४ काकी, ५ बाबा, ६ दादी, ७ भाई, ८ बहिन, ९ मामा, १० मामी, ११ मौसी, १२ मौसा, १३ पत्नी, १४ पुत्र, १५ पुत्री, १६ दामाद, १७ सास, १८ श्वसुर, १९ समधी, २० समधिनि, २१ नाती, २२ नातिनी, २३ पोता, २४ पोती, २५ भानजा, २६ भानजी, २७ शाला, २८ शाली, २९ भतीज, ३० भतीजी, ३१ पतोहू (बहू), ३२ भौजाई, ३३ बहनोई, ३४ फुफु (फुआ), ३५ फुफा, ३६ नाना (आजा) ॥ इनके अन्तर्गत और बाहर अन्य सैकड़ों नाताओंके विस्तार करके संसारी लोगोंने मान रखे हैं ॥

(२) तैसे ही चार वर्णमें ३६ जात अलग-अलग ही माने हुए हैं ॥

× (१) ४९ वायुओंके नामः—१ श्वसन । २ स्पर्शन । ३ मातरिश्वा । ४ सदागति । ५ पृष्टदश्व । ६ गन्धवह । ७ अनिल । ८ आशुग । ९ समीर । १० मारूत । ११ मरुत । १२ जगत्प्राण । १३ समीरण । १४ नभस्वान् । १५ वात । १६ पवन । १७ पवमान । १८ प्रभञ्जन । १९ जगत्प्राण । २० खश्वास । २१ वाह । २२ धूलिध्वज । २३ फलिप्रिय । २४ वाति । २५ नभप्राण । २६ भोगिकान्त । २७ स्वकम्पन । २८ अक्षति । २९ कम्पलक्ष्मा ।

३० शसीनि। ३१ आवक। ३२ हरि। ३३ वास। ३४ सुखाश। ३५ मृगवाहन। ३६ सार। ३७ चञ्चल। ३८ विहग। ३९ प्रकम्पन। ४० नभस्वर। ४१ निश्वासक। ४२ स्तनून। ४३ पृषताम्पति। ४४ प्राण। ४५ अपान। ४६ समान। ४७ व्यान। ४८ उदान। ४९ सूक। सरिमन। सरण्य। हवा। सर्वंग। सरट। खग। बयार। बतास। झञ्झा। (सवृष्टिक वायु) ॥

[नोट— ये ही "उनचास पवन" के नामसे भी प्रसिद्ध हैं। कहते हैं कि, ये अदितिके पुत्र हैं। इनके कोई सन्तान नहीं हुई। इन्द्रने इन्हें देव-पद दिया है]॥

(२) मन्त्रके ४९ दोष बताये गये हैं:—१ छिन्न, २ रुद्ध, ३ शक्तिहीन, ४ पराङ्मुख, ५ कर्णहीन, ६ नेत्रहीन, ७ कीलित, ८ स्तम्भित, ९ दग्ध, १० त्रस्त, ११ भीत, १२ मलिन, १३ तिरस्कृत, १४ भेदित, १५ सुषुप्त, १६ मदोन्मत्त, १७ मूर्छित, १८ हतवीर्य, १९ भ्रान्त, २० प्रध्वस्त, २१ बालक, २२ कुमार, २३ युवा, २४ प्रौढ़, २५ वृद्ध, २६ निस्त्रिंशक, २७ निर्बीज, २८ सिद्धिहीन, २९ मन्द, ३० कूट, ३१ निरंशक, ३२ सत्त्वहीन, ३३ केकर, ३४ बीजहीन, ३५ धूमित, ३६ आलिङ्गित, ३७ मोहित, ३८ क्षुधार्त्त, ३९ अतिदीप्त, ४० अङ्गहीन, ४१ अतिक्रुद्ध, ४२ अतिक्रूर, ४३ व्रीडित (लज्जित), ४४ प्रशान्तमानस, ४५ स्थान भ्रष्ट, ४६ विकल, ४७ अतिवृद्ध, ४८ अतिनिःस्नेह, तथा ४९ पीड़ित । (इसका विस्तार नारदपुराण पूर्वार्द्ध तृतीय अंशमें कहा है) ॥

(१) प्राचीन ५० क्रीड़ाओंके नामः—१ कृत्रिम वृषभक्रीड़ा। २ निलयनक्रीड़ा। ३ मर्कटोत्प्लवन। ४ शिक्यादि-मोषण। ५ अहमहमिका-स्पर्श। ६ भ्रामण। ७ गर्तादिलङ्घन। ८ बिल्वादिप्रक्षेपण। ९ अस्पृश्यत्व। १० नेत्रबन्ध। ११ स्पन्दान्दोलिका। १२ नृपक्रीड़ा। १३ हरिणाक्रीडनक। १४ देव--दैत्यक्रीड़ा। १५ जलक्रीड़ा। १६ कन्दुकक्रीड़ा। १७ वनभोजनक्रीड़ा। १८ वाह्य-वाहक। १९ रासक्रीड़ा। २० छालिक्य। २१ नियुद्धक्रीड़ा। २२ नृत्यक्रीड़ा। २३ अक्ष-क्रीड़ा। २४ मृगयाक्रीड़ा। २५ पक्षिघात। २६ मत्स्यक्रीड़ा। २७ चतुरङ्गक्रीड़ा। २८ शालभञ्जिका। २९ लतोद्वाह। ३० वीटाक्रीड़ा। ३१ कनकशृङ्गकोश। ३२ विग्राहक्रीड़ा। ३३ हल्लीशक्रीड़ा। ३४ गानकूर्दन। ३५ नौक्रीड़ा। ३६ जल-क्रीड़ा। ३७ वनविहार। ३८ आमलकमुष्टयादि। ३९ दर्दुरालाव। ४० नाट्य-

फिर ६१ रागिनियोंके विस्तार किये हैं* ॥
और ६४ कलाएँ अलग ही गिने हैं † ॥

क्रीड़ा। ४१ अलातचक्र। ४२ गदाक्रीड़ा। ४३ अशोकपादप्रहार। ४४ चित्र-क्रीड़ा। ४५ काव्यविनोद। ४६ वाजीवाह्य। ४७ करिवाह्य। ४८ मृगवाह्य। ४९ गोपक्रीड़ा। और ५० घटक्रीड़ा, कहा है ॥

* (१) और दूसरे जगह रागिनियोंके ६१ नाम इस प्रकार कहा है। यथाः— १ धनाश्री। २ जैतश्री। ३ मालश्री। ४ श्री। ५ गुजरी। ६ विरावरी। ७ आशावरी। ८ जैतसारी। ९ गन्धारी। १० वरारी। ११ सिन्धूरी। १२ पञ्चश्री। १३ गौरी। १४ जौनपुरी। १५ विहागरा। १६ कान्हरा। १७ केदारा। १८ मारू। १९ मलार। २० धूरियामलार। २१ गोड़मलार। २२ गड़-मलार। २३ भूपाली। २४ सुरकली। २५ श्रीमाल। २६ धूरकली। २७ रासकली। २८ रूपकली। २९ गुनकली। ३० सुहेली। ३१ मोरवी। ३२ पूर्वी। ३३ कैरवी। ३४ भैरवी। ३५ कान्हारी। ३६ तिल्लाना। ३७ कल्याण। ३८ यमन। ३९ कल्याणी। ४० सजीवनी। ४१ सेधू। ४२ मधुगन्ध। ४३ सावन्त। ४४ ललित। ४५ सोरठ। ४६ मरहठी। ४७ टोड़ी। ४८ नट। ४९ गोड़। ५० विभास। ५१ सुदेश। ५२ सूहा। ५३ परज। ५४ काफी। ५५ चन्द। ५६ सुघराय। ५७ जैजैवन्ती, चरनायका। ५८ सारङ्ग। ५९ बङ्गला। ६० नायका। और ६१ खम्माच, कहा है ॥

† (१) 'शिवतत्त्व रत्नाकर' में मुख्य-मुख्य ६४ कलाओंका नाम निर्देश इस प्रकार किया हैः— १ इतिहास। २ आगम। ३ काव्य। ४ अलङ्कार। ५ नाटक। ६ गायकत्व। ७ कवित्त्व। ८ कामशास्त्र। ९ दुरोदर (द्युत)। १० देशभाषा-लिपिज्ञान। ११ लिपिकर्म। १२ वाचन। १३ गणक। १४ व्यव-हार। १५ स्वरशास्त्र। १६ शाकुन। १७ सामुद्रिक। १८ रत्नशास्त्र। १९ गज अश्व-रथ कौशल। २० मल्लशास्त्र। २१ सूपकर्म (रसोई पकाना)। २२ भूरुह-दोहद (बागवानी)। २३ गन्धवाद। २४ धातुवाद। २५ रससम्बन्धीखनिवाद।

२६ बिलवाद । २७ अग्निसंस्तम्भ । २८ जलसंस्तम्भ । २९ वाचःस्तम्भन । ३० वयःस्तम्भन । ३१ वशीकरण । ३२ आकर्षण । ३३ मोहन । ३४ विद्वेषण । ३५ उच्चाटन । ३६ मारण । ३७ कालवञ्चन । ३८ त्तिप्रग्रहण । ३९ परकाय-प्रवेश । ४० पादुकासिद्धि । ४१ वाक्सिद्धि । ४२ गुटिकासिद्धि । ४३ ऐन्द्रजालिक । ४४ अञ्जन । ४५ परदृष्टिवञ्चन । ४६ स्वरवञ्चन । ४७ मणि-मन्त्र-औषधादि-की सिद्धि । ४८ चोरकर्म । ४९ चित्रक्रिया । ५० लोहक्रिया । ५१ अश्मक्रिया । ५२ मृत्क्रिया । ५३ दारुक्रिया । ५४ वेणुक्रिया । ५५ चर्मक्रिया । ५६ अम्बर-क्रिया । ५७ अदृश्यकरण । ५८ दन्तिकरण । ५९ मृगयाविधि । ६० वाणिज्य । ६१ पाशुपाल्य । ६२ कृषि । ६३ आसवकर्म और ६४ लाव-कुक्कुट-मेषादि युद्ध-कारक कौशल, कहा है ॥

(२) और जयमङ्गलके मतानुसार ६४ कलाएँ ये हैं:— १ गीत । २ वाद्य । ३ नृत्य । ४ आलेख्य । ५ विशेषकच्छेद्य (मस्तकपर तिलक लगानेके लिये कागज, पत्ती आदि काटकर आकार या साँचे बनाना) । ६ तण्डुल-कुसुमबलि-विकार (देव पूजनादिके अवसर पर तरह-तरहके रँगे हुये चावल, जौ आदि वस्तुओं तथा रङ्ग-विरङ्गे फूलोंको विविध प्रकारसे सजाना) । ७ पुष्पास्तरण । ८ दशन-वसनाङ्गराग (दाँत, वस्त्र तथा शरीरके अवयवोंको रँगना) । ९ मणिभूमिका-कर्म (घरके फर्शके कुछ भागोंको मोती, मणि आदि रत्नोंसे जड़ना) । १० शयन-रचन (पलङ्ग लगाना) । ११ उदकवाद्य (जलतरङ्ग) । १२ उदकाघात (दूसरोंपर हाथों या पिचकारीसे जलकी चोट मारना) । १३ चित्राश्चयोगाः (जड़ी-बूटियोंके योगसे विविध वस्तुएँ ऐसी तैयार करना या ऐसी औषधें तैयार करना अथवा ऐसे मन्त्रोंका प्रयोग करना, जिनसे शत्रु निर्बल हो या उसकी हानि हो) । १४ माल्यग्रथनविकल्प (माला गूँथना) । १५ शेखरकापीड़योजन (स्त्रियोंकी चोटीपर पहननेके विविध अलङ्कारोंके रूपमें पुष्पोंको गूँथना) । १६ नेपथ्य प्रयोग (शरीरको वस्त्र, आभूषण, पुष्प आदिसे सुसज्जित करना) । १७ कर्णपत्रभङ्ग (शङ्ख, हाथीदाँत आदिके अनेक तरहके कानके आभूषण बनाना) । १८ गन्धयुक्ति (सुगन्धित धूप बनाना) । १९ भूषणयोजन । २० ऐन्द्रजाल (जादूके खेल) । २१ कौचुमारयोग (बल-वीर्य बढ़ानेवाली

औषधियाँ बनाना) । २२ हस्तलाघव (हाथोंकी काम करनेमें फुर्ती और सफाई) । २३ विचित्र शाकयूष भक्ष्यविकार-क्रिया (तरह-तरहके शाक, कढ़ी, रस, मिठाई आदि बनानेकी क्रिया) । २४ पानकरस-रागासव-योजन (विविध प्रकारके शर्बत, आसव आदि बनाना) । २५ सूचीवान कर्म (सुईका काम, जैसे सीना, रफू करना, कसीदा काढ़ना, मोजे-गंजी बुनना) । २६ सूत्रक्रीड़ा (तागे या डोरियोंसे खेलना, जैसे कठपुतलीका खेल) । २७ वीणाडमरूकवाद्य । २८ प्रहेलिका (पहेलियाँ बूझना) । २९ प्रतिमाला (श्लोक आदि कविता पढ़नेकी मनोरञ्जक रीति) । ३० दुर्वाचकयोग (ऐसे श्लोक आदि पढ़ना, जिनका अर्थ और उच्चारण दोनों कठिन हों) । ३१ पुस्तक-वाचन । ३२ नाटकाख्यायिका-दर्शन । ३३ काव्य-समस्यापूरण । ३४ पट्टिकावेत्रवानविकल्प (पीढ़ा, आसन, कुर्सी, पलङ्ग, मोढ़े आदि चीजें बेंत वगैरे वस्तुओंसे बनाना) । ३५ तक्षकर्म (लकड़ी, धातु आदि-को अभीष्ट विभिन्न आकारोंमें काटना) । ३६ तक्षण (बढ़ईका काम) । ३७ वास्तुविद्या । ३८ रूप्यरत्नपरीक्षा (सिक्के, रत्न आदिकी परीक्षा करना) । ३९ धातुवाद (पीतल आदि धातुओंको मिलाना, शुद्ध करना आदि) । ४० मणिरागाकर-ज्ञान (मणि आदिका रँगना, खान आदिके विषयका ज्ञान) । ४१ वृक्षायुर्वेदयोग । ४२ मेषकुक्कुटलावकयुद्धविधि (मेढ़ें, मुर्गे, तीतर आदिको लड़ाना) । ४३ शुकसारिकाप्रलापन (तोता-मैना आदिको बोली सिखाना)। ४४ उत्सादनसंवाहन, केशमर्दन कौशल (हाथ-पैरोंसे शरीर दबाना, केशोंका मलना, उनका मैल दूर करना आदि) । ४५ अक्षरमुष्टिका-कथन (अक्षरोंको ऐसी युक्तिसे कहना कि, उस संकेतका जाननेवाला ही उनका अर्थ समझे, दूसरा नहीं; मुष्टिसंकेत द्वारा बातचीत करना, जैसे दलाल आदि कर लेते हैं) । ४६ म्लेच्छित विकल्प (ऐसे संकेतसे लिखना, जिसे उस संकेतको जाननेवाला ही समझे) । ४७ देशभाषा-विज्ञान । ४८ पुष्पशकटिका । ४९ निमित्तज्ञान (शकुन जानना) । ५० यन्त्रमातृका (विविध प्रकारके मशीन, कल, पुर्जे आदि बनाना) । ५१ धारणमातृका (सुनी हुई बातोंका स्मरण रखना) । ५२ संपाठ्य । ५३ मानसी-काव्य-क्रिया (किसी श्लोकमें छोड़े हुए पदको मनसे पूरा करना) ५४ अभिधान-कोष । ५५ छन्दोज्ञान । ५६ क्रियाकल्प (काव्यालङ्कारोंका ज्ञान) ५७ छलितक

तथा ६४ योगिनियाँ पृथक् ही माने हुए हैं ❋ ॥
बहत्तर कोठे देहमें माने हैं। जहाँ बहत्तर हजार नाड़ियों-

योग (रूप और बोली छिपाना) ५८ वस्त्रगोपन (शरीरके अङ्गोंको छोटे या बड़े वस्त्रोंसे यथायोग्य ढँकना)। ५९ द्यूतविशेष। ६० आकर्ष-क्रीड़ा (पासोंसे खेलना)। ६१ बालक्रीड़नक। ६२ वैनयिकी-ज्ञान (अपने और परायेसे विनय-पूर्वक शिष्टाचार करना)। ६३ वैजयिकी-ज्ञान (विजय प्राप्त करनेकी विद्या अर्थात् शस्त्रविद्या)। और ६४ व्यायामविद्या। इनका विशेष विवरण जयमङ्गलने कामसूत्रकी व्याख्यामें किया है, सो जानिये ! ॥

❋(३) ६४ योगिनियोंके नाम निम्न प्रकारसे कहा है:— १ नारायणी। २ गौरी। ३ शाकम्भरी। ४ भीमा। ५ रक्तदन्तिका। ६ पार्वती। ७ दुर्गा। ८ कात्यायनी। ९ महादेवी। १० चन्द्रघण्टा। ११ महाविद्या। १२ महातपा। १३ भ्रामरी। १४ सावित्री। १५ ब्रह्मवादिनी। १६ भद्रकाली। १७ विशालाक्षी। १८ रुद्राणी। १९ कृष्णपिङ्गला। २० अग्निज्वाला। २१ रौद्रमुखी। २२ कालरात्रि। २३ तपस्विनी। २४ मेघस्वना। २५ सहस्राक्षी। २६ विष्णुमाया। २७ जलोदरी। २८ महोदरी। २९ मुक्तकेशी। ३० घोररूपा। ३१ महाबला। ३२ श्रुति। ३३ स्मृति। ३४ धृति। ३५ तुष्टि। ३६ पुष्टि। ३७ मेधा। ३८ विद्या। ३९ लक्ष्मी। ४० सरस्वती। ४१ अपर्णा। ४२ अम्बिका। ४३ योगिनी। ४४ डाकिनी। ४५ शाकिनी। ४६ हारिणी। ४७ हाकिनी। ४८ लाकिनी। ४९ त्रिदशेश्वरी। ५० महाषष्ठी। ५१ सर्वमङ्गला। ५२ लज्जा। ५३ कौशिकी। ५४ ब्रह्माणी। ५५ ऐन्द्री। ५६ नारसिंही। ५७ वाराही। ५८ चामुण्डा। ५९ शिवदूती। ६० महामाया। ६१ मातृका। ६२ कार्तिकी। ६३ विनायकी और ६४ कामाक्षी, कहा है ॥

(१) कल्याण योगाङ्कमें— ६६ पेटके आसनोंका वर्णन किया है। उनका नाम निम्नप्रकारसे हैं:—१ सोड्डीयान पद्मासन। २ बद्धपद्मासन। ३ बद्धासन। ४ वक्रबद्धासन। ५ अर्धगर्भासन। ६ गर्भासन। ७ एकपादकन्धरासन। ८ लोलासन। ९ भूनमनपद्मासन। १० कर्णस्पृष्टजानुपद्मासन। ११ पार्श्वभूनमनासन।

की गाँठ बँधी, सोई ७२ कोठे माने हैं × । बाहिर ब्रह्माण्डमें नाड़ियाँवत् सर्व बड़ी-छोटी नदियाँ ठहराये हैं ॥

१२ एकपादपश्चिमतानासन । १३ ऊर्ध्वहस्तपश्चिमतानासन । १४ विस्तृतपाद-भूनमनासन । १५ विस्तृतपादपार्श्वभूनमनासन । १६ विस्तृतपादहस्तपार्श्व-चालनासन । १७ पृष्ठासन । १८ उत्थितपृष्ठासन । १९ मत्स्यासन । २० द्विपाद-चक्रासन । २१ उत्थितद्विपादासन । २२ उत्थितएकैकपादासन । २३ उत्थितहस्त-मेरुदण्डासन । २४ शीर्षबद्धहस्तमेरुदण्डासन । २५ जानुस्पृष्टभालमेरुदण्डासन । २६ उत्थितहस्तपादमेरुदण्डासन । २७ उत्थितपादमेरुदण्डासन । २८ भालस्पृष्ट-द्विजानुमेरुदण्डासन । २९ पादपार्श्वचालनासन । ३० भूस्पृष्टपादसर्वाङ्गासन । ३१ विपरीतदण्डासन । ३२ उत्थितसमकोणासन । ३३ उत्थितैकपादभुजङ्गासन। ३४ भुजङ्गासन । ३५ सरलहस्तभुजङ्गासन । ३६ नौकासन । ३७ दोलासन। ३८ शलभासन । ३९ पार्श्वासन । ४० नासिकास्पृष्टजानुपार्श्वासन । ४१ धनु-रासन । ४२ पार्श्वचलितधनुरासन । ४३ आकर्णधनुरासन । ४४ चतुष्पादा-सन । ४५ मयूरासन । ४६ शीर्षबद्धहस्तहलासन । ४७ शीर्षस्पृष्टपद्महलासन । ४८ प्रसृतहस्तवृश्चिकासन । ४९ वलितपादसर्वाङ्गासन । ५० विवृत्तत्रिकासन । ५१ प्रसृतहस्तविवृत्तत्रिकासन । ५२ शीर्षबद्धहस्तविवृत्तत्रिकासन । ५३ ऊर्ध्वहस्त-जानुभालासन । ५४ भूस्पृष्टहस्तजानुभालासन । ५५ पृष्टबद्धहस्तजानुभालासन । ५६ ऊर्ध्वस्थितपृष्ठवक्रासन । ५७ शुण्डासन । ५८ अर्धचक्रासन । ५९ चक्रा-सन । ६० भूस्पृष्टहस्तवृक्षासन । ६१ पृष्ठवलितवृक्षासन । ६२ पार्श्ववलित वृक्षासन । ६३ पार्श्वपृष्ठवलितवृक्षासन । ६४ मध्यमनौलि । ६५ दक्षिणनौलि । ६६ वामनौलि, ऐसा वर्णन करके कहा है ॥

× (१) शरीरकी बहत्तर ग्रन्थियाँ, जो इस प्रकार माने हैं:—१६ कण्डरायें, १६ जाल, ४ रज्जु, ७ सेवनी, १४ अस्थि सङ्घात, १४ सीमन्त और १ त्वचा, ये सब मिलाके ७२ होते हैं, जिससे सम्पूर्ण शरीर बँधा रहता है । उन्हीं मुख्य ७२ नाड़ियोंकी शाखाएँ छोटी-बड़ी सारे शरीरमें बहत्तर हजार माने हैं ॥

चौरासी स्त्रीसम्भोगके आसन*, और चौरासी योगके आसन× गिने हैं । योगके आसनोंमें १ सिद्धासन, २ भद्रासन, ३ पद्मासन और ४ सहजासन, ये चार सर्व आसनोंमें श्रेष्ठ ठहराये हैं ॥

* (१) चारखानीकी राशीरूप अनेक योनियोंमें जिस-जिस प्रकारसे मैथुन भोग-सम्बन्ध होता है, उसीकी नकल भोगी विषयी लोगोंने मुख्यतया ८४ प्रकारसे निकाले हैं । जिसका वर्णन कोकशास्त्र आदिमें किया है ॥

× (२) योगके ८४ आसनोंके नामः—

और आसनोंके फल वर्णनमें चौरासी आसनोंका नाम सम्पूर्ण निम्नप्रकारसे दिया हैः— १ सिद्धासन । २ प्रसिद्ध सिद्धासन । ३ पद्मासन । ४ बद्ध पद्मासन । ५ उत्थितपद्मासन । ६ ऊर्ध्वपद्मासन । ७ सुप्तपद्मासन । ८ भद्रासन । ९ स्वस्तिकासन । १० योगासन । ११ प्राणासन या प्राणायामासन । १२ मुक्तासन । १३ पवनमुक्तासन । १४ सूर्यासन । १५ सूर्यभेदनासन । १६ भस्त्रिकासन । १७ सावित्रीसमाधिआसन । १८ अचिन्तनीयासन । १९ ब्रह्मज्वरांकुशासन । २० उद्धारकासन । २१ मृत्युभञ्जकासन । २२ आत्मारामासन । २३ भैरवासन । २४ गरुड़ासन । २५ गोमुखासन । २६ वातायनासन । २७ सिद्धमुक्तावली आसन । २८ नेतिआसन । २९ पूर्वासन । ३० पश्चिमोत्तानासन । ३१ महामुद्रासन । ३२ वज्रासन । ३३ चक्रासन । ३४ गर्भासन । ३५ शीर्षासन । ३६ हस्ताधारशीर्षासन । ३७ ऊर्ध्वसर्वाङ्गासन । ३८ हस्तपादांगुष्ठासन । ३९ पादांगुष्ठासन । ४० उत्तानपादासन । ४१ जानुलग्नहस्तासन । ४२ एकपादशिरासन । ४३ द्विपादशिरासन । ४४ एकहस्तासन । ४५ पादहस्तासन । ४६ कर्णपीडमूलासन । ४७ कोणासन । ४८ त्रिकोणासन । ४९ चतुष्कोणासन । ५० कन्दपीडनासन । ५१ तुलितासन । ५२ लोल वा ताड या वृक्षासन । ५३ धनुषासन । ५४ वियोगासन । ५५ विलोमासन । ५६ योन्यासन । ५७ गुप्ताङ्गासन । ५८ उत्कटासन । ५९ शोकासन । ६० सङ्क-

चौरासी सिद्ध हुए हैं ‡, ऐसा माने हैं । उनका नाम टिप्पणीमें देखिये:—

टासन । ६१ अन्धासन । ६२ रुण्डासन । ६३ शवासन । ६४ वृषासन । ६५ गोपुच्छासन । ६६ उष्ट्रासन । ६७ मर्कटासन । ६८ मत्स्यासन । ६९ मत्स्येन्द्रासन । ७० मकरासन । ७१ कच्छपासन । ७२ मण्डूकासन । ७३ उत्तानमण्डूकासन । ७४ हंसासन । ७५ वकासन । ७६ मयूरासन । ७७ कुक्कुटासन । ७८ फोघ्रासन । ७९ शलभासन । ८० वृश्चिकासन । ८१ सर्पासन । ८२ हलासन । ८३ वीरासन । और ८४ शान्तिप्रियासन, ऐसा कहा है ॥

इस प्रकारसे आसनोंकी गिनती ८४ तक किये हैं । महादेवने योग साधनोंके लिये इन आसनोंको निकाले, चौरासी लाख योनि निवृत्तिके निमित्त ८४ आसनोंके साधना बताये, ऐसे माने हैं ॥

‡ (३) नाथ सम्प्रदायके चौरासी सिद्ध प्रख्यात हुए, ऐसा माने हैं । जिनके नाम इस प्रकार कहा है:—१ लूहिपा । २ लीलापा । ३ विरुपा । ४ डोम्भिपा । ५ शबरीपा । ६ सरहपा । ७ कङ्कालीपा । ८ मीनपा । ९ गोरक्षपा । १० चोरङ्गिपा । ११ वीणापा । १२ शान्तिपा । १३ तन्तिपा । १४ चमरिपा । १५ खड्गपा । १६ नागार्जुन । १७ कराहपा । १८ कर्णरिपा । १९ थगनपा । २० तारोपा । २१ शालिपा । २२ तिलोपा । २३ छत्रपा । २४ भद्रपा । २५ दोखन्धिपा । २६ अजोगिपा । २७ कालपा । २८ धोम्भिपा । २९ कङ्कणपा । ३० कमरिपा । ३१ डेंगिपा । ३२ भदेपा । ३३ तन्धेपा । ३४ कुकुरिपा । ३५ कुसूलिपा । ३६ धर्मपा । ३७ महीपा । ३८ अचिन्तिपा । ३९ भलहपा । ४० नलिनपा । ४१ भूसुकुपा । ४२ इन्द्रभूति । ४३ मेकोपा । ४४ कुठालिपा । ४५ कमरिपा । ४६ जालन्धरपा । ४७ राहुलपा । ४८ घर्वरिपा । ४९ धोकरिपा । ५० मेदिनीपा । ५१ पङ्कजपा । ५२ घण्टापा । ५३ जोगीपा । ५४ चेलुकपा । ५५ गुण्डरिपा । ५६ लुचिकपा । ५७ निर्गुणपा । ५८ जयानन्तपा । ५९ चर्षटिपा । ६० चम्पकपा । ६१ भिखनपा । ६२ भलिपा । ६३ कुमरिपा । ६४ जवरिपा । ६५ मणिभद्रा । ६६ मेखला । ६७ कनखला । ६८ कलकलपा । ६९ कन्त-

लिपा । ७० घहुलिपा । ७१ उधलिपा । ७२ कपालपा । ७३ किलपा । ७४ सागरपा । ७५ सर्वभक्षपा । ७६ नागबोधिपा । ७७ दारिकपा । ७८ पुतुलिका । ७९ पनहपा । ८० कोकलिपा । ८१ अनङ्गपा । ८२ लक्ष्मीकरा । ८३ समुदपा । और ८४ भलिपा, कहा है ॥

(४) पुराणोंमें दक्षकी पुत्री ८४ माना हैः—

पुराणोंमें दक्ष प्रजापतिकी ६० कन्याएँ असिक्नी पत्निसे हुईं ,ऐसा बताया गया है । यथा:—अरुन्धती, वसु, यामि, लम्बा, भानु, मरुत्वती, सङ्कल्पा, मुहूर्ता, साध्या, और विश्वा— ये दस धर्मको ब्याह दीं । अदिति, दिति, दनु, अरिष्ठा, सुरसा, खसा, सुरभि, विनता, ताम्रा, क्रोधवशा, इरा, कद्रु और मुनि— ये १३ कश्यपजी-की स्त्रियाँ हुईं । सत्ताईस कन्याएँ चन्द्रमा (सोमसे ब्याही गईं, जो २७ नक्षत्र योगिनी नामसे विख्यात हैं । और चार अरिष्टनेमिको ब्याह दीं तथा दो बहुपुत्रक दो अङ्गिरा और दो कृशाश्वको विवाहीं ॥

और दक्षने प्रसूतिसे चौबीस कन्याएँ उत्पन्न कीं । उनके नामः— श्रद्धा, लक्ष्मी (चल सम्पत्ति), धृति, तुष्टि, मेधा, पुष्टि, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, शान्ति, सिद्धि और १३ कीर्ति—इन दक्ष-कन्याओंको धर्मने पत्नीरूपसे ग्रहण किया । इनसे छोटी शेष ११ कन्याएँ—ख्याति, सती, सम्भूति, स्मृति, प्रीति, क्षमा, सन्तति, अनसूया, ऊर्ज्जा, स्वाहा और स्वधा थीं, वे क्रमशः भृगु, शिव, मरीचि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, अत्रि, वशिष्ठ, अग्नि और पितरोंके साथ ब्याही गईं । सब मिलाके ८४ पुत्री दक्षकी हुईं, ऐसा कहा है ॥

* साखीः — दश संन्यासी बारह योगी । चौदह शेष बखान ॥
ब्राह्मण अठारह अठारह जङ्गम । चौबीस सेवडा परवान ॥ पं० ग्र०॥

\+ दोहाः— गिरी पर्वत सागर पुरी । भारती वन औ तीर्थ ॥
आरण्यक आश्रम सरस्वती । दश संन्यासी प्रकीर्थ ॥

योगी माने हैं। जलाली, मलाली, बानवा, जिन्दा-शाह आदि १४ प्रकारके फकीर माने हैं। पञ्च द्राविड और पञ्च गौड़ादि मिलके १८ प्रकारके ब्राह्मण माने हैं। १८ प्रकारके गलेमें लिङ्ग धारण करनेवाले जङ्गम होते हैं। और २४ तीर्थङ्कर जैनियोंमें माने हैं। ऐसे छः दर्शनोंमें–९६ पाखण्ड हुए हैं *॥

---

* (१) दूसरे प्रकारसे ९६ पाखण्ड वर्णनः— १० प्रकारके संन्यासीः— १ आश्रम, २ तीर्थ, ३ आरण्यक, ४ वन, ५ गिरि, ६ पर्वत, ७ सागर, ८ सरस्वती, ९ भारती और १० पुरी॥ दो तरहके योगीः—१ हठयोगी, २ राजयोगी॥ मुसलमानोंके २४ पैगम्बरः—१ आदम, २ शीश, ३ नूह, ४ इब्राहीम, ५ याकूब, ६ इसहाक, ७ यूसुफ, ८ इस्माईल, ९ जकरिया, १० यहया, ११ यनूस, १२ दाऊद, १३ अयूब, १४ लूत, १५ सुलेमान, १६, स्वालह, १७ शुएब, १८ ईसा, १९ मूसा, २० इलयास, २१ हार, २२ यूसआ, २३ जिलकिल्ल और २४ मुहम्मद ॥ जङ्गम (शैव) १८ प्रकारकेः—१ शिव, २ पशुपति, ३ मृत्युञ्जय, ४ त्रिनेत्र, ५ कृतिवास, ६ पञ्चबदन, ७ शितिकण्ठ, ८ खण्डपरसु, ९ प्रथमाधिप, १० गङ्गाधर, ११ महेश्वर, १२ रुद्र, १३ विष्णु, १४ पितामह, १५ संसारवैद्य, १६ सर्वज्ञ, १७ परमात्मा और १८ कपाली। ये सब नाम शिवके हैं॥ १८ ब्राह्मणः—१ पूज्य, २, द्विज, ३ श्रोत्रिय, ४ पंक्ति पावन, ५ गुरु, ६ आचार्य, ७ उपाध्याय, ८ ऋत्विक, ९ पण्डित, १० ऋषि, ११ क्षात्र ब्राह्मण, १२ वैश्य विप्र, १३ शूद्र ब्राह्मण, १४ बिडाल या वक विप्र, १५ म्लेच्छ ब्राह्मण, १६ चण्डालविप्र, १७ राक्षस विप्र और १८ अधमाधम ॥ सेवड़ा (जैन) के २४ तीर्थङ्करः— ऋषभदेव, अजितनाथ, सम्भवनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ, पद्मनाथ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, सुबुधिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्यस्वामी, विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्तुनाथ, अमरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी ॥ यह सबोंको एकत्र मिलानेपर ९६ भाग होते हैं, उसे ही सम्प्रदायमें ९६ पाखण्ड कहते हैं ॥

बहत्तर हजार देहमें नाड़ियाँ ठहराये हैं। उसीमें नाभिके तरे और नाभिके ऊपर आधी-आधी बँट गईं, ऐसा ठहराये हैं। अठासी हजार ऋषि हिन्दुओंमें और एक लाख अस्सी हजार पैगम्बर मुसलमानोंमें हुए, ऐसी गिनती लगाये हैं ※ ॥

नव लाख तारा:— १ शब्द, २ स्पर्श, ३ रूप, ४ रस, ५ गन्ध, ६ मन, ७ बुद्धि, ८ चित्त, और ९ अहङ्कार, ये नव लक्षरूप वासनाका सूक्ष्म देह लेके बैठे, ऐसा गुरुवालोगोंने माने हैं। परन्तु, तारागण जड़ मुख्य तेजतत्त्वयुक्त अगणित हैं, ऐसा जानना चाहिये ॥

चौरासी लक्ष योनि:— × चार लक्ष मनुष्य, नव लक्ष जलचर, दश लक्ष पक्षी, २७ लक्ष स्थावर, ११ लक्ष कृमि और २३ लक्ष चौपाये (पशु), ऐसे कल्पनासे गुरुवालोगोंने ८४ लक्ष

---

(१) वैदिक मतसे शरीरमें ३६० अस्थियाँ मानीं गई हैं ॥ नाड़ी मुख्य ६०० बताया गया है ॥

(१) गुरुके सहस्र नाम, विष्णुके सहस्र नाम, और शिवके सहस्र नाम कहा है। तथा सहस्र दलका कमल ब्रह्मरन्ध्रमें माने हैं ॥

※ (१) छः लाख छियानबे सहस्र रमैनी:— एक जीवके लिये षड् दर्शन तथा ९६ पाखण्डोंका आवरण वाणी-खानी जालोंका बन्धन पड़ा है, बिना पारख जीव उससे नहीं छूटता है ॥

× दोहा:— नवलख जलको जन्तु हैं। दश लख पक्षी जान ॥
एकादश कीट-भृङ्ग हैं। स्थावर बीस बखान ॥ १ ॥
तीस लाख पशु योनि हैं। चतुर्लक्ष नर होय ॥
सत्यासत्य विचार करै। साँचा नर है सोय ॥ २ ॥

योनि गिने हैं । प्रत्यक्ष प्रमाण ऐसा है कि, चार अवस्थाओंके कर्मोंके वासनाका लक्ष रहनेसे चार राशियाँरूप चार प्रकारकी योनियाँ प्रगट हैं । सोई १. मनुष्यखानी । २. पशुखानी । ३. अण्डजखानी । और ४. उष्मजखानी हैं, यह वास्तविक चार खानियाँ सत्य माना जाता है ॥

स्थावरखानी पाषाणादि और अङ्कुरादि वनस्पति जल और पृथ्वी, ये मुख्य दो तत्त्वोंके संयोगसे जड़रूप उत्पन्न हुई हैं। ऐसा विवेक करके यथार्थ जानिये ॥

बाहर जिन्होंके कान दिखाई देते हैं, ऐसी मनुष्य, पशु, ये पिण्डजखानी या योनि हैं । ऐसी पिण्डज, अण्डज, और उष्मज, ये तीनों योनियोंमें ज्ञानस्वरूप जीव हैं, सो पिण्डकला है । और चारखानी पशु आदि योनियोंमें जीव नव तत्त्वोंकी सूक्ष्म वायुरूप सूक्ष्म देहके साथ यहाँ ही संसारमें अध्यासवश जन्म-मरणके चक्रमें घुम रहे हैं। सो पिण्डरूप ब्रह्माण्ड-कला है । ऐसी चार राशियाँरूप चौरासीकी गिनती लगाया है * ॥

तैंतीस कोटि देवता कल्पनासे गुरुवालोगोंने माने हैं । सो पञ्चतत्त्व, तीन गुणरूप क्रिया और २५ प्रकृति मिलायके तैंतीस भागोंकी एक कोटि (समुदाय) है। सोई स्थूल और सूक्ष्म दो देहें प्रत्यक्ष ठहरते हैं। इनसे ही तैंतीस कोटि देवताओंकी

* (१) मनुष्य शरीरमें सब रोम साढ़े तीन करोड़ होनेकी कल्पना किये हैं ॥

कल्पना उत्पन्न हुई है । तैंतीस कोटि देवताओंके ❀ नामोंसे तैंतीस कोटि मन्त्र, और तैंतीस कोटि यन्त्र बनाये हैं । सप्त मूल बीज मन्त्र लेके सब मन्त्र बने, सोई सप्तकोटि महामन्त्र माने हैं × ॥

ऐसा पिण्ड और ब्रह्माण्ड कलाओंका माया प्रकृतिका पसारा अनन्त कलाओंसे फैला है । उनकी कोई क्या गिनती कर सकेगा ? महाजाल छूटनेको बड़ा कठिन हुआ है । यदि श्रीसद्गुरु पारखी सन्तोंकी कृपासे पारखदृष्टि जिज्ञासु मनुष्योंको होवे, तो धीरे-धीरे खानी जाल और वाणीजाल छूट सकता है । सोई बनाना चाहिये, तब कोई जिज्ञासु मनुष्य निश्चयसे जीवन्मुक्त हो जावेंगे, ऐसा जान लीजिये ! ॥

॥❀॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे—
नवम प्रकरणम्—समाप्तम् ॥ ९ ॥ ❀ ॥

❀ तैंतीस कोटि देवता पुराणोंके मतानुसार वर्णन किया है । वैदिक कालमें ऋग्वेदमें मुख्य देवता तैंतीस माने गये हैं, जो शतपथ ब्राह्मणमें इस प्रकार गिनाये गये हैं:— ८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य तथा १ इन्द्र और १ प्रजापति, ये सब मिलायके ३३ हुए; उनमें एकको एक कोटिरूप समुदाय गिनके सब ३३ कोटि देवता कल्पनासे माने गये हैं ॥

× (१) भागवतमें यादवों (यदुवंशियों) की संख्या कल्पनासे छप्पन कोटि कही गई है ॥

कल्याणकी लेख अनुसार मुख्य-मुख्य विभिन्न सम्वतोंकी तालिकाः—

|| ❀ || भारतीय सम्वत् || ❀ ||

नाम ।	वर्तमान वर्ष ।
१—कल्पाब्द	१,६७,२६,४६,०५५
२—सृष्टि सम्वत्	१,६५,५८,८५,०५५
३—वामन संवत्	१,६६,०८,८६,०५५
४—श्रीराम-संवत्	१,२५,६६,०५५
५—श्रीकृष्ण-संवत्	५,१८०
६—युधिष्ठिर-संवत् ...	५,०५५
७—बौद्ध-संवत् ...	२,५२६
८—महावीर (जैन)-संवत्	२,४८१
९—शंकराचार्य-संवत् ...	२,२३४
१०—विक्रम-संवत् ...	२,०११
११—शालिवाहन-संवत्	१,८७६
१२—कलचुरी-संवत्	१,७०६
१३—वलभी संवत् ...	१,६३४
१४—फसली-संवत् ...	१,३६५
१५—बँगला-संवत् ...	१,३६१
१६—हर्षाब्द-संवत् ...	१,३४७

|| ❀ || विदेशीय सन् || ❀ ||

नाम ।	वर्तमान वर्ष ।
१—चीनी सन्	९,६०,०२,२५२
२—खताई सन्	८,८८,३८,३२५
३—पारसी सन् ...	१,८६,६२२
४—मिस्री सन् ...	२७,६०८
५—तुर्की सन् ...	७.५६१
६—आदम सन् ...	७,३०६
७—ईरानी सन् ...	५,६५६
८—यहूदी सन् ...	५,७१५
९—इब्राहीम सन् ...	४,३९४
१०—मूसा सन्	३.६५८
११—यूनानी सन् ...	३,५२७
१२—रोमन सन्	२,७०५
१३—ब्रह्मा सन् ...	२,४६५
१४—मलयकेतुसन् ...	२,२६६
१५—पार्थियन सन् ..	२,२०१
१६—ईस्वी सन् ...	१,९५४
१७—जावा सन् ...	१,८८०
१८—हिजरी सन् ...	१,३२४

इस प्रकार भारतमें एक अरब, सतानबे करोड़, उनतीस लाख, उनचास हजार तथा पचपन वर्ष शुरूसे आज तक व्यतीत होनेकी अनुमानसे गणना किये हैं। इसीके भीतर अन्य सबोंके सम्वत् और सन् समयानुसार प्रचलित करके हिसाब जोड़ रखे हैं। वर्तमानमें विशेषतः विक्रमीय सम्वत्, शाके, तथा ईस्वी और हिजरी आदि सन्के आधार लेके लोगोंके हिसाब कारोबार बराबर चल रहा है ॥

और अन्तमें सन्तोंकी वाणीमें ऐसा कहा गया है किः—

चौपाईः—"चौदह अरब ज्ञान हम भाखा। सारशब्द बाहर ले राखा॥"

अर्थात् चौदह विद्यासे लेकर चौदह अरब तक वाणीका ज्ञान अभिमान ले करके ही वर्णन किया गया है। खानी और वाणीकी अध्यास, अभिमानसे सर्वथा रहित हुए बिना निज स्वरूपकी स्थिति होती नहीं। अतः पारखी श्रीसद्गुरुकी सत्यनिर्णय सारशब्द उपदेश, सत्यबोध उक्त वाणी जालसे पृथक् ही रखा हुआ है। जो कोई जिज्ञासु मनुष्य सत्सङ्ग द्वारा विवेक करके सारशब्दको पहिचान पाते हैं, उनके ही सब भ्रम-भूल सद्गुरुकी दयासे मिट जाती है। तथा पारखबोधके प्रतापसे सब बन्धनोंसे छूटके स्वरूप स्थितिमें वे कायम हो जाते हैं। इसलिये मुमुक्षुओंने सारशब्दको पहिचान कर प्रयत्न करके वाणी-खानी भवजालोंसे बाहर हो निकल जाना चाहिये। अतः सद्गुरुने चेतावनी देते हुए बीजकमें कहा है किः—

साखीः—४ करु बहियाँ बल आपनी। छाड़ बिरानी आश॥
जाके आँगन नदिया बहै। सो कस मरै पियास॥ २७७॥

४ शब्द शब्द बहु अन्तरे। सारशब्द मथि लीजै॥
कहहिं कबीर जहाँ सारशब्द नहीं। धृग जीवन सो जीजै॥ ५॥

४ कहन्ता तो बहुते मिला। गहन्ता मिला न कोय॥
सो कहन्ता बहि जान दे। जो न गहन्ता होय॥ ८०॥

४ एक एक निरुवारिये। जो निरुवारी जाय॥
दोय मुखका बोलना। घना तमाचा खाय॥ ८१॥

४ जिभ्या केरे बन्द दे। बहु बोलन निरुवार॥
पारखीसे सङ्ग करु। गुरुमुख शब्द विचार॥ ८२॥

४ जाके जिभ्या बन्द नहीं। हृदया नाहीं साँच॥
ताके सङ्ग न लागिये। घाले बटिया माँझ॥ ८३॥

४ प्राणी तो जिभ्या डिगा। छिन-छिन बोल कुबोल॥
मनके घाले भरमत फिरे। कालहिं देत हिण्डोल॥ ८४॥

४ ज्ञान रतनकी कोठरी। चुम्बक दीन्हों ताल॥
पारखी आगे खोलिये। कुञ्जी वचन रसाल॥ २५४॥

॥❀॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥❀॥

॥*॥ अथ दशम प्रकरण प्रारम्भः ॥१०॥*॥

॥*॥ पञ्चदेह अष्ट प्रकृति सहित विवरण ॥ १ ॥*॥

॥❀॥ पञ्च तत्त्वोंकी पाँच देहोंका कोष्ठक वर्णन ॥ २ ॥❀॥

स्थूलदेह।	सूक्ष्मदेह।	कारणदेह।	महाकारणदेह।	कैवल्यदेह।
छिप्राभूमिका	गतागतभूमिका	सौलेष्टताभूमिका	सुलीनभूमिका	अभावभूमिका
कामजल	चञ्चलजल	आवरणजल	जानीवजल	विज्ञानजल
जठराग्नि	कामाग्नि	मन्दाग्नि	प्रकाशाग्नि (बडवाग्नि)	ब्रह्माग्नि
श्वासवायु	गुल्फवायु	स्थिरवायु	चिन्मयवायु	निरान्तवायु
घटाकाश	मठाकाश	महदाकाश	चिदाकाश	निजाकाश

उक्त कोष्ठक द्वारा पञ्चदेहें पञ्च तत्त्वोंमें मिलान समझ लीजिये ! ।

॥ ❀ ॥ अथ पञ्च भूमिकागत-कर्मफल वर्णन ॥ ३ ॥ ❀ ॥

१. चिप्रा भूमिकाः— जाग्रत् अवस्था, कर्म भूमिका, कर्ममार्ग है। जो मनुष्य वर्णाश्रम धर्मोंमें निपुण, मदिरा, मांसका त्याग, परस्त्री मातावत् जनते हैं। गऊ, ब्राह्मण, साधु वा सन्तोंको अन्नदान, वस्त्रदानादि तथा तीर्थ, व्रतादि पुण्य-कर्म करते हैं। परन्तु, पशुवत् विषयासक्त तिन मनुष्योंका आचरण रहनेसे वे उत्तम अहिंसक पशुखानीमें जन्म लेवेंगे। और जो मनुष्य मदिरा, मांसादि सेवन, चोरी, जीवघात, परस्त्री-गमन, जूवा खेलना, ऐसे-ऐसे पशुवत् विशेष नीच कर्म करते हैं, वे पामर विषयासक्त नरजीव हिंसकादि नीच पशुखानीमें जन्म लेवेंगे, ऐसा जानिये ! ॥

२. गतागत भूमिकाः— स्वप्न अवस्था, कल्पित ईश्वर प्राप्तिके लिये वासनारूप उपासनाकाण्ड है। जितने भेषधारी साधु उपासना-युक्त भक्तिमें बड़ा परमार्थ चलानेसे जग-जाहिर हुए हैं। कल्पित भावनासिद्ध देवताको प्रसन्न किये, ऐसा मानते हैं, और कोई कल्पित सिद्धि युक्ति-प्रयुक्ति आदि चमत्कार जगत्में बताये। परन्तु, स्वर्ग और देवता प्रत्यक्ष कल्पित असिद्ध होनेसे, वे स्त्री-विषयासक्त और जड़ मूर्तियोंमें आसक्त रहनेसे उत्तम, अहिंसक अण्डज खानीमें पक्षी आदिकोंके शरीर धरकर, अधरमें उड़ते रहेंगे। और जो मनुष्य स्मशानमें मन्त्रादि साधन, जीवका बलिदान, जीवका होम, कल्पित भूत-प्रेतादि पूजन करते हैं, वे सर्व अध्यासवश

अनेक योनियोंमें देह धरके अपने-अपने विशेष पापफल भोगकर फिर हिंसक अण्डज-खानीमें जन्म लेवेंगे । कल्पित भूत योनिमें और देव योनिमें देह गुप्त करना और प्रगट करना, ऐसा गतागत होनेका सामर्थ्य रहता है । ऐसा भ्रमिक गुरुवा लोगोंने माना है । परन्तु, जन्म-मरणका दुःख अध्यासवश सब भोग रहे हैं । ब्रह्मज्ञानादि धोखा कल्पनासे आवागमन कुछ छूटता नहीं है। और संयोगी साधु या गृहस्थ लोग गुरुदीक्षा मन्त्रोपदेश लेकर जड़ मूर्ति-पूजादि भक्ति करके मद्य, मांस मात्र त्यागे हैं । परन्तु, खेती, व्यापारादि नित्य कर्मोंमें अनेक झीने-झीने देहधारी जीवों-की हिंसा करते हैं । और भगलम्पट रहनेसे वे मध्यम हिंसक अण्डज खानीमें जन्म लेवेंगे । और बाममार्गी देवी उपासक पञ्च मकार मांस, मदिरादि, विषय सेवन, जीवघातादि कर्मोंमें आसक्त रहनेसे विशेष हिंसक अण्डज खानीमें जन्म धरके अनेक देह दुःख भोगेंगे, ऐसा जानिये ! ॥

३. सौलेष्टता भूमिकाः— सुषुप्ति अवस्था, केवल कल्पित परमात्मा प्राप्तिकी आशा ही रूप योगमार्ग है । इसीमें राजयोग, हठयोगादि साधनोंसे कल्पित भावना सिद्ध हुए महादेवादि माने हुए सिद्ध योगी अनेक कल्पनारूप सिद्धियोंको प्राप्त हुए । इसीमें धोखामें पड़े हुए सिद्ध योगीजन नरजीवोंको अनेक दुःख दिये, किसी मनुष्योंको शाप देकर मार भी डाले, ऐसा वर्णन है। इसी सबब (कारण) वे अध्यासवश उत्तम उष्मज खानीमें जन्म

लेवेंगे । तीसरे अवघड़ योगी जो साधुओंमें अप्रीति, तामसी, जीवहिंसक, मदिरा, मांस भक्षक, ऐसे-ऐसे शाक्त उपासक योगी, भूत-प्रेतादि मिथ्या कल्पनाओंको माननेवाले विविध प्रकारके योनियोंमें देह धरके फिर कनिष्ठ उष्मज खानीमें देह धारण कर अनेक दुःखोंको वे भोगते ही रहेंगे, ऐसा जानिये ! ॥

४. सुलीन भूमिकाः—– तुरिया अवस्था, साक्षी दशा, अहं इच्छाका कारणरूप तथा त्रिगुण मायाजालका अभाव और साक्षीरूप, सुलीन, ज्ञानभूमिका माना है । जो मनुष्य शुद्ध धर्माचरणमें निपुण, मदिरा-मांसका त्याग, चोरी, व्यभिचारादि कर्मोंसे वर्जित, ब्रह्मचारी रहके जगत्की सर्व स्त्रियाँ मातारूप जानते रहते हैं । साधु, सन्त, गरीब, अङ्गहीनादि नरजीव या पशु, पक्षी आदि जीवोंको अन्न, जल, वस्त्रादि दान इत्यादि शुभ कर्म वे करते रहते हैं । और काया, वाचा, मनसे बन सके, तहाँतक जीव दया, क्षमा, शान्ति, सन्तोष, विवेक, वैराग्यादि शुद्ध गुण लक्षण वे धारण किये रहते हैं । विशेष करके सत्यन्यायी, पारखी सन्तोंमें स्वरूप ज्ञानकी दृढ़ निश्चयताके लिये सत्सङ्ग करनेमें विशेष प्रेम रखते हैं । परन्तु, दृढ़ एकसम स्थिति नहीं होनेके कारण वे फिर नरजन्म लेते-लेते अन्तमें पारखदृष्टि एकरस धारण करके जीवन्मुक्त हो जावेंगे । और जो गुरुभक्त-सेवक संसारी गृहस्थ लोग १ । २ पुत्र स्त्रीसे उत्पन्न किये बाद स्त्रीसङ्ग त्यागके, सदोदित त्यागी साधु-सन्तोंकी चैतन्य सेवा, और सत्सङ्गमें विशेष

प्रेम-प्रीति, और श्रवण, मनन, निदिध्यासनादि, शम-दमादि साधनोंमें नित्य लगे रहते हैं । वे भी ज्ञानकी दृढ़ता होनेका लक्ष रखनेसे फिर नरजन्ममें बारम्बार आकर अन्तमें त्यागी साधु होके जीवन्मुक्त हो जावेंगे । ऐसा जान लीजिये ! ॥

५. अभाव भूमिकाः— तुरियातीत अवस्था, महान्शून्य आनन्दरूप विज्ञानमार्ग माना है । उसीमें अपना अथवा जगत्के पदार्थोंका कोई भान वे रखते ही नहीं, बिलकुल मूढ़ हो जाते हैं । आकाशतत्त्वरूप सर्वत्र समान वायुवत् सर्व जगत्को ही कल्पनासे परमात्मा सिद्ध करके परमहंस बनते हैं । महान् आनन्दमें मस्त गाफिल पड़े रहते हैं । विधि-निषेधादि कोई कर्मका भान नहीं रखते हैं । कहीं खाते, कहीं पड़े हैं ! स्त्रीसम्भोग, मदिरा, मांसका भक्षण, जीव-घातादि कोई अनाचार जगनिन्दित कर्म तिन्होंसे हो जावे, तो वे डरते ही नहीं । हम ब्रह्मस्वरूप, अक्रिय, हमारा ही जगत्का विलास लीलामात्र खेल है, ऐसा वे मानते हैं । बाल, मूक, उन्मत्त, जड़ और पिशाचवत् दशा धारण किये हुए परमहंस फिर अभ्यासवश अजगर, केंचुवा, कृमि आदि जड़ दशावाले योनियोंमें जन्म लेवेंगे । और दूसरे परमहंस तो कहाते हैं, परन्तु, मदिरा, मांस सेवन, स्त्रीसम्भोग, ऐसे-ऐसे अनाचार कर्म नहीं करते हैं, शुद्ध ज्ञानमार्गसे चलते, सदोदित सत्सङ्ग विचारमें लगे रहते हैं । सो ऐसे शुद्ध चालसे चलनेवाले लोग फिर नरजन्म पायकर त्यागी बनके विचारवान् बनते-बनते किसी नरज़न्ममें जीवन्मुक्त

हो जावेंगे, ऐसा जानिये ! ॥

किसी मतोंमें अग्निकी अनेक चिनगारियाँवत् या वृक्षके फलवत् एक जीवसे अनेक जीव उत्पन्न होते हैं, ऐसा अविचारसे माने हैं। परन्तु, चारों खानियोंके सर्व जीव चैतन्य अविनाशी रहनेसे अनादि और अनन्त हैं। वे एकसे अनेक और अनेकसे एक होना, ऐसे जड़ तत्त्वोंके कार्य-कारणवत् तिनकी स्थिति नहीं होती है। जहाँ 'जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति' ये तीन अवस्थाएँ हैं। सुख, दुःख, पदार्थादि जानना यह 'ज्ञानगुण' है। जड़ाध्याससे 'इच्छाशक्ति' और इच्छाशक्तिसे अनेक 'क्रियाएँ' हैं। वहाँ ही देहधारी चैतन्य जीवोंका बास है, ऐसा जानना। और पञ्चतत्त्व और तत्त्वोंके सर्व कार्य पदार्थ, जड़ ज्ञानहीन हैं, तहाँ चैतन्य जीव नहीं हैं। वे प्रत्यक्ष जड़ हैं। ऐसा विवेक-दृष्टिसे देखके यथार्थ पहिचान लेना चाहिये ॥

१. कामजलः— विषय भोगोंकी वासना या अनेक कामनाएँ वा इच्छाएँ जो मनमें उठा करते हैं सो है ॥

२. आवरणजलः— अज्ञानका पर्दारूप गाफिली है। अन्तःकरणमें जो अध्यासका आवरण पड़ा है सो है ॥

३. चञ्चलजलः— चित्तकी जगत् भोगोंमें विशेष चलायमान होना या मनकी चञ्चलताका होना सो है ॥

४. जानीव जलः— साक्षीरूप ज्ञान ब्रह्माण्डकला सबको जाननेवाला सर्वद्रष्टा माना है, सो है ॥

५. विज्ञान जलः — जड़-चैतन्य एकत्र स्वरूप भेदाभेद कुछ है नहीं। ऐसा गुरुवा लोग कहते हैं ॥

१. जठराग्निः— नाभिमें स्थित है, जव प्रमाण अग्नि रहता है, जो अन्न-जलको पचाता है, सो है। यानी जठर (पेट) में रहनेवाला अग्नि जो है, सोई जठराग्नि है ॥

२. कामाग्निः— भीतरमें मनसे सङ्कल्प, कामना, इच्छाएँ उठानेवाला जो अग्नि है, सो कामाग्नि है ॥

३. मन्दाग्निः— अज्ञानतासे हठयोग, पञ्चाग्नि तापना, जलशयन, धूम्रपान, ठाढ़ेश्वरी, ऊर्ध्वबाँहु आदि अनेक तप-साधनोंको किया करना, सो मन्दबुद्धिके ज्वाला ही मन्दाग्नि है ॥

४. प्रकाशाग्नि (बड़वाग्नि):— कल्पित परमतत्त्व परमात्माको शीतलरूप माना है। परन्तु, बड़वाग्नि-समान फिर लहरीवत् जगत्की इच्छा प्रगटानेमें वह कारण है। इसलिये प्रकाशाग्निको बड़वाग्नि भी कहा है। समुद्रके भीतर गर्भमें रहनेवाली अग्निको 'बड़वानल' कहते हैं ॥

५. ब्रह्माग्निः— सर्व अज्ञानकर्म ज्ञानाग्निमें जलाय, विज्ञानरूप शान्तपदको माना है। परन्तु, जगत्का बीज सूक्ष्म अहंभाव भीतर रहता है, सोई फिर उत्पत्तिकी कारण है। अर्थात् ब्रह्मके हंकार ही सर्व सद्गुणोंको जलायके नाश करनेवाली 'ब्रह्माग्नि' है ॥

१. श्वासवायुः— श्वासोच्छ्वास चलनेवाली प्राणवायु जो है, सो श्वासवायु है ॥

२. गुल्फवायुः— वायु ध्यानादि साधनोंमें गोलाकार बँध जाता है, सो है। अथवा गुल्फ स्थानमें जो रहता है, सो वायु है॥

३. स्थिर वायुः— सदैव स्थिर रहनेवाली समान वायु है, या समाधिमें श्वासका रुकना स्थिर शून्यवृत्ति हो जाना वह है॥

४. चिन्मय वायुः—वायुमें बिजलीवत् अनेक तरहके प्रकाश देखना, अथवा वायु ही चैतन्यरूप भासना, वह चिन्मयवायु है॥

५. निरान्त वायुः— स्थिर पवनवत् परमात्माको व्यापक-रूपसे सर्वत्र माना है, सो निरान्त वायु है॥

१. घटाकाशः— घड़ेमें रहनेवाला आकाश, सोई देह है। और जितने घटमें अवकाशरूप खाली जगह है, उसे भी घटाकाश (घड़ेमेंका आकाश) कहते हैं॥

२. मठाकाशः— मठमें रहनेवाला आकाश, अर्थात् श्वासमें मनको जोड़के, वह लय हुए बाद आनेवाली स्थिरता है। सोई मठाकाश माना है। और मठ-मन्दिर, घर-महल आदिकोंमें घिरा हुआ पोल भागको भी बाहर मठाकाश कहते हैं॥

३. महदाकाशः—ब्रह्माण्ड भरका सर्व आकाश आनन्दरूपसे माना है। सो गुरुवा लोगोंकी कल्पना है। और बाहरका बड़ा विस्तारवाला सर्वत्रकी शून्य भागको 'महद् आकाश' नाम धरे हैं॥

४. चिदाकाशः—मस्तक, हृदय, नाभि या त्रिकुटीमें, वायुतत्त्वसहित अन्य तत्त्वयुक्त गोलाकार ज्योतिप्रकाश देखना है। सो भासमात्र मिथ्या है। और द्रष्टा जीव सत्य है। परन्तु,

आत्मा वा ब्रह्मको आकाशवत् निराकार, निर्गुण चैतन्य माने हैं; उसे ही चिदाकाश कहते हैं ॥

५. निजाकाशः— विभु व्यापकरूपसे महा आनन्द माना है। सोई निजाकाशको महाकाश भी कहते हैं । अर्थात् निजस्वरूपको आकाशवत् असीम, व्यापक मानना, वही निजाकाशका लक्षण है॥

॥ ❀ ॥ पञ्च देहोंमें पञ्च देवताओंका बास वर्णन ॥ ४ ॥ ❀ ॥

१. कैवल्य देहमें:— कल्पित निरञ्जन परमात्मा, आकाश-तत्त्वरूप समानवायुका अंश, शून्य 'आनन्दरूप' माना है ॥

२. महाकारण देहमें:— आदिमाया, चञ्चल वायुका अंश, 'अहंस्फूर्ति-इच्छारूप' माना है ॥

३. कारणदेहमें:— महादेव, तेजका अंश, 'आशा' ही मात्र 'योगरूप' माना है ॥

४. सूक्ष्मदेहमें:— विष्णु, जलका अंश, 'वासनारूप' माना है॥

५. स्थूलदेहमें:— ब्रह्मा, पृथ्वीका अंश, 'कर्मरूप' माना है॥

ये पाँचों देहोंका अभ्यासरूप बीज, पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे पूर्ण पारख-दृष्टि एकसम बनायके जिज्ञासु जनोंने जलाना चाहिये । तब वे पञ्च देहरूप पञ्च जड़ तत्त्वोंके अध्याससे न्यारे जीवन्मुक्त हो जावेंगे । सोई जिज्ञासु जीवोंने अभी नरदेह रहते ही बना लेना चाहिये ॥

॥ ❀ ॥ पञ्च देहोंके न्यारे-न्यारे त्रिगुण वर्णन ॥ ५ ॥ ❀ ॥

१. स्थूलदेहमें:— १ रज, २ तम, ३ सत्त्व, ये त्रिगुण हैं ॥

२. सूक्ष्मदेहमें:— १ रेचक, २ पूरक, ३ कुम्भक, ये त्रिगुण हैं ॥

३. कारणदेहमें:— १ जड़, जाड़, ३ मूढ़, ये त्रिगुण हैं ॥

४. महाकारणदेहमें:— १ साक्षी, २ बोध, ३ ज्ञान, ये त्रिगुण हैं ॥

५. कैवल्य देहमें:— १ तत्, २ त्वं, ३ असि, ये त्रिगुण हैं ॥

इसीमें कैवल्य देहका 'तत्त्वमसि' सिद्धान्त "तू ब्रह्म स्वरूप अखण्ड आनन्दरूप है" ऐसा माने हैं। परन्तु, जगत्का अंकुर अहं बीजरूप इच्छा-अध्यास सूक्ष्मभावसे वहाँ बना ही रहा। ऐसा उन त्रिगुणोंका बीज, पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे जिज्ञासु-जनोंने मिटायके जीवन्मुक्त होना चाहिये। यही मनुष्योंका मुख्य कर्तव्य है ॥

अबतक सर्व विस्तार पञ्चतत्त्वोंके पञ्चकोशरूप पञ्चदेह, त्रिगुण, पच्चीस प्रकृतियाँ इन्होंका ही हुआ है। इसीमें आकाश-तत्त्वरूप समानवायु ही 'निरञ्जन पुरुष' और चञ्चल वायुतत्त्व रूप 'स्त्री-प्रकृति' है। यह ब्रह्माण्डकला नादरूप वाणीजालका अनेक प्रपञ्च कर्म, उपासना, योग, ज्ञान, विज्ञानादि सर्व गुरुवाई वर्णन की है। और प्रकृति—पुरुषके तीन पुत्र "तेज, जल और पृथ्वीरूप महादेव, विष्णु और ब्रह्मा" माना है। यह पिण्डकला बिन्दुरूप खानीजालका अनेक प्रपञ्च, अर्थात् पञ्च विषयोंका खान-पान, स्त्री-सम्भोगादि सर्व व्यवहार वर्णन किया है। इसीमें

"बीजवृक्षन्याय" ब्रह्मसे जगत् और जगत्से ब्रह्म, ऐसे माया चक्ररूप हिण्डोलेपर सर्व नरजीव झूल रहे हैं। और जन्म, मरण, गर्भवासका दुःसह-दुःख भोग रहे हैं। सोई सत्सङ्ग-विचार करके जानकर पारखबोध द्वारा मिटाना चाहिये। मनुष्य जन्मको सफल करना चाहिये! ॥

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे—पञ्चदेह विवरण दशम प्रकरणम्–समाप्तम् ॥ १० ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ श्रीसद्गुरवे नमः ॥ ❀ ॥

॥ अथ एकादश प्रकरण प्रारम्भः ॥ ११ ॥

॥ ❀ ॥ नरदेहमें शुद्धरहनी और जीवन्मुक्त स्थिति वर्णन ॥ १ ॥ ❀ ॥

आगे सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबका सत्यन्यायरूप सिद्धान्त वर्णन है। उसीमें ब्रह्मबीज नाश होके नरजीव जड़ देहबन्धनोंसे जीवन्मुक्त हो, निज-स्वरूपमें पारख दृष्टिसे कैसे स्थिर हो जाते हैं ? सो सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबका पारखबोध वर्णन किया है, ऐसा जानिये ! ॥

॥ ❀ ॥ पञ्च तत्त्वोंकी हंसदेहमें वा नरदेहमें शुद्धगुण रहनीके लिये ॥ २ ॥ ❀ ॥

१. पृथ्वी तत्त्वकाः—– शुद्धगुण "सत्य" है ॥

२. जलतत्त्वकाः—– शुद्धगुण "विचार" है ॥

३. तेजतत्त्वकाः—– शुद्ध गुण "शील" है ॥

४. चञ्चल वायुतत्त्वकाः–शुद्धगुण "दया" है ॥

५. आकाशतत्त्वरूप समान वायुकाः— शुद्धगुण "धीरज" है। ऐसे सत्य, विचार, शील, दया, और धीरजको मुमुक्षुओंने रहनीके लिये हृदयमें धारण करना चाहिये। इसीका खुलासा वर्णन करते हैं ॥ इसीमेंः—

१. पृथ्वीतत्त्वकाः— स्वयंगुण 'गन्धविषय' और 'कठिन स्वभाव' है। तिसमें सुगन्धी और दुर्गन्धी पदार्थोंमें आसक्ति, सो 'पिण्डकला' है। और गन्धवत् सर्वत्र व्यापक कल्पित परमात्मा मानना, सो 'ब्रह्माण्डकला' है। अनेक कर्मरूप गन्धकी सूक्ष्म वासना रखके, प्राणवायुके साथ सूक्ष्मदेहयुक्त नरजीव स्थूल देहसे निकलते हैं। अनन्तर पृथ्वीतत्त्वका कठिनत्त्व स्वभावरूप स्थूलदेह धारण करके बारम्बार जन्म-मरणादि वे अनेक दुःख भोगते रहते हैं। सो देह दुःख भवबन्धन मिटानेके लिये पृथ्वीका शुद्धगुण 'सत्य' को धारण करना है। कारणः—* पृथ्वीको जलावो, खोदो, जोत दो, नरक-मूत्रादि दुर्गन्धि पदार्थ उसीपर डालो, तो भी ज्यादा ही अनाज, शाक, फूल, फलादि उत्पन्न होके वह सबोंको सुख ही देती है। परन्तु, कभी अपनी जड़त्त्वगुणका सत्यता नहीं छोड़ती है। तैसे ही आप चैतन्य नरजीव सुख-दुःख, पदार्थादि सबोंको जाननहार, सबके साक्षी, भिन्नरूप-से त्रिकालमें 'सत्य' है। और पिण्ड-ब्रह्माण्डमें तत्त्वोंके अनेक

* दोहाः— "खाद खूद धरती सहै। काट कूट वनराय ॥
कटुक वचन साधु सहै। औरसे सहा न जाय ॥"

पदार्थोंके नाना देह व्यवहार और देहें नरजीवोंके सत्तासे चैतन्य-वत् दिखाती हैं। परन्तु, वे जड़ तत्त्वोंके कार्य स्वयं जड़ और नाशवान हैं। चैतन्यको सर्वत्र व्यापक मानना, सो महाअज्ञानता-रूप गाफिली है। क्योंकि, पञ्चजड़तत्त्व और अनेक चैतन्य जीव अविनाशी भिन्न-भिन्न अनादि रहनेसे सर्व एकदेशी प्रत्यक्ष सिद्ध ही हैं। ऐसा जड़ और चैतन्यका न्यारा-न्यारा निर्णय करनेवाले अनादि कालके जगत्में आदिकाल वा भूतकालमें पारखी सन्तरूप सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब प्रगट हुये, आपने ही पारखबोध सर्व प्रथम प्रकाश किये हैं। आप सर्व भ्रमिक और नास्तिक गुरुवा लोगोंके ऊपर सबोंसे श्रेष्ठ, सर्वोपरि शिरोमणि हुए हैं। सर्व जगत्के श्रेष्ठ पारख ज्ञानमें आप 'आदिगुरु' हुए हैं। इसलिये आप ही सद्गुरु मानने योग्य हुये हैं। आपकी धन्यता कहाँतक वर्णन करना ? ऐसी निर्णय वाणी वही गुरुमुख वाणी, निष्पक्ष सत्य-न्यायकी है। ऐसे कोई बिरले सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके सच्चे अनुयायी पारखी सत्यन्यायी सन्त तभीसे परम्परासे आजतक होते ही चले आये हैं। ऐसा सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबका पारख बोध धारण किये हुये पारखी सन्तोंसे मिलना। साधु वा गृहस्थ कोई होवें सर्व प्रकारसे काया-कष्टसे बड़े प्रेमसे आपकी सेवा तिन्होंने करना चाहिये। जिससे आप प्रसन्न होकर सत्यन्यायका या यथार्थ निर्णयका उपदेश देवेंगे। बहुत क्या कहना ? तन, मन, धनादि सर्व नाशवान पदार्थोंको खर्च करके आपके ही सत्सङ्गमें सदोदित

लगे रहना चाहिये । तब नित्य जो चैतन्य हंसरूप नरजीव है, सो पिण्ड, ब्रह्माण्डादि सर्व कलाओंकी आसक्तिसे छूटकर, जन्म-मरणरूप दुःखोंसे रहित होके जीवन्मुक्त होगा ॥

फिर देह रहेतक सत्यकी रहनी, सत्यनिर्णयकी वाणी बोलना, सत्यके ही व्यवहार, सत्य-शुद्ध ही भेष रखना, ऐसे सर्व प्रकारसे सत्य शुद्धगुण व्यवहारके लिये जिज्ञासुजनोंने अपनी चालमें सत्यको धारण कर लेना चाहिये । तब जड़ाध्यासोंका सर्व मुरचा तिनका झड़ जावेगा । इसी कारण शुद्ध रहनीके लिये पृथ्वीतत्त्वका शुद्ध गुण 'सत्य' लिया है । अतः प्रथम अपनेमें सब प्रकारसे सत्य रहनीका ही ग्रहण–धारण करना चाहिये ॥

२. जलतत्त्वकाः—स्वयंगुण 'रसविषय' और 'शीत स्वभाव' है । तिसमें षट्रस भोजनोंके अनेक स्वाद सो 'पिण्डकला' है । और भ्रम कल्पनासे जगत् कर्ता ईश्वर आदि सिद्ध करके प्रेम-भक्ति-के विरहमें धुन्ध गाफिल पड़े रहना, सो 'ब्रह्माण्डकला' है । इसीमें सर्व नरजीव विशेष करके अचेत हुए हैं । इसलिये जलके शुद्धगुण 'विचार'को धारण करना है । जैसा जल निर्मल शीत और बहता रहता है, * ऐसा ही सत्सङ्गमें श्रवण, मननादि विचार-का प्रवाह एक सरीखा सदोदित चलता रहेगा, तब साधु-गुरुमें भक्तजनोंकी पक्की निष्ठा और प्रेम-प्रतीति प्रगट होगी । फिर

---

* दोहाः— "बहता पानी निर्मला । रूका गन्दा होय ॥
विचारमान साधु-भला ! दाग न लागैं कोय ॥"

देह वर्तमानमें षट् रसादि अङ्कुरज मात्र शरीर जड़ न होने लायक शुद्ध भोजनका व्यवहार ग्रहण करके, पारखी श्रीसद्गुरुके सत्सङ्ग-द्वारा नरजीव जडाशक्तिसे निर्मल होके अपने निजस्वरूप बोधमें तृप्त, शान्त और स्थिर होवेंगे । इसी सबब (हेतु) शुद्ध रहनीके लिये जलका शुद्ध गुण 'विचार' लिया है । अतः सत्यकी स्थितिके लिये दूसरा अङ्ग विचारको अपनेमें पूर्णतः धारण कर लेना चाहिये ॥

३. अग्नितत्त्वकाः— स्वयंगुण 'रूप विषय' और 'उष्ण स्वभाव' है । नाना सुन्दर, तेजवान, अमोल वस्तुओंके रूपोंमें हर्षित होना, सो 'पिण्डकला' है । और मानसपूजारूप ध्यानसे वृत्तिकी एकाग्र होने पर हृदयमें अंगुष्ठमात्र दीखते हुये तत्त्वोंके प्रकाशको या भासको सगुण ईश्वर कल्पनासे मानना । अथवा योगसाधनोंसे अध-अंगुष्ठ तत्त्वोंका प्रकाश नाभिमें वा हृदयमें दीखता है, ऐसा कहते हैं । सो उसे निर्गुण ईश्वर भ्रमसे मानना, सो 'ब्रह्माण्डकला' है । जैसी अग्नि सर्व पदार्थोंको जलाय, भस्म करके अन्तमें आप भी शान्त हो जाती है, * तैसे ही अग्निरूप 'अहं इच्छा' फुरानेवाला परन्तु, शीतल माने हुए कल्पित परमतत्त्व, परमात्माके अहङ्कारी सर्व ब्रह्मज्ञानी, योगी आदि हुये हैं । सो अहङ्कार मिटानेके लिये जब कोई साधु या सेवकोंके

* दोहाः—"पदार्थ जलाय भस्म करी । तेज पुनि होवै शान्त ॥
तस तामस हङ्कार तजी । साधु होवै निरान्त ॥"

अङ्गमें शीलरूप दीनता, नम्रता, कोमलता, गरीबी, ये शुद्ध गुण धारण होवेंगे, तब अग्निरूप इच्छा अध्यासका बीज तिनका नष्ट होके वे पारखी श्रीसद्गुरुसे निरहङ्कारी दासातनसे रहकर वे सत्य निर्णयको प्राप्त होवेंगे। अनन्तर जब सबोंसे न्यायरूप, मीठे, नम्र वचन वे बोलने लगेंगे, तब 'शील गुण', ग्रहण होके सर्व प्रकारसे स्थिरता प्राप्त होकर, पारख गुरुपदपर कोई जिज्ञासु नरजीव ठहर रहेंगे। इसी कारण शुद्ध रहनीके लिये अग्निका शुद्ध गुण 'शील' लिया है। अतः विचारकी परिपुष्टिके लिये तीसरा अङ्ग शीलको अपनेमें दृढ़तासे धारण कर लेना चाहिये ॥

४. चञ्चल वायुतत्त्वकाः— स्वयंगुण 'स्पर्शविषय' और 'चञ्चलता स्वभाव' है। मुख्य स्त्रीसम्भोगका स्पर्शविषय सो 'पिण्डकला' है। और सहस्रदल कमल, नाभि कमल और हृदय-कमलमें निर्विकल्परूप स्पर्शसुख भोग भोगना, सो 'ब्रह्माण्ड-कला' है। ये दोनों कलाओंमें निजदया नरजीवोंको प्राप्त नहीं होती है। चञ्चलता स्वभाव आनन्दकी इच्छा सदोदित बनी ही रहती है। उपासक, योगी, ब्रह्मज्ञानी, इत्यादि सबोंने, निज-दया, नहीं जानी। जीवहिंसा कर बलिदान देके, श्राप देके, रणमें युद्ध करके, जड-चैतन्य एक आत्मा ठहरायके, निजदया वे छोड दिये, कुछ पारखस्थिति तिनको प्राप्त हुई नहीं। अपने-अपने जीवके आत्मघाती वे बने रहे। और अब वर्तमानमें भी वैसे ही वे आत्मघाती बने हैं; वे दूसरे नरजीवों पर क्या दया कर सकेंगे?

इसलिये पञ्च कोशरूप पिण्ड-ब्रह्माण्डका स्पर्शरूप आनन्दोंका अध्यास पारखी श्रीसद्गुरुसे पारखदृष्टिकी धारणा करके मिटाय, जड-चैतन्यका न्याय कर लेना चाहिये ※ । जब विषयानन्द, प्रेमानन्द, योगानन्द, ब्रह्मानन्दादि सर्व आनन्दोंका सूक्ष्म अहङ्काररूप अध्यास कालरूप जानके आनन्दोंके इच्छा अध्यासोंकी वासना मिटेगी, तब नरजीव स्वयं स्वरूप पारखबोधमें स्थित होवेंगे । सोई 'निज दया' जीवन्मुक्त स्थिति है । इसलिये शुद्ध रहनीके वास्ते चञ्चल वायुतत्त्वका शुद्धगुण 'दया' लिया है । अतः निजदया और परदयाके भेदको जानकर अपनेमें यह चौथा अङ्ग दयाको पूर्णतासे धारण कर लेना चाहिये ॥

५. आकाशतत्त्वरूप समान वायुका:— स्वयंगुण 'शब्दविषय' और 'निर्विकल्परूप जड स्वभाव' है । अनेक राग, रागिनी आदि गायन और शून्य स्थिति अज्ञानरूप निद्रा, सो 'पिण्डकला' है । अनहद बाजा सुनना, और सर्वत्र व्यापक कल्पित ईश्वर, परमात्मादि जगत्कर्ता मानके, निर्विकल्पदशामें मग्न गाफिल रहना, सो निद्रारूप 'ब्रह्माण्डकला' है । इसीमें 'अज्ञान' और 'विज्ञान' ये दोनों महाशून्य महागाफिलीरूप झाँई आनन्दमय अध्यासरूप स्थितिका बीज है × । सो अज्ञान और विज्ञान दोनों

※ दोहा:—"पारख दृष्टि सामने । निज पर दयाको पाल ॥
स्थिति स्वरूप बन्धन रहित । विष विकार दे डाल ॥"

× दोहा:—"राग-रागिनी छोड़कर । परख अज्ञान विज्ञान ॥
दृढ़ धीरज धारण करै । ले पारख गुरु ज्ञान ॥"

'सुषुप्ति' मिटानेके लिये पारखी सन्तोंके सत्सङ्गसे पारखदृष्टि धारण करके दोनों शून्य स्वभाव आनन्दवृत्तिके अध्यास बीज मिटाना चाहिये। अनन्तर बड़ा धीरज धरके जब चैतन्य हंस शून्यवृत्तिको जाननेवाला, ज्ञानरूप सबोंकी पारख करनेवाला, नित्य अमरपद है। ऐसी पारख बोधसे महास्थिरता प्राप्त होगी, तब 'धीरज' शुद्ध गुण ग्रहण होगा। इसी कारण शुद्ध रहनीके लिये आकाशतत्त्वरूप समान वायुका शुद्ध गुण 'धीरज' अपनी स्थिरताके लिये ग्रहण किया है। अतः पाँचवाँ अङ्ग धैर्यको अपनेमें दृढ़तासे धारण करके उपरोक्त चारों शुद्ध सद्गुणोंको सदा कायम बनाये रखना चाहिये। ऐसे पञ्च तत्त्वोंके पञ्च शुद्धगुण १ सत्य, २ विचार, ३ शील, ४ दया और ५ धीरज, ये केवल मनुष्योंको शुद्ध रहनीके लिये ग्रहण करनेको कहा है ❋ ॥

॥❋॥ हंसदेहमें वा नरदेहमें त्रिगुण शुद्ध रहनीके लिये वर्णन ॥३॥❋॥

१ विवेक, २ गुरुभक्ति, और ३ वैराग्य, ये त्रिगुण शुद्ध रहनीके लिये मनुष्योंको धारण करना है। जिससे निज स्वरूपकी स्थितिमें स्थिर हो सकेंगे ॥

१. विवेकः— रजोगुणकी शुद्धकला है। जलका शुद्धगुण 'विचार' और वायुका शुद्धगुण 'दया' दोनों मिलके "विवेक" उत्पन्न होता है। जैसा जलका प्रवाह चलता ही रहता है, और

❋ दोहाः—"सत्य विचार शील दया। धीरजयुत ये पाँच ॥
रहनी धारण जो करै। भव तरि सहजे बाँच ॥"

वायु सदोदित समान और विशेषरूप चञ्चलतासे बहती ही रहती है। तैसा जड़-चैतन्यका विवेक सदोदित मनुष्योंने करते ही रहना चाहिये। और १ स्त्रीपक्ष, २ बड़े-बड़े पुरुषोंका पक्ष, ३ वेदपक्ष, ४ शास्त्रपक्ष, ५ पुराणपक्ष, और ६ देवताओंका पक्ष, ऐसे छः पक्ष खानी—वाणीरूप पिण्ड-ब्रह्माण्ड कलाओंके हैं *। खानीमें जड़भावनारूपसे और वाणीमें मानना, कल्पना या दृढ़ अभ्यासरूपसे हैं। ये सब अनित्य या नाशवान् और चैतन्यजीव नित्य या अविनाशी हैं। ऐसा विवेक करना ×, सोई सत्यन्यायरूप 'विवेकदृष्टि' है। ऐसे पारखदृष्टिसे गुरु न्याय-पर सदोदित रहना। अनन्तर बड़े सावधानसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कारादिकोंके विकारोंको अच्छे परखते रहना; जिससे सर्व अज्ञानरूप जड़ासक्ति मिट जावेगी। तब कोई नरजीव शुद्ध स्वयं प्रकाशी निजबोध स्वस्वरूपपर कायम होगा। इसी सबब (कारण) शुद्ध रहनीके लिये विवेकरूप रजोगुणकी शुद्धकला ग्रहण करना है। विवेक किये बिना किसीको सत्य स्वरूपका यथार्थ बोध हो नहीं सकता है, अतः विवेकी होना चाहिये॥

२. गुरुभक्तिः— सत्त्वगुणकी शुद्धकला है। पृथ्वीतत्त्वका

---

* दोहाः— "स्त्री पशु नरपशु वेद पशु। शास्त्र पुराण पशु देव॥
पक्षपाति घट पशु कहैं। परखे पारखि भेव॥"

× दोहाः— "दया विचार मिलायके। करिये सदा विवेक॥
पक्षपात सब त्याग दे। पारख पदमें टेक॥"

शुद्धगुण 'सत्य' और तेजतत्त्वका शुद्धगुण 'शील' ये दोनों मिलके "गुरुभक्ति" उत्पन्न होती है *। जैसे पृथ्वीके सर्व जड़ पदार्थोंको अग्नि जलाय भस्म कर देती है। वैसे ही श्रीसद्गुरुकी कृपासे सत्य पारख भूमिकारूप ज्ञानदृष्टिमें जब नरजीव स्थित होवेंगे, तब पाप, पुण्यादि कर्मोंके आचरणसे कल्पित स्वर्ग-नरकादि भुकतानेवाली सर्व शुभाशुभ कर्मोंकी वासना तिनकी ज्ञानाग्निसे जल जावेगी। ऐसे सञ्चित कर्म नाश हो जावेंगे। किसी खानी और वाणीरूप नाद तथा बिन्दकलाको दृढ़ मानना उनका नहीं रहनेसे क्रियमाण कर्मोंका वासना बीज भी उनका नहीं बनेगा। बाकी देहके अनेक रोग, अन्न, वस्त्रादि देह प्रारब्धका व्यवहार उनका बना है; सो देह रहेतक अभाव वृत्तिसे बेगार माफिक देहोंके सुख-दुःखादि वर्तमान व्यवहार कैसे तो भी भोगके अन्तमें देहके साथ प्रारब्ध, कर्म भी उनके सब छूट जावेंगे। ऐसा सञ्चित, क्रियमाण वा आगामी और प्रारब्ध, ये तीनों कर्मोंका बीज नाश हो सकता है। इसलिये साधु वा गृहस्थसेवक जो कोई अग्निरूप अहङ्कार जलायके दीन-दासातनसे साधु-गुरुरूप पारखी-सन्तोंकी सेवामें और सत्सङ्गमें सदोदित वे लपटे रहेंगे; तब गुरुभक्ति सहित जीवन्मुक्त हो जावेंगे। जैसे जहर, अग्नि आदि पदार्थ या सर्प, बाघादि जीव, प्राणघातक

---

* दोहा:—"सत्य शील मन शुद्ध हो। गुरुभक्ति परकाश ॥
ज्ञान ताप अध्यास नशी। स्थिति स्वरूप सो खास ॥"

कालरूप हैं; ऐसा जानके उनसे सर्व मनुष्य बचायके चलते हैं। वैसे ही पाँचों तत्त्वोंका अल्प सुख वा आनन्दोंके अहङ्कारोंके अध्यासरूप सूक्ष्म बीज घातक वा कालरूप हैं; तिनका समूल नाश होजानेसे फिर नरजीव देह धरनेके नहीं। जैसे जलका 'मोती' या दूधमेंसे 'घृत' न्यारा हो जाता है; तैसे ही विदेहमुक्त जीवोंको देहरूप बन्धन नहीं रहनेसे वे स्वयं प्रकाशरूप अर्थात् निज ज्ञान प्रकाशमें निराधार सदोदित स्थिर रह जावेंगे। इसी सबब (हेतु) शुद्ध रहनीके लिये "गुरु-भक्ति" सत्त्वगुणकी शुद्धकला धारण करनेको कहा है। बिना गुरुभक्ति किये बोध पूर्ण हो नहीं सकता है, अतः पारखी श्रीसद्गुरुकी भक्ति ही मुक्ति देनेमें समर्थ है; ऐसा जानके सर्वाङ्गरूपसे देह रहे तक गुरु-भक्ति करते रहना चाहिये ॥

३. वैराग्यः— निराशरूप तमोगुणकी शुद्धकला है। आकाशरूप समान वायुका शुद्ध गुण केवल 'धीरजरूप' स्थिर बुद्धि रहनेसे वैराग्य सिद्ध होता है *। जब पारखी श्री-सद्गुरुका सत्य शोधक कोई साधु वा सेवक, ऐसा जान जावेगा कि, तत्त्वोंके कार्य सर्व सृष्टि ऊपरके पदार्थ बने हैं। सो नाशवान हैं। वैसे ही तत्त्वोंके कार्यरूप शरीरको धारण करनेवाले देहधारी सर्व जीव हैं। सो भी बहुरूपियावत् अनेक स्वाङ्ग धर-धरके चार

* दोहाः—"धीरज धरी निराश हो। सकलो चाह मिटाय ॥
दृढ़ वैराग्य शान्ति पद। जियत मुक्ति ठहराय ॥"

खानियोंमें प्रगट हुए हैं । उनके सर्वदेह भी नाशवान् हैं । परन्तु, सर्व चेतनजीवमात्र हमारी स्वजाति हैं, उनको काया, वाचा, मनसे बन सकै तहाँतक दुःख नहीं देने चाहिये । ऐसी पूर्ण पारख गुरुदृष्टिसे जानके पिण्ड-ब्रह्माण्डरूप जड तत्त्वोंका भावना-रूप अध्यास मिटाय, जब "मैं हंस जीव सत्य हूँ," ऐसी दृष्टि सदोदित बन जायगी, तब बड़ा धीरज धरके निराशवृत्तिसे महास्थिरतारूप दृढ़ वैराग्य सिद्ध होके नरजीव जड़ देह बन्धनसे मुक्त हो जावेंगे । इसी सबब (कारण) शुद्ध रहनीके लिये निराशरूप तमोगुणकी शुद्धकला "वैराग्य" ग्रहण किया है । दृढ़ वैराग्यके हुए बिना अध्यासके अन्त नहीं होता है । अतः स्वरूप स्थितिके लिये पूर्णतासे दृढ़ वैराग्यको ही सदा धारण किये रहना चाहिये ॥

ऐसे त्रिगुणोंकी क्रियारूप तीनों शुद्ध गुण—१ विवेक, २ गुरुभक्ति और ३ वैराग्य, केवल मनुष्यकी शुद्ध रहनीके लिये ग्रहण करनेको कहा है * ॥

॥*॥ हंस देहकी वा नरदेहकी दश इन्द्रियोंमें शुद्ध रहनी वर्णन ॥४॥*॥

१. नरदेहमें पृथ्वीतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ 'नाक' और 'गुदा' हैं । नाकसे गन्धका ग्रहण, और गुदासे गन्धका त्याग होता है । इसीसे पृथ्वी तत्त्वकी 'सत्यकी रहनी' ग्रहण करना और असत्य, नाशवान् जड़ासक्तिरूप रहनीका त्याग करना है ।

---

* दोहाः—"गुरुभक्ति वैराग्ययुत । जामैं होय विवेक ॥
गुरुकी दया परखे सकल । अस पारखि कोइ एक ॥"

मुख्य गन्धरूप पारखी सन्तोंका शुद्ध पारख बोध ग्रहण करना। पारख दृष्टिकी प्राप्तिके लिये चैतन्य पारखबोधदाता पारखी श्रीसद्गुरुकी सेवा, आपका सत्सङ्ग, आपका विचार, आपकी ही रहनी, आपके ही सत्यन्यायरूप ग्रन्थोंका पठन-पाठन, आपके ही गुण वर्णन इत्यादि तन, मन, धनसे आपकी ही सेवा बन्दगी-में मनुष्योंने सदोदित हाजिर रहना, ऐसा सत्यका ग्रहण करना है। और पाप-पुण्यरूप अन्य गुरुवा लोगोंने कल्पित ईश्वर प्राप्तिके और पञ्च विषयोंके जितने जड़ कर्म दृढ़ाये हैं। सो सर्व जन्म-मरणरूप वासना बीज होने वाले हैं। ऐसा पारखी श्रीसद्गुरुकी कृपासे जानके तिनकी आसक्तिरूप असत्यको मनुष्योंने त्याग करना है। ऐसे इन दो इन्द्रियोंको सुधार करना चाहिये ॥

२. नरदेहमें जलतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ 'लिङ्ग' और 'जीभ' हैं। जीभसे रसका ग्रहण, और लिङ्ग इन्द्रियसे रसका त्याग होता है। इसीमें:—जलतत्त्वका शुद्ध गुण 'विचार' ग्रहण करना और अविचार त्याग करना है। मुख्य रसरूप साधुगुरुमें प्रेम-प्रीति रखकर सत्यन्यायरूप विचार अर्थात् "मैं चेतन हंस त्रिकालमें सत्य हूँ" ऐसा जानना ग्रहण है। और मदिरा, मांसादि पशु-भोजन छोड़के, अङ्कुरादि शुद्ध अन्न, शुद्ध वस्त्रादि देहव्यवहारमात्र रखकर जीभ इन्द्रियके व्यवहारमात्र रसोंको राखके, अन्य षट् रसोंकी आसक्ति और लिङ्ग इन्द्रियकी स्त्री

सम्भोगकी विषय वासनारूप अविचारकी आसक्ति आदि अजिबात (सर्व) त्याग करना है। ऐसे इन दो इन्द्रियोंको सुधार करना चाहिये ॥

३. नरदेहमें तेजतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ 'नेत्र' और 'पाँव' हैं। नेत्रसे रूपोंका ग्रहण, और पाँवोंमें शक्ति रहनेसे चले गये बाद नेत्र किसी पदार्थको देख सकते हैं। इसीमें:—मुख्य अनेक रूपोंके अहङ्कारको शान्त करना है। अनादि कालके जगत्में किसी विलक्षण बुद्धिमान् बालब्रह्मचारी सत्यशोधक पारखी ज्ञान-योगी साधुने खानी-वाणीरूप विषयानन्द, ब्रह्मानन्दादिकोंके सूक्ष्म अहङ्काररूप अध्याससे ही नरजीव बारम्बार चार खानियोंमें अनेक देह धारण करके दुःख भोग रहे हैं। और भास, अध्यास, मानना, विषयादि सबोंका जाननेवाला "मैं हंसजीव वा नरजीव पारखी, स्वयं ज्ञानस्वरूप सबोंसे श्रेष्ठ हूँ", ऐसा जानके सर्व आनन्दोंके अध्यासरहित पारखदृष्टिरूप गुरुपद सिद्ध किये। सो आप ही सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब पारखी सत्यन्यायी सन्त जगत्में प्रसिद्ध हुए। ऐसे ही अनादि कालके जगत्में सद्गुरु श्रीकबीर साहेबके अनुयायी जो-जो पूर्ण पारखी सन्त होते ही चले आते हैं, सो सब सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके बोध पारख स्वरूपमें स्थितिवान् हुए हैं। क्योंकि, कबीर उसीको कहते हैं, जो कायामें वीर हैं; और साहेब कहिये सर्व ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ श्रीसद्गुरु हैं। अर्थात् जो नरजीव निज हंस स्वरूपपर स्थिर-

बुद्धियुक्त जीवन्मुक्त हुए हैं, और वर्तमानमें भी कोई विरले पारखी, सत्यन्यायी, निराश वर्तमानमें स्थित सन्त जगत्में प्रत्यक्ष हैं। अथवा कल्पित जगत्कर्ता ब्रह्म, आत्मा, ईश्वरादि या पाँचों विषयादि जड देहोंके भास, अध्यास सर्व तोड़कर, हंसपद शुद्ध जानीवदशा साक्षीरूप पारखदृष्टिसे जो नररूप हंसजीव स्थिर हुए हैं, सो सर्व आप ही सद्गुरु श्रीकबीर-साहेबके निर्णयसे पारख स्वरूप ही हैं। तात्पर्य सद्गुरु श्रीकबीर-साहेबके पारख यह 'गुरुपद' अचल स्थिति है। ऐसे गुरुपद वा पारख पदमें जो-जो सन्त स्थिर हुए और अब हैं, सो सब सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके गुरुपद पारखरूपमें ही स्थित कहे जाते हैं। ऐसे पारखी देहधारी सन्त सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब हुए तभीसे पारखी सन्त जीवोंको पारखबोध देते ही आ रहे हैं। और आपके ही दयासे अनेक भेषधारी निष्पक्ष साधु या दृढ़ भक्तिवान्, पक्षरहित शिष्यलोग पारख दृष्टि ग्रहण करके देहके सर्व जड़ भास, झाँई आदि मिटाय, पारखरूप निज चैतन्यस्वरूपमें स्थित होते हैं, सोई जीवन्मुक्त पुरुष हैं। इसलिये प्रथम ज्ञान सीढ़ीपर चढ़नेके लिये अज्ञानी या संसारी लोगोंको तिन पारखी सन्तोंके मठ, मन्दिर, कुटी आदि स्थानोंमें श्रेष्ठ मानना चाहिये। वहाँ ही पारखी सद्गुरुसे जिज्ञासु जनोंको पारखस्थिति वा जीवन्मुक्त स्थितिकी पारखदृष्टि जाननेमें आवेगी। सर्व मतमतान्तरोंका और अपने निज स्वरूपका सत्यभेद सत्सङ्ग द्वारा जाननेके लिये उनकी ही

काया, वाचा और मनसे या तन, मन और धनसे सेवारूप चैतन्यभक्ति ही करना उचित है । ऐसे पारखी सन्त ही चैतन्य देवता, ऐसे सन्त ही देहबन्धन छुड़ानेवाले 'बन्दीछोर' हैं । इसलिये आपकी ही पूजा, आरती, बन्दना वा बन्दगी, साष्टाङ्ग-दण्डवत्, आपका भण्डारा ये सब करना बहुत ही उचित है । ऐसे ही सन्तोंका चरणामृत, महाप्रसाद, प्रसाद, बतासा, गरी आदि जो कुछ परसाद मिले सो पाना, कोई उसीको पानप्रसाद वा पान परवाना भी कहते हैं । परन्तु, अपने यहाँ पर कोई प्रकारकी कल्पना नहीं है । बन्दीछोड़ आचार्य्य सद्गुरु या सन्तगुरुसे जो कुछ प्रसादरूपमें मिले, सो पावना । और आपकी ही मन्त्रोपदेशरूप दीक्षा-उपदेश लेना उचित है। ये सब चैतन्य इष्ट साधुगुरु सन्तोंकी कृपादृष्टि होनेका देहका शुद्ध व्यवहार और चैतन्य गुरु भक्तिका अङ्ग है । नहीं तो सत्यन्यायसे चरणामृत कहिये गुरुपारख पदपर स्थिति है; जहाँ सर्व तृष्णा नष्ट होकर पूर्ण सन्तोष प्राप्त होता है । महाप्रसाद कहिये श्रीसद्गुरुकी सत्यन्यायकी वाणी ग्रहण करके, पारखबोधमें स्थिति करना; जहाँ सर्व इच्छा, वासना, अहङ्कार आप ही नष्ट हो जाते हैं । और वीरा कहिये देहके जड़ विषयोंके आनन्दोंके अध्यासोंमें गाफिल नहीं होना सोई शूर-वीरता है । ऐसे पारखी सन्त सद्गुरु श्रीकबीर साहेब ही देहका 'कबीर' नाम धरे हुये चार सौ या पाँच सौ वर्षोंके पूर्वमें (अर्थात् वि० सं० १४५५ से

१५७५ तकमें) काशीमें पूर्ण पारखबोधवान् चैतन्य ज्ञान कलाधारी और अन्तमें दृढ़ पारखदृष्टियुक्त, सर्वसे निराश, जीवन्मुक्त, श्रेष्ठ महात्मा पुरुष हो गये हैं । शिकन्दर बादशाहने आपका गुरु शेखतकी काजीके कहनेपर आपकी बावन प्रकारके नाना तरहका कष्ट (दुःख) देकर कसनीली थी, ऐसा लोकोक्ति है । परन्तु, कभी आपको कोई अहङ्काररूप क्रोधकी लहर उठी ही नहीं। और आपकी देहको भी जो कुछ दुःख हुआ, उसमें आप व्याकुल हुए नहीं । महादयालु, शीतल, शान्त ही आप रहे । परन्तु, उस बादशाहका आप कुछ भी नुकसान नहीं किये, ऐसा इतिहासमें वर्णन हुआ है । ऐसी निरहङ्कार दृष्टि शीलस्वभाव पारख स्थिति-की दृढ़ताके लिये ग्रहण करना है । और कल्पित जगत् कर्ता ईश्वर, परब्रह्म, आत्मा, खुदा आदि सर्व जड-चैतन्य मिश्रित पदोंके और विषयानन्दोंके अध्यासरूप अहङ्कार अग्निरूप फिर देह धारण करानेमें मुख्य कारणरूप बीज है, ऐसा जानके तिनको त्याग करना है । ऐसे इन दो इन्द्रियोंको सुधार करना चाहिये ॥

४. नरदेहमें चञ्चल वायुतत्त्वकी दो इन्द्रियाँ 'त्वचा' और 'हाथ' हैं । त्वचासे स्पर्शका ग्रहण होता है, और हाथोंसे स्पर्शका निवारण होता है । इसीमें:—निज दया, अपने (स्व) स्वरूपका दृढ़ निश्चय होनेके लिये मुख्य पारखी सन्तोंका सत्सङ्ग ग्रहण है । और हाथ, लात, दाँत, लकड़ी, शस्त्रादिकों द्वारा देहसे किसी ज़ीवको बने तहाँ तक दुःख न देना चाहिये । शरीरके त्वचापर

छोटे-छोटे देहधारी जीव कभी-कभी बैठ जाते हैं। उन्होंके उड़ानेके लिये एक छोटासा कपड़ा अपने पास रखना चाहिये; जिससे तिनका भी जीवघात होनेका नहीं। अन्तमें सर्वदेहधारी जीव हमारे ही स्वजातिके हैं। ऐसा जानके, शरीरसे किसीको दुःख न होवे, सोई दयाकी चाल चलना यह ग्रहण है। और जीवघाती, निर्दयी, कुसङ्गतिके मनुष्योंसे अलग रहना, यही त्याग करना है। ऐसे इन दो इन्द्रियोंको सुधार करना चाहिये ॥

५. नरदेहमें आकाशतत्त्वरूप समान वायुकी दो इन्द्रियाँ 'कान', और 'मुख', हैं। कानसे शब्दोंका ग्रहण, और मुखसे शब्दोंका उच्चारणरूप त्याग होता है। इसीमें:—आकाशतत्त्वरूप समान वायुका धीरजरूप वैराग्य ग्रहण होनेको मुख्य यथार्थ गुरुनिर्णरूप, निष्पक्ष वाणीका विचार सुनना, सत्यन्यायके ही ग्रन्थ पढ़ना, वही वाक्य बोलना, निर्णयके ही भजन गाना, और व्यवहारमें मृदु, मीठे वचन बोलना, ऐसा ग्रहण है। और अन्याय, अनीति, कठोर, कर्कश, पक्षपातकी वाणी, ये सर्व शब्दोंका त्याग करना है। ऐसे इन दो इन्द्रियोंको सुधार करना चाहिये ॥

ऐसी दश इन्द्रियोंमें शुद्ध रहनी लेनेको कहा है। जब इसी प्रकारसे सर्व रहनी ग्रहण होगी, तब मुमुक्षु नरजीवोंकी श्रीसद्गुरुपारखी सन्तोंकी कृपासे पारखस्थिति वा जीवन्मुक्त स्थिति दृढ़ हो जावेगी। उसीके लिये सत्पुरुषार्थ करना चाहिये ॥

॥ ❀ ॥ हंसदेहमें वा नरदेहमें पञ्च तत्त्वोंकी २५ प्रकृतियाँ शुद्ध रहनीके लिये वर्णन ॥ ५ ॥ ❀ ॥

१. पृथ्वीतत्त्वका शुद्धगुण सत्यकी ५ प्रकृतिः—
१ निर्णय, २ निर्बिन्द, ३ प्रकाश, ४ स्थिर, और ५ क्षमा है ॥

२. जलतत्त्वका शुद्धगुण विचारकी ५ प्रकृतिः—
१ अस्ति-नास्तिपद निर्णय, २ यथार्थ साँच, ३ शुद्ध व्यवहार, ४ यथार्थ-परख टकसार और ५ बोध हेतु वेदादि वाणीका ग्रहण है ॥

३. तेजतत्त्वका शुद्धगुण शीलकी ५ प्रकृतिः—
१ क्षुधा निवारण, २ प्रिय वचन, ३ शान्तबुद्धि, ४ पारख प्रत्यक्ष और ५ सर्व सुख प्रगट है ॥

४. चञ्चल वायुतत्त्वका शुद्धगुण दयाकी ५ प्रकृतिः—
१ अद्रोही, २ सम, ३ मित्रजीव, ४ अभय और ५ अद्रुतनयन है ॥

५. आकाशतत्त्वरूप समान वायुका शुद्धगुण धीरजकी ५ प्रकृतिः—१ मिथ्या त्याग, २ सतमत ग्रहण, ३ निःसन्देह, ४ साधुसेवन, और ५ हन्तानिरसन है ॥ इसीमें:— ❀

❀ हंसदेहकी शुद्ध तत्त्वोंके परस्पर मिलापसे शुद्ध ५ तत्त्वोंके शुद्ध २५ प्रकृतियोंकी उत्पत्ति वर्णनः—(१) सत्यकी ५ प्रकृतिमें:—

१—सत्य और धीरज यह दोनों मिलके "निर्णय" होता है। २—सत्य और दया यह दोनों मिलनेसे "निर्बिन्द" होता है। ३—सत्य और शील इन दोनोंके मिलापसे "प्रकाश" होता है। ४—सत्य और विचार यह

दोनोंके मिलनेसे वृत्ति "स्थिर" होती है। और ५— बाहर-भीतरकी दोनों सत्य ही सत्य मिलनेसे "क्षमा" धारण किया जाता है। इसीमें 'क्षमा' ही विशेष भाग सत्यकी है, और चारों प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं॥

(२) विचारकी ५ प्रकृतिमें:— १—विचार और धीरज यह दोनों मिलके "अस्ति-नास्ति पद निर्णय" होता है। २—विचार और दया यह दोनों मिलके "यथार्थ साँच" होता है। ३—विचार और शील यह दोनों मिलके "शुद्ध-व्यवहार" होता है। ४—भीतर-बाहरकी दोनों विचार-ही-विचार मिलनेसे "यथार्थ परख टकसार" होता है। और ५—विचार तथा सत्य यह दोनों मिलके "बोध हेतु वेदादि वाणीका ग्रहण" होता है। इसीमें "यथार्थ परख टकसार" विचारकी विशेष भाग है, और चारों प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं॥

(३) शीलकी ५ प्रकृतिमें:— १—शील और धीरज यह दोनों मिलके "क्षुधा-निवारण" होता है। २—शील और दया यह दोनों मिलके "प्रिय वचन" होता है। ३—भीतर-बाहरकी दोनों शील-ही-शील मिलनेसे "शान्तबुद्धि" होती है। ४—शील और विचार यह दोनों मिलके "पारख प्रत्यक्ष" होता है। और ५—शील तथा सत्य यह दोनों मिलके "सब सुख प्रगट" होता है। इसीमें 'शान्त बुद्धि' शीलकी विशेष भाग है, और चारों प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं॥

(४) दयाकी ५ प्रकृतिमें:— १—दया और धीरज यह दोनों मिलके "अद्रोही" होता है। २—भीतर-बाहरकी दोनों दया-ही-दया 'निजदया-परदया' मिलके "सम" समता वा समदर्शिता होती है। ३—दया और शील यह दोनों मिलके "मित्रजीव" होता है। ४—दया और विचार यह दोनों मिलके "अभय" होता है। और ५—दया और सत्य यह दोनों मिलके "अद्रुतनयन" होता है। इसीमें 'सम' दयाकी विशेष भाग है, और चारों प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं॥

(५) धीरजकी ५ प्रकृतिमें:— १—भीतर-बाहरकी दोनों धीरज-ही-धीरज (अटल धैर्यकी धारणा) मिलके "मिथ्यात्याग" होता है। २—धीरज और दया यह दोनों मिलके "सत-मत ग्रहण" होता है। ३—धीरज और शील यह दोनों मिलके "निःसन्देह" होता है। ४—धीरज और विचार यह दोनों मिलके

१. निर्णयः—जड़, चैतन्यका यथार्थ न्यारा-न्यारा सत्य-निर्णय करना है ॥

२. निर्विन्दः—स्त्रीसम्भोगकी भोग वासनासे रहित रहना है ॥

३. प्रकाशः—पारखप्रकाश जड देहकी हन्तारहित पद है ॥

४. स्थिरः—खानी-वाणियोंकी सर्व चञ्चलता छूटकर गुरुपद पारखमें शान्त स्थिर रहना है ॥

५. क्षमाः—अपना अपराध (दोष) करनेवालेके ऊपर भी कष्ट या दण्ड देनेके भावका न होना है ॥

१. अस्ति नास्तिपद निर्णयः—जड़ पञ्च तत्त्वोंके पदार्थ, वैसे ही कल्पित जगत्कर्ता आत्मा, ईश्वरादि सर्व देह भास भी जड़, नास्ति या नाशवान हैं। और चैतन्य सर्व जीव अस्ति, अविनाशी हैं। ऐसा निर्णय करना है। परन्तु, जीव भी तीन प्रकारके स्वभाव वाले हैं। सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबरूप पारखी सन्त स्वयं प्रकाशी 'उत्तम' 'हंसजीव' हैं। नाना मतवाले शुद्ध चाल चलनेवाले त्यागी साधु और गृहस्थ भक्तिवान् सेवक और दूसरे वाममार्गी और संयोगी नाममात्र साधु तथा सर्व मनुष्य-

---

"साधु-सेवन" होता है। और ५—धीरज और सत्य यह दोनों मिलके "हन्ता-निरसन" होता है। इसीमें 'मिथ्या त्याग' धैर्यकी विशेष भाग है, और चारों प्रकृतियाँ समान भागसे मिली हैं ॥

इन पच्चीसों शुद्ध प्रकृतियोंको हृदयमें धारण करनेवाले जीवन्मुक्तिके अधिकारी होते हैं। अतः मुमुक्षुओंने इसे सर्वाङ्ग ग्रहण करके धारण कर लेना चाहिये ॥

मात्र ज्ञानखानीके नर जीव हैं। परन्तु, खानी-वाणीमें विषयान्ध, सो 'मध्यम' जीव हैं। और आच्छादन, भोजन, मैथुन, भय, निद्रा और मोह इतने ही पशुधर्म जाननेका जहाँ ज्ञान है, सो पशु, अण्डज और उष्मज खानियोंके 'कनिष्ठ' जीव हैं। ऐसे चैतन्यमात्र सर्व जीव अस्ति वा अविनाशी हैं, ऐसा विवेक करना है ॥

२. यथार्थ साँचः—इसीमें ब्रह्म कहिये शून्य आनन्द, आत्मा कहिके अहङ्कार और ईश्वर कहिये अहङ्कारका कर्तव्य, सोई पुरुषार्थ, ये तीनों भास मिटेंगे, तब नर जीव पारखस्थिति साँच भूमिकापर ठहरेंगे, सोई यथार्थ साँच है ॥

३. शुद्ध व्यवहारः—काया, वाचा, मनके सर्व कार्य या व्यवहार भीतर-बाहरसे शुद्धतासे करना है ॥

४. यथार्थ परखटकसारः—पारखी सन्तोंका सत्सङ्ग करके यथार्थ सत्य चैतन्यपद ग्रहण करना है ॥

५. बोधहेतु वेदादि वाणी ग्रहणः—जड़-चैतन्य मिश्रित व्यापकरूप स्वरूपको वेद और ब्रह्मवेत्ता पुरुष सिद्ध करते हैं, सो सर्व वाणीका मानना छुड़ानेके लिये तिनका सार विचार ग्रहण है। अर्थात् सारग्राहीरूपसे सबोंके ग्रन्थोंका अध्ययन करना, उसका निर्णय करना ग्रहण है ॥

१. क्षुधानिवारणः—सर्व इच्छारहित निराशपद है ॥

२. प्रिय वचनः—हितकर या प्रिय, जीवोंके कल्याणकारी

गुरुमुख निर्णयके वचन मीठे शब्दोंमें कहना है ॥

३. शान्त बुद्धिः—सम्पूर्ण कल्पनाएँ छूटकर गुरु पारख-पदमें बुद्धि स्थिर या शान्त हो जाना है ॥

४. पारख प्रत्यक्षः—पारखी श्रीसद्गुरुकी दयासे भास, अध्यास, अनुमान, कल्पनाएँ सर्व आसक्ति मिटकर स्व-स्वरूप पारखमें प्रत्यक्ष स्थिति या जीवन्मुक्त हो जाना है ॥

५. सर्वसुख प्रगटः—आनन्द, अहङ्कारादि मायाका त्याग होनेसे सत्य चैतन्य पदमें पारख प्रकाशरूपसे स्थिरता, वही सर्व सुखोंमें जीवन्मुक्तिका श्रेष्ठ सुख अर्थात् सर्व दुःखोंसे रहितपद है ॥

१. अद्रोहीः—सर्व जीवोंसे क्रोधरहित रहना है ॥

२. समः—सबोंसे जीवभावमें स्वजाति जानके समदर्शी भावसे वर्तना है ॥

३. मित्र जीवः—सर्व देहधारी चेतन जीवमात्र स्वजाति-अपने समान सबको सुख-दुःखादि जानके मित्रताकी दृष्टिसे सद्भावका होना है ॥

४. अभयः—गुरुपारख बोध बलसे कल्पित ईश्वर, यमादिके भयसे रहित है । तथा अन्य जीवोंको भी निर्भय या अभय करना है ॥

कहा है किः—

❀ दोहाः—"मीठा सबसे बोलिये । सुख उपजे चहुँ ओर ॥
वशीकरन यह मन्त्र है । तजिये वचन कठोर ॥" तीसायन्त्र ॥

५. अद्भुतनयनः— जड़ासक्तता त्यागके चैतन्य पदपर दृष्टि रखना। श्रीसद्गुरुकी कृपासे चैतन्यजीव सत्य है। ऐसा जान लिया, तब काया, वाचा, मनसे निर्वैर व्यवहार सर्व जीवोंसे होने लगा, सो मैत्री दृष्टि कहलाता है॥

१. मिथ्या त्यागः— ब्रह्म, ईश्वरादि सर्व मिथ्या कल्पना पारख बोधसे परित्याग करके न्यारा होना है॥

२. सतमत ग्रहणः— सद्गुरुका सत्यन्याय ग्रहण करना है। अर्थात् पारख रहनी, पारखवाणी और पारखपदका ग्रहण होना है॥

३. निःसन्देहः— जन्म-मरणादि भयके सन्देहसे निडर या निःसंशय रहना है और समस्त सन्देहसे रहित होके निःसन्देह होना है॥

४. साधुसेवनः—पारखी सत्यन्यायी, साधु-सन्त-गुरुकी पारखबोध प्राप्तिके लिये प्रेम भक्तिसे तन, मन, धनादि लगाय, सेवा या चाकरी करना है॥

५. हन्ता निरसनः— पारखी श्रीसद्गुरुकी सत्य चैतन्य बोध दृढ़ होकर विश्व, तैजसादि खानी-वाणीकी सर्व अहङ्कारका परित्याग करना है॥

ऐसे नर-देहमें १ सत्य, २ विचार, ३ शील, ४ दया, ५ धीरज,— ये पञ्च तत्त्वरूप पञ्च शुद्धगुणोंकी पाँच-पाँच प्रकृति मिलायके २५ प्रकृतियाँ हुई हैं। सो एक-एक शुद्ध गुणकी दृढ़ता होनेके लिये पाँच-पाँच भाग किये हैं। सो सब शुद्ध रहनीका ग्रहण करनेको कहा है॥

॥ ॐ ॥ जगत्में उपदेश देनेका व्यवहार आदि वर्णन ॥ ६ ॥ ॐ ॥

जिसको सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके मुख्य बीजक-ग्रन्थकी टीकामें पक्के पञ्चतत्त्व कहा है। सो पूर्वोक्त सर्व शुद्ध गुण रहनीके लिये लेना है। ये सर्व शुद्ध गुण देहबन्धनसे छूटके अपने (निज)स्वरूप पारखबोधमें दृढ़ स्थिति रखनेवाले हैं। अन्तमें देहके साथ ये सर्व ही शुद्धगुण छूट जावेंगे। और एक हंसजीव ही शुद्ध ज्ञान प्रकाशरूप पारखदृष्टिमें विदेहमुक्तस्थितिमें बने रहेंगे। केवल ग्रन्थमात्र ही पढ़नेसे पूर्ण पारखबोध होनेका नहीं *। पारखी-सन्तोंके सत्सङ्गमें कोई जिज्ञासु मनुष्य लगे रहेंगे, तब सब सिद्धान्तोंका मर्म तथा कसर–खोट या सत्यासत्यको यथार्थ जानके पारखदृष्टिकी रहनी तिनको प्राप्त होगी। इसलिये ऐसे सन्तोंका सत्सङ्ग करनेमें बड़ा प्रेम मनुष्योंने रखना चाहिये। देखिये! काशीमें सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब पूर्ण सामर्थ्यवान् होगये। परन्तु, जान-बूझकर अनाड़ी बनके नरजीवोंको सत्यबोध आप किये हैं। क्योंकि, क्रोध करके दण्ड देके किसीको बोध आप करते, तो जीवोंको दुःख होता और दयाधर्म भी छूट जाता।

* बीजकमें कहा है:— "पढ़े गुने क्या कीजिये? मन बौरा हो! अन्त बिलैया खाय! समुझि मन बौरा हो! ॥" चाचर २ ॥ लिखे हुए वा छपे हुए ग्रन्थोंको स्वयं मनमुखसे पढ़के सब सन्देहोंकी निवृत्ति होकर पूर्ण पारखबोध नहीं हो सकती है। क्योंकि, ग्रन्थोंमें जगह-जगह सन्धियाँ ऐसी रखी हुई होती हैं, कि, बिना सत्सङ्गमें निर्णय किये वह समझनेमें आ ही नहीं सकती है। अतः अपरोक्ष पारखबोधके लिये गुरुमुखसे उपदेश श्रवण करके ही मनन करना चाहिये ॥

परन्तु, आपका स्वयं दयास्वभाव ही है, सो कैसा छोड़ देवेंगे ? ऐसा ही दयास्वभाव धारण करके आचार्य्य या सन्त-महन्तोंने नरजीवोंको तिनके ही सिद्धान्तमें मिलके बोध करना चाहिये। जिससे अपना सिद्धान्त जड़-चैतन्य मिश्रित पद है, ऐसी कसर जानके वे छोड़ देवेंगे। तब सत्यन्याय करके जड़-चैतन्यकी निर्णयरूप पारखस्थिति वे ग्रहण करेंगे। ऐसा जगत्में उपदेश करना, सो श्रीसद्गुरुका रहस्य है। कोई जिज्ञासु मनुष्य श्रद्धावान् मिल जाय, तो उसका मदिरा-मांसादि राक्षसी आहार और सर्व जीवघातक कर्म उसके छुड़ाय देना। फिर स्त्रीको एक वा दो लड़के उत्पन्न हुये बाद वह उसे छोड़नेको कबूल करै। अथवा जगत्की सर्व स्त्रियाँ मातावत् जानके अपने (स्व) स्त्रीकी भोगासक्ति धीरे-धीरे छोड़नेको कबूल करै। तो गुरुमर्यादा-प्रमाण मठके मठाधिकारी आचार्य्य वा महन्तोंने उसीको मन्त्रोपदेशरूप दीक्षा देके कण्ठी बाँधना, और सफेद ऊर्ध्व तिलक लगाना। उसी समय वह शिष्यने ऐसा जानना कि, प्रत्यक्ष महाश्रेष्ठ सद्गुणरूप ऐश्वर्य सम्पन्न मुक्तिदाता श्रीसद्गुरु पारखी सन्त मुझे मिल गये। धन्य ! मेरा भाग्य है ! ऐसा निश्चय करके जैसे जड़ देवताओंके बड़े उत्साहसे उत्सव होते हैं, वैसा ही उपदेश दाता श्रीसद्गुरुका बड़ा उत्साहसे उत्सव, भजन, पूजन, आरती उतार करके बारम्बार वन्दना वा "साहेब बन्दगी ३" करना। और अपने सद्गुरुसहित सर्व साधुओंको पूजा भेंट चढ़ाय, भण्डारा भी

शिष्यने सर्व साधुओंका करना चाहिये । विवाह करके स्त्रीविषयका अल्प सुख नाशवान है । और श्रीसद्गुरुका उपदेश सुख धीरे-धीरे देहदुःख ही मिटानेवाला है। आज उपदेश लेनेसे मेरा ज्ञानमार्ग-में दूसरा ही जन्म हुआ, ऐसा शिष्यने जानना । एक वख्त गुरुभक्ति शुद्ध रहनीका रास्ता चलने लगा, और स्त्रीसम्भोगकी आसक्ति छूटकर सदोदित स्वरूपज्ञानमें पारख दृष्टिकी दृढ़ बुद्धि नहीं हुई, तो फिर नरदेह धारण करते-करते किसी नरदेहमें मैं जरूर जीवन्मुक्त होऊँगा । ऐसा जानकर बड़े प्रेमसे गुरुभक्ति, त्यागी सन्तोंकी सेवा और उनकी सत्सङ्ग शिष्यको करना ही चाहिये । देखिये ! बड़े-बड़े सिद्ध कल्पित कलाधारी जगत्में हुये हैं । परन्तु, जड़-चैतन्य मिश्रित ब्रह्मपद ठहराय, आवागमनका दुःख वे सब भोग रहे हैं । इसलिये पारखी श्रीसद्गुरुका उपदेशरूप लगन सृष्टिके सर्व उत्साहोंके ऊपर उत्साह है; ऐसा शिष्यने जानना चाहिये । सफेद ऊर्ध्व तिलक लगानेका हेतु "अब मैं अन्यायी और पक्षपातकी वाणी छोड़के निष्पक्ष न्यायी बनूँगा"; ऐसा निश्चय करके जाननेका चिह्न है । कण्ठी पहिरनेका हेतु "अब सर्व जीवोंका वैरभाव छोड़के बने तहाँ तक जीवदया धारण करूँगा," ऐसा कण्ठी धारण करनेका चिह्न है । वैसे ही लङ्गोटा, अचला लेके साधु-गुरुका भेष-बाना लेनेका हेतु "अब हम स्त्रीसम्भोगकी काम-वासना छोड़के त्यागी विरक्त बनें", ऐसा निश्चयसे प्रतिज्ञा करनेका चिह्न है । और सफेद ऊर्ध्व

तिलक, सफेद कपड़ेका बाना, रखनेका हेतु "जैसी बाहर उज्ज्वल रहनी है; ऐसी ही भीतर शुद्ध पारखरूप ज्ञानप्रकाशकी दृष्टि सदोदित एकरस बनानेका चिह्न है ।" ऐसा जानना चाहिये ॥

॥※॥पारख सिद्धान्तकी विशेषता और अन्योंकी गौणता वर्णन ॥७॥※॥

सर्व सन्त-महात्माओंके मठपर गुरु-साधुओंकी सेवा, बीजक, पञ्च-ग्रन्थी आदि सत्यन्यायी ग्रन्थोंका पठन-पाठन, सन्ध्या पाठ, सन्तों-के उत्साह उत्सव, भण्डारे आदि चैतन्य साधु-गुरुकी उपासनायुक्त भक्ति और नित्यप्रति सत्सङ्ग-विचार तथा सब शुद्ध-ही-शुद्ध व्यवहार चित्त शुद्धिके लिये अवश्य होते रहने ही चाहिये । पूर्वोक्त पूर्ण पारख-बोधयुक्त मनुष्यकी सर्व शुद्ध गुणोंकी रहनी ग्रहण हुई, तो वे पारखी-सन्त जाति-कुलके सर्व सम्बन्धोंसे छूट जाते हैं । सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके वर्तमान व्यवहारोंके मतमें अपने-अपने आचार्योंके नामोंसे २० × २५ पन्थ प्रचलित हुये हैं । तिनमें कोई संयोगी गृहस्थ भी साधु कहाते हैं । और कोई त्यागी सन्त रहके भी क़बर वा पादुका, निशान, गादी, फोटो, जड़मूर्ति आदि जड़-उपासना चलाय, मठोंके मायाके ऐश्वर्यमें वे भूले पड़े हैं । और अद्वैत, द्वैत, और विशिष्टाद्वैत, ऐसे वेदके "तत्त्वमसि" सिद्धान्तके आधार पकड़के ही उनके सर्व पन्थ चल रहे हैं । इसलिये उन भ्रमिक लोगोंके पक्षपातको छोड़कर सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके शुद्ध हंसरूप चैतन्यपदपर पारख दृष्टि रखना, अर्थात् निराश निर्बन्ध, शुद्ध चैतन्यपदपर स्थिति रखना चाहिये । परन्तु, वैसी स्थिति

पक्षपाती लोगोंमें किसीकी होती नहीं। 'तत्त्वमसि' वेदके महावाक्यका अर्थ ऐसा है कि "तत्" कहिये 'ब्रह्म', "त्वं" कहिये 'जीव' और "असि" कहिये 'है' अर्थात् जगत् तीनों कालमें नहीं है, रज्जु-सर्पवत् भासमात्र मिथ्या है, और अधिष्ठान ब्रह्म सत्य है। ऐसे अद्वैत मतवादी वेदान्ती सनातनधर्मी मानते हैं। द्वैतवादी 'तत्-ईश्वर', 'त्वं-जीव' और 'असि-है' अर्थात् उपास्य ईश्वर और उपासक भक्तजीव, ऐसे दो पदार्थ अनादि मानते हैं। ये दोनों मतोंमें शुद्ध ब्रह्म और ईश्वर, ये नरजीवोंकी कल्पनामात्र सिद्ध होनेसे जड़-चैतन्यकी वासनारूप ग्रन्थी मनुष्योंकी छूटती ही नहीं। विशिष्टाद्वैत-मतवादी 'तत्-ईश्वर जगत्कर्ता', 'त्वं-अनन्त जगत् जीव' और 'असि-अति वेगवान् तलवारवत् त्रिगुणरूप वा पञ्च तत्त्वरूप 'प्रकृति', ये तीनों पदार्थ अनादि माननेवाले रामानुजी, आर्यसमाजी, वाम-मार्गी आदि हैं। इस मतमें अल्पज्ञ नरजीव सदैव मुक्त नहीं होते हैं। ऐसा मानके भ्रमसे कल्पित ईश्वरको चराचर व्यापक मानते हैं, और जड़ासक्त अज्ञानी बने हैं। ऐसे तीनों मतवाले सर्व नरजीव और उनको ही मानने वाले कितनेक भ्रमिक नाममात्रके कबीरपन्थी भेषधारी साधु हैं। हम भ्रममें पड़के जन्म-मरणके ही दुःख बारम्बार भोगेंगे, ऐसी पारखदृष्टि उनको होती नहीं। परन्तु, अनादि कालके जगत्में भूत-कालमें स्वयं सत्य परीक्षक महान अनुभवी सर्वोपरि ज्ञानी पारखी सन्त सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब हुए। आपने ही अकेले सर्व प्रथम

यथार्थ जड़, चैतन्यका निर्णय करके "शुद्धचेतन मैं हंसरूप नरजीव सर्व सिद्धान्तोंको सिद्ध करनेवाला सत्य हूँ", ऐसी स्वरूपज्ञानकी दृढ़ निश्चय होनेकी एकरस जीवन्मुक्तिकी पारखदृष्टि प्रकाश किये, वही पारखरूप सत्य निर्णय गुरुपद आप निकाले हैं। और आजतक आपके अनुयायी पारखी सन्तोंके ही सत्सङ्गद्वारा पारखदृष्टिरूप गुरुपदको धारण कर, अनेक नरजीव शुद्ध हंस पारखस्वरूप स्वयंप्रकाश, एकरस स्थिति धारण करके ऐसे सर्व पारखी जन जड़ाध्यासरहित जीवन्मुक्त होते ही चले आरहे हैं यहाँपर किसीने पक्ष नहीं लेना। परन्तु, निष्पक्ष सत्यन्याय करके देखना चाहिये। सद्गुरु श्रीकबीरसाहेबके सच्चे अनुयायी पारखी सन्तोंके परम्परा तभीसे अटूट चली ही आरही है। इसलिये सब काल-जालोंको परखाकर जिज्ञासु मनुष्योंको पारखका बोध पारखीसन्त देते चले आरहे हैं, ऐसा जानिये॥

बारम्बार धन्यता सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब तथा पारखी सन्तोंकी है। आप कितने बड़े भारी उपकार जगत्के जड़ाध्यासी पामर नरजीवोंपर किये हैं। मैं अधम, अपराधी आपका दास आपके गुणानुवाद कहाँ तक वर्णन करूँ? सर्वोपरि आपकी पारख दृष्टिरूप ज्ञान है। अब भूतकालमें प्रसिद्ध हुये, हे पारखी सन्त सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब! और आपके सच्चे अनुयायी अनेक पारखी विवेकी सन्त हो! यह आपका दीन, अधम, अपराधीदास "काशीदास" मैं आपको बारम्बार 'साहेब-

बन्दगी ३" !! वा साष्टाङ्ग दण्डवत् करता हूँ !! मेरे सर्व अपराध आप क्षमा कीजिये ! और मायारूप पिण्ड-ब्रह्माण्ड कलाओंके जालसे, हे साहेब ! आप मुझको जल्दी निकाल दीजिये ! ऐसी मैं आपको दीनतासे प्रार्थना करता हूँ !!! यहाँपर ग्रन्थका सम्पूर्ण प्रकरण भी समाप्त कर देता हूँ ! ॥

॥ ❀ ॥ अन्त श्रीसद्गुरु स्तुति वर्णन ॥ ८ ॥ ❀ ॥

दोहाः—साहेब कबीर आदि गुरु ! दीन जीवन प्रतिपाल ॥
ब्रह्म-धोख जड़ भास सब । परखावत ततकाल ॥ १ ॥

॥ ❀ ॥ छन्द—स्तुति ॥ ❀ ॥

पारख प्रकाश कबीर साहेब ! अभय अशङ्क यम त्रास नहीं ॥
माया मोह भ्रम रहित पद है । शरण जाय सो नर पावहीं ॥ २ ॥
धन्य ! वाणी निर्पक्ष वक्ता । कसर खोट सब निकारिके ॥
पारखदृष्टि दाता दुर्लभ । गहिये चरण दृढ़ जायके ॥ ३ ॥
को वर्णे तव महिमा सद्गुरु ! बड़-बड़ पावै न थाह हो ! ॥
मान महातम ठानिके मत । सब बूड़े भवजलधार हो ! ॥ ४ ॥
भास, अध्यास, अनुमान, कल्पना । को मेटे आप बिन दीनता ॥
गम्भीर स्थिर चैतन्य पदका । बोध आपका ही सत्यमता ॥ ५ ॥

॥ ❀ ॥ सोरठा ॥ ❀ ॥

साहेब ! कबीर कृपाल ! बन्दौं गुरुपद कमल प्रभु ! ॥
मेटत सब भ्रम जाल । देखि व्याकुल नर ! दुःखित अति ॥ ६ ॥
रामसुख साहेब गुरु ! बन्दौं चरण बारम्बार तव ॥
पारख स्वरूप श्रीसद्गुरु ! वर्णि न सकौं 'काशीदास' गुण ॥ ७ ॥

॥ ❀ ॥ सत्य रहनीका शब्द वर्णन ॥ ९ ॥ ❀ ॥

गुरुपारखदृष्टि दृढ़ धार! जियरा! गुरुपारखदृष्टि दृढ़ धार॥
याहि हेतु साधु-गुरु सेवन। करिये सहित विचार!॥ टेक॥
चारि खानिनका निर्णय कर्ता। मनुष्य, पशूते न्यार॥
नीर, चीर जो जड़ और चेतन। है अलगावनहार॥ १॥
सत्य विचार दया धरि धीरज। रहियो सदा हुशियार॥
पारख गुरुको दृढ़ बल करिये। देहाभिमान सब टार॥ २॥
झाँई सन्धि औ काल कला सब। गुरु कृपा खोय डार॥
भास, अध्यास, अनुमान, कल्पना। सबहीं पाप निकार॥ ३॥
सत्सङ्गतमें प्रीति लगे जब। जड़ धोखा ह्वै निरुवार॥
शुद्ध पारखदृष्टि ह्वै जैहैं। जपिये! परख जप सार॥ ४॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोहादि। आसक्ति सब मार॥
आश धनादिक वाणी-खानिकी। बहाय दीजिये छार॥ ५॥
विज्ञान भक्ति कर्म फाँस सब। काटिये परख विचार॥
ब्रह्म-जगत् आवागमन कल्पना। सबहीं व्याधि बिडार॥ ६॥
कटुक वचन जो हृदय विदारक। दीजिये! छोड़ि आचार॥
मधुर शब्द जो गर्भ रहित है। न्याय नीति उच्चार॥ ७॥
निराशवृत्ति जगमें रहियो!। हो रहित मान हङ्कार॥
अन्न-वस्त्रादिक प्रारब्धाधिन। चलै देह व्यवहार॥ ८॥
जड़ पदार्थका अभाव राखियो। दृढ़ वैराग्य करार॥
अष्ट मद अरु इच्छा-वासना। समूल भास सङ्घार॥ ९॥

सन्तोष क्षमा शान्ति धरिये गुण । विषय तृष्णा बदकार ॥
प्रेम प्रतीति गुरुभक्ति करिये ! रहिये परखटकसार ॥१०॥
पिण्ड-ब्रह्माण्डका कर्मबीज सब । भूँजिये विवेक द्वार ॥
पञ्च कोश और माया-मोहका । गाँस-फाँस निरुवार ॥११॥
स्वच्छन्द पारख दिव्यदृष्टि हुई । छूटे सब भ्रमजार ॥
दीन याचक 'काशीदास' मँगे । गुरुबल पूर्ण अधार ॥ जियरा० १२॥

दोहाः—तत्त्वयुक्त सद्ग्रन्थ यह । आदि-अन्त समाप्त ॥
विचार दृष्टिसे देखिये ! पारख बोध हो प्राप्त ॥ १ ॥
पारखते भ्रम सब नशै । स्वयं स्वरूप प्रकाश ॥
रामस्वरूप अध्यास मिटि । जीवन्मुक्त निवास ॥ २ ॥
संशय तर्कहिं त्यागिके । सज्जन लै हैं सार ॥
"रामस्वरूप" ये दास पर । दया दृष्टि गुरु धार ॥ ३ ॥

॥ ❀ ॥ इति श्रीतत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थे—
एकादश प्रकरणम्, समाप्तम्—शुभम् ॥ ११ ॥ ❀ ॥

॥ ❀ ॥ श्रीसद्गुरुकी दयासे तत्त्वयुक्त निजबोध विवेक ग्रन्थः
यहाँ पर सम्पूर्ण हो गया । ग्रन्थः समाप्तः ॥ ❀ ॥

पुस्तक प्राप्ति स्थानम् (पता):—

रामस्वरूपदासजी ।

आचार्य कबीरपन्थ, बुरहानपुर,

गद्दी स्थान—श्रीकबीर निर्णय मन्दिर, मुकाम—"नागझिरी-मोहल्ला,
डाकघर—बुरहानपुर । जिला—निमाड़ (खण्डवा), [मध्यप्रदेश] ।